ओशो के
श्रीचरणों में समर्पित

जीवन ऊर्जा के रहस्य

—स्वामी शैलेन्द्र सरस्वती

की प्रस्तुति

कुमाशपुर–दीपालपुर रोड

जिला: सोनीपत, हरियाणा 131021

Rajneeshfragrance

+91 7988229565
+91 7988969660
+91 7015800931

भूमिका

दृश्यमान भौतिक जगत पदार्थ के रूप में दिखाई देता है। पहले वैज्ञानिक मानते थे कि पदार्थ से ही सृष्टि का निर्माण हुआ है। फिर उन्होंने पदार्थ को तोड़ा तो सूक्ष्म अणु का पता चला। फिर अणु का भी खंडन किया तो उसमें से इलेक्ट्रॉन का पता चला और वैज्ञानिक आश्चर्यचकित हैं यह देखकर कि 'सब-एटॉमिक पार्टिकल्स' का व्यवहार निश्चित नहीं है– कभी कण के रूप में तो कभी तरंग के रूप में! और यही तो चैतन्यता की पहचान है। जड़ तत्वों का व्यवहार निश्चित होता है। चेतन तल का अनिश्चित है। चेतन तत्व स्वयं निर्णायक होता है। यह चेतना ही ऊर्जा है। पदार्थ धीरे-धीरे खो गया है। बस ऊर्जा ही रह गई।

भारतीय मनीषी हजारों वर्षों से कहते आए हैं कि यह जगत ऊर्जा का ही खेल है और ऊर्जा का स्रोत है शबद अर्थात् ओंकार। विराट जगत सूक्ष्मतम ओंकार से निर्मित है। हमारे मनीषियों ने उस ऊर्जा पर चिन्तन किया और उसी पर असंख्य प्रयोग किए हैं। यह बात अध्यात्म मार्ग के सभी साधकों के लिए अनुभवगम्य है कि परमात्मा की ऊर्जा सदा बरसती रहती है। मनुष्य जितना उसका अहसास करेगा, उतना ही परमात्मा के निकट पहुंचेगा।

स्थूल शरीर से जो ऊर्जा प्रकट होती है, वह स्थूल शरीर के भीतर जो सूक्ष्म शरीर है उसमें स्थित है। उसे ऊर्जा शरीर या 'एनर्जी बॉडी' कहते हैं। योग ने इस सूक्ष्म शरीर में स्थित सात चक्रों के माध्यम से उर्ध्वगमन की बात की है। सबसे नीचे मूलाधार चक्र से ऊर्जा को उठाते हुए भीतर के सूक्ष्म चक्रों क्रमशः स्वाधिष्ठान, मणीपुर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा से गुजरकर अन्ततः सहस्रार में प्रवेश कराया जाता है। इसी को कुण्डलिनी जागरण कहते हैं। ऊर्जा का सहस्रार में पहुंचना ही आध्यात्मिक मार्ग की मंजिल है। यही प्रभु मिलन है और यहीं पहुंचकर साधक उद्घोष कर उठता है 'अहम् ब्रह्मास्मि।'

इस ऊर्जा को जगाने के लिए साधक, प्राणायाम या योग का सहारा लेता है। फिर ध्यान और समाधि में प्रवेश कर ब्रह्म से एकाकार करता है। पहले साधक प्रयास करे। परमात्मा प्रदत्त अपनी सारी ऊर्जा उसमें लगा दे। फिर शांत होकर प्रतीक्षा करे और फिर उसे अपने भीतर और बाहर चारों तरफ परमात्मा की ऊर्जा बरसती हुई महसूस होगी। अहसास होगा कि परमात्मा ऊर्जा है। यही ऊर्जा है ओंकार, इसी से सृष्टि उत्पन्न होकर इसी में समा जाती है। इसलिए कहते हैं कि यह स्थूल सृष्टि सूक्ष्म परमात्मा का ही विस्तार है।

प्रस्तुत पुस्तक प्रश्नोत्तर शैली में है। साधकों ने अपने अंतर्तम में उठने वाले संदेहों को सहज रूप में व्यक्त किया है। शैलेन्द्र जी ने अपने अनुभवों को सहज स्फूर्त शब्दों में पिरोकर उनके संदेहों का शमन किया है। कहीं कोई बनावट या दिखावट नहीं। ओशो के अनुज, शैलेन्द्र जी, परम सद्‌गुरु ओशो की ही शैली में बोलते हैं।

वे गहरे से गहरे प्रश्न का उत्तर छोटी-छोटी बोध कथाओं और मुल्ला नसरुद्दीन के चुटकुलों के माध्यम से देते हैं जो श्रोता या पाठक के गले से सहज ही उतर जाते हैं। वे कहते हैं- 'तथाकथित नास्तिक या वैज्ञानिक बुद्धि वाला व्यक्ति ज्यादा आसानी से ध्यान में डूब सकता है, क्योंकि ध्यान एक विज्ञान है–चेतना का विज्ञान; साइंस ऑफ दि सोल। जैसे देह-विज्ञान या मनोविज्ञान है, ऐसे ही आत्म-विज्ञान भी है। 'मैं कौन हूं' इसकी पहचान करना ही आत्म-विज्ञान है। प्रार्थना भीख नहीं, बल्कि परमात्मा के प्रति अहोभाव है'।

परमात्मा ने जो हमें दिया है उसके प्रति धन्यवाद से भरना ही प्रार्थना है। दिव्य ऊर्जा से ओतप्रोत व्यक्ति ही अहोभाव में डूब सकता है। यह किताब उसी भागवत् शक्ति के रहस्यों को उजागर कर, उसे जगाने की विधि सिखा सकेगी, इसी उम्मीद के संग-

मस्तो बाबा

अनुक्रम

एक

दिव्य ऊर्जा जागरण

प्रश्न 1 : अध्यात्म के जगत में जब 'ऊर्जा' शब्द का प्रयोग किया जाता है तो उसका ठीक-ठीक अभिप्राय क्या होता है?

उत्तर : एक तो 'ऊर्जा' शब्द विज्ञान में प्रयोग किया जाता है, भौतिक ऊर्जा के रूप में। दूसरा, अध्यात्म में ऊर्जा शब्द का उपयोग चेतना के संघनित रूप के लिए किया जाता है। भीतर कॉन्शसनेस जब कन्डेंस्ड हो जाती है तो वह जीवन की ऊर्जा बन जाती है- लाइफ एनर्जी, वाइटल फोर्स। यह जीवन ऊर्जा अलग-अलग ढंगों से व्यक्त होती है। हमारे भीतर सात चक्र हैं, इन सात चक्रों के माध्यम से वह ऊर्जा भी सात रंगों में व्यक्त होती है। भीतर भी एक इन्द्रधनुष है। जीवन की ऊर्जा का श्वेत रंग है, किंतु सात उसके प्रगटीकरण के ढंग हैं। मूलाधार चक्र से जब वह प्रगट होती है तो हम उसे कह सकते हैं कर्म शक्ति, शरीर की मांसपेशियों की ताकत। स्वाधिष्ठान चक्र से जब जीवन शक्ति प्रगट होती है तो काम शक्ति के रूप में। मणिपुर चक्र से जब जीवन ऊर्जा अभिव्यक्त होती है तो वह प्राण शक्ति बन जाती है। चौथे चक्र अनाहत से वही ऊर्जा भाव शक्ति के रूप में, प्रेम ऊर्जा के रूप में अभिव्यक्त होती है। पांचवें चक्र विशुद्ध से वही विचार की शक्ति, साइकिक पावर बन जाती है। छठवें चक्र आज्ञा से विल पावर, संकल्प शक्ति का रूप लेती है। और सातवें चक्र सहस्रार से वह विवेक की शक्ति यानी साक्षी बन जाती है।

जीवन ऊर्जा एक ही है उसके प्रगट होने के ढंग अलग-अलग हो जाते हैं। पुराने तथाकथित धर्मों के अनुसार ऊर्जा के निम्नतर रूपों को निंदित किया गया था। ओशो की देशना के अनुसार मैं चाहूंगा कि हमारे मन में इन सातों रूपों के प्रति कोई

हाइरैरकी की भावना न हो। इसमें कोई नीचे नहीं है, कोई ऊपर नहीं है। इन सात ढंगों से ऊर्जा अभिव्यक्त होती है। न कुछ निंदनीय है, न ही कुछ प्रशंसनीय है। हां, यह सात मंजिला इमारत प्रत्येक मनुष्य को मिली है। ये चेतना के सात तल हैं, हम इन सातों तलों पर पहुंचकर वहां का आनंद लें। हर एक तल पर संपूर्णता से हम जी सकें, ऐसी हमारी क्षमता होनी चाहिए।

ऊर्जा की सब अभिव्यक्तियां- काम से लेकर राम तक- जीवन के लिए सभी उपयोगी हैं। इनमें कोई भी उच्च या निम्न नहीं हैं। हां, शरीर में देखें तो सहस्रार ऊपर है, मूलाधार नीचे है। लेकिन वह सिर्फ एक भौतिक घटना है। आध्यात्मिक रूप से कुछ ऊपर या नीचे नहीं है।

लेकिन तथाकथित धर्मों ने उच्चता व निम्नता की धारणा जीवन ऊर्जा के साथ जोड़ दी है। उससे बड़ी मुश्किल होती है। अच्छा हो कि हम एक ही शब्द का उपयोग करें जैसे- जीवन ऊर्जा, सूरज की श्वेत किरण, वही प्रिज्म से गुजरकर सात रूपों में विभाजित हो जाती है। ठीक वैसे ही हमारी जीवन ऊर्जा इन सात चक्रों से गुजरकर अलग-अलग अभिव्यक्तियां देती है।

प्रश्न २ : एक दूसरे मित्र ने पूछा है क्या हमारी चेतना भी ऊर्जा का ही एक रूप है और चेतना मृत्यु के बाद कहां जाती है? मेडिकल साइंस में माना जाता है कि मृत्यु होने के पश्चात् ब्रेन सबसे आखिरी में काम करना बंद करता है। कृपया इस बारे में थोड़ा समझाएं।

उत्तर : शरीर के तल से देखें, मेडिकल साइंस के हिसाब से, तो हम अपनी ऊर्जा को तीन हिस्सों में वैज्ञानिक तरीकों से समझ सकते हैं। एक तो ब्रेन है जहां पर इलेक्ट्रिक वेव्स विद्युत ऊर्जा के रूप में, जीवन शक्ति काम कर रही है। मस्तिष्क से विद्युत ऊर्जा चलती है दो रूपों में; पहला: नर्वस सिस्टम के माध्यम से न्यूरो ट्रांसमिटर्स नामक केमिकल्स के द्वारा मसल्स तक पहुंचती है। शरीर की परिधि तक पहुंचती है। दूसरा: हाइपोथैलमस और पिट्यूटरी ग्लैंड्स के माध्यम से शरीर के सभी एंडोक्राइन ग्लैंड्स को, अन्त:स्रावी ग्रंथियों को वह संचालित करती है, रासायनिक रूप में परिवर्तित होकर। नर्वस सिस्टम में भी बहुत से न्यूरो ट्रांसमिटर्स रूपी रसायन हैं। विद्युत ऊर्जा रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित होती है या तो नर्वस सिस्टम के माध्यम से अथवा एंडोक्राइन सिस्टम के माध्यम से, पहले रासायनिक, फिर फिजिकल ऊर्जा में परिवर्तित होती है। तो विज्ञान इन तीन तलों से राजी है। एक तो भौतिक तल है, दूसरा रासायनिक

तल है, तीसरा एक विद्युतीय तल है।

जब मृत्यु घटित होती है तो सबसे पहले स्थूल फिजिकल एनर्जी वापस खींच ली जाती है, फिर सूक्ष्म तल पर रासायनिक परिवर्तन होते हैं। और सबसे अंत में विद्युतीय परिवर्तन होते हैं। अंततः जो इलेक्ट्रिक फंक्शन्स चल रहे हैं वे भी काम करना बंद कर देते हैं और तब मृत्यु घटित होती है। यहां तक विज्ञान की पकड़ में आता है।

आज से 150 वर्ष पहले तक केवल भौतिक घटनाओं को ही मृत्यु का पर्यायवाची माना जाता था। हृदय ने धड़कना बंद कर दिया, नब्ज चलनी बंद हो गई, श्वास खत्म हो गई। इसको ही मृत्यु माना जाता था। आज मृत्यु की परिभाषा बदल गई। जब मस्तिष्क काम करना बंद कर देता है वहां की विद्युतीय गतिविधियां बंद हो जाती हैं, अब उसे मृत्यु कहा जाता है। यदि मस्तिष्क सक्रिय है, विद्युत ऊर्जा वहां पर मौजूद है केवल हृदय बंद हो गया है अथवा श्वास बंद हो गई है या किसी शरीर के अन्य हिस्से ने काम करना बंद कर दिया है; तो उसे पुनः संचालित किया जाना संभव है। हृदय धड़कना-बंद होने के 6 मिनट बाद भी अगर हृदय को फिर से धड़का लिया जाए, किसी कृत्रिम उपाय से, तो जीवन पुनः वापस लौट आएगा। तो मृत्यु की परिभाषा अब बदल गई है।

शायद भविष्य में मृत्यु की परिभाषा फिर बदलेगी। यदि हमें विद्युत ऊर्जा से और सूक्ष्म तरंगों का अहसास होना शुरू हुआ तो, शायद वह संभव है और सूक्ष्म उपकरण जब बन जाएंगे जो विद्युत ऊर्जा से भी सूक्ष्म ऊर्जा को माप सकेंगे, पकड़ सकेंगे तब हम जानेंगे कि मस्तिष्क ने जब काम करना बंद कर दिया तब भी कहीं किसी सूक्ष्मतर तल पर अभी जीवन मौजूद है। हिंदुओं की मान्यता है कि पूरी-पूरी मृत्यु लगभग तीन दिन के बाद घटित होती है। जब हमारा सूक्ष्म शरीर स्थूल शरीर से पूरी तरह विदा हो जाता है, उसमें करीब-करीब तीन दिन लग जाते हैं। हो सकता है भविष्य में ऐसा कोई उपाय हो जाए कि मस्तिष्क की विद्युतीय गतिविधियां बंद होने के बावजूद भी फिर से सूक्ष्म शरीर को मस्तिष्क से जोड़ा जा सके और पुनः सक्रिय किया जा सके। यह भावी संभावना कह रहा हूं।

आप पूछते हैं कि क्या चेतना भी ऊर्जा का ही एक रूप है? मैं कहना चाहूंगा, ठीक इससे उल्टी बात कि ऊर्जा चेतना का एक रूप है, चेतना ऊर्जा

से भी ज्यादा सूक्ष्म है। आज जिसे हम ऊर्जा की तरह जान रहे हैं, ज्यादा अच्छा होगा कहना कि वह चेतना का सघन रूप है। जैसा विज्ञान कहता है कि ऊर्जा का सघन रूप पदार्थ है, तो बेहतर होगा कि इस क्रम में चीजों को जमाएं- सर्वाधिक सूक्ष्म है चेतना। जब वह संगठित होती है, कन्डेंस होती है तो वह विद्युत ऊर्जा का रूप लेती है। फिर विद्युत ऊर्जा रसायन ऊर्जा का रूप लेती है। अंततः रसायन ऊर्जा और घनी होकर भौतिक ऊर्जा का रूप लेती है। तो आज मेडिकल साईंस की भाषा में इस बात को हम तीन स्टेप तक तो आसानी से समझ सकते हैं- विद्युत ऊर्जा, रसायन ऊर्जा, और भौतिक ऊर्जा।

संभवतः भविष्य में हम इसके और सूक्ष्म आयाम में प्रवेश कर सकेंगे। यह मुमकिन है कि चेतना का और सूक्ष्म आयाम भी वैज्ञानिक उपकरणों की पकड़ में आ सकेगा। तब हम और सूक्ष्म तल पर पहुंच जाएंगे। चेतना को हम जान सकेंगे। सच पूछो तो भौतिक विज्ञान बहुत नजदीक पहुंच गया है चैतन्यता की तरफ। धार्मिक लोग तो सदा से कहते रहे कि सारा जगत चेतना से निर्मित है, परमात्म-मय है। अब धीरे-धीरे विज्ञान की पकड़ में भी बात आ रही है लेकिन उनकी शब्दावली थोड़ी भिन्न है। समझो कि भौतिक विज्ञान ने खोज लिया है 'दि लॉ ऑफ अनसरटेनिटी', अनिश्चय का सिद्धांत।

बड़ी अजीब बात है सारे नियम तो निश्चितता के नियम होते हैं। अनिश्चितता का नियम कहकर तो विज्ञान खुद ही अपनी बात को कनट्राडिक्ट कर रहा है। इसके पहले तक विज्ञान बिल्कुल सुनिश्चित था। लेकिन जैसे-जैसे परमाणु से भी छोटे कणों की खोज हुई तब पता चला कि वह कण भी हैं और तरंगें भी हैं। किन्हीं प्रयोगों में वे कण के रूप में सिद्ध होते हैं। किन्हीं अन्य प्रयोगों में वे तरंग की भांति पकड़ में आते हैं। पदार्थ धीरे-धीरे खो गया, ऊर्जा के जगत में प्रवेश मिल गया। सिर्फ तरंगें हैं। आज भौतिकी ने अनसरटेनिटी प्रिंसिपल खोज लिया कि उन तरंग-कणों (क्वान्टा) का व्यवहार अति सूक्ष्म तल पर बहुत अनिश्चित है। इसका मतलब हुआ कि उनके अपने मूड्स हैं, अपनी भावदशाएं हैं, उनके व्यवहार करने का तरीका सुनिश्चित नहीं है। उनका संवेग (मोमेन्टम) नापो तो स्थिति पता नहीं चलती। पोज़ीशन पता लगाओ तो संवेग का ज्ञान नहीं हो पाता। चैतन्यता का यही तो अर्थ है कि चीजें जड़ या मुर्दा नहीं हैं; उनकी अपनी भावदशाएं हैं, उनके अपने मूड्स हैं, उनके अपने विचार हैं। उनका व्यवहार वे स्वयं ही तय करते हैं। बहुत सूक्ष्म तल पर

जाकर यह बात पकड़ में आई है कि स्थूल तल पर चीजें सुनिश्चित जान पड़ती थीं, लेकिन सूक्ष्म तल पर अनिश्चितता का नियम समझ में आया। दूसरी शब्दावली में कहें कि विज्ञान धीरे-धीरे राजी हो रहा है कि पदार्थ के जो सूक्ष्मतम कण-तरंग हैं, उनकी अपनी चेतना है। वे स्वयं निर्णायक हैं।

इस छोटे से चुटकुले से समझें। मुल्ला नसरुद्दीन एक नए गांव में गया। वह कहीं हलवाई की दुकान पर मिठाई खरीदने गया। हलवाई को उसने पैसे दिये, हलवाई के पास चिल्लर नहीं थी वापिस करने के लिए, चार आने वापिस करने थे। उसने कहा, कल ले जाइये या शाम को यहां से गुजरें तब ले जाइये। नसरुद्दीन ने कहा ठीक। मुल्ला को दो-चार दिन उस गांव में रहना था उसने सोचा कि कुछ पहचान बना लूं कि हलवाई की दुकान कौन सी है? उसने देखा कि हलवाई की दुकान के सामने एक भैंस बैठी हुई है। उसने कहा कि ठीक। भैंस जिस दुकान के सामने बैठी है, वही दुकान है। दूसरे दिन नसरुद्दीन वहां पहुंचा। उसने भैंस तलाश की। भैंस कहां है? एक नाई की दुकान के सामने भैंस बैठी थी। मुल्ला गया भीतर... उस नाई की गरदन पकड़ ली और कहा कि हद करते हो हलवाई जी, तुमने चार आने के पीछे अपना काम-धंधा बदल लिया, जाति बदल ली। हलवाई से नाई बन गये। मेरे चार आने लौटाओ।

हमें हंसी आएगी। क्योंकि मुल्ला जिस चीज से नापने चला है, जिस चीज से पहचान बना रहा है वह चीज स्वयं ही अनिश्चित है। भैंस कल कहां बैठेगी यह पहले से तय नहीं हो सकता। भैंस का अपना मूड है। आज हलवाई के सामने बैठी है, कल नाई के सामने बैठ जाएगी, परसों कहीं बैठे ही न, उसका क्या ठिकाना! जब तक विज्ञान स्थूल पदार्थ की खोज कर रहा था तब तक बड़ी सुनिश्चितता व सरटेनिटी पाई गई। जैसे ही सूक्ष्म तल पर विश्लेषण शुरू हुआ अनिश्चितता होने लगी। इसका अर्थ हुआ कि पदार्थ का भी जो सूक्ष्म रूप है उसकी अपनी जीवन्तता है, उसकी अपनी चेतना है... भैंस कहां बैठेगी कल, यह पक्का नहीं हो सकता। ये सब-एटॉमिक पार्टिकल्स, अति सूक्ष्म तरंगें कैसा व्यवहार करेंगी, मामला इतना सुनिश्चित नहीं है।

इस तरह दूसरी तरफ से विज्ञान ने भी वही बात खोज ली जो धार्मिक लोग सदा-सदा से जानते थे। तो मैं कहना चाहूंगा कि चेतना का संघनित रूप ऊर्जा है। ऊर्जा का संघनित रूप पदार्थ है और मृत्यु में जो घटना घटती है वह रिवर्स डाइरेक्शन में स्थूल से सूक्ष्म की ओर धीरे-धीरे मृत्यु घटित होती है। जब जन्म

घटित होता है तब सूक्ष्म से स्थूल की तरफ- सबसे पहले चेतना, फिर वह गर्भ में आती है, एक छोटा सा सेल विकसित होना शुरू होता है। फिर धीरे-धीरे उसका विकास होता है और मस्तिष्क बनता। धीरे-धीरे शरीर के दूसरे हिस्से बनते और क्रमशः शरीर बड़ा होता। जब जन्म हुआ था तब सूक्ष्म से स्थूल की तरफ विकास हुआ था। मृत्यु घटती है तो स्थूल से सूक्ष्म की ओर विपरीत दिशा में जीवन ऊर्जा खिसकना प्रारंभ करती है।

प्रश्न ३ : विज्ञान ने खोजा कि पदार्थ एवं ऊर्जा एक ही सत्य के दो पहलू हैं तथा आपस में परिवर्तनशील हैं। पदार्थ ऊर्जा में और ऊर्जा पदार्थ में रूपांतरित हो सकता है। आधुनिक विज्ञान ने बिग बैंग थ्योरी खोजी है जो कहती है कि एक महाशून्य से सारे जगत का निर्माण हुआ। क्या धर्म की खोज इस वैज्ञानिक धारणा से कोई तालमेल रखती है?

उत्तर : हां; बहुत दूर तक तालमेल रखती है। संतों ने सदा से यही कहा है जो आज बिग बैंग थ्योरी कह रही है। एक जोर का बैंग हुआ... जोर की ध्वनि और सारे जगत का निर्माण महाशून्य से हुआ। ईसाई कहते हैं- लोगोस, दि वर्ड। भारतीय संत कहते हैं- शबद, प्रणव, ओंकार, सतनाम से सारे जगत का सृजन हुआ। सर्वप्रथम ओंकार, उसके बाद ऊर्जा के विविध रूप, फिर समस्त पदार्थ एवं सारे जगत का विस्तार आया। विज्ञान ने पदार्थ के तल पर खोजा- पदार्थ व ऊर्जा, इसी प्रकार अध्यात्म की भाषा में हम कह लें देह और परमात्मा, शरीर और चेतना, ये वही दो बातें हैं और ये परिवर्तनशील हैं।

जैसा मैंने थोड़ी देर पहले कहा- चेतना ही संघनित होकर मन बन जाती है और मन संघनित होकर शरीर का रूप धारण कर लेता है। इसलिए हमारे मन में जैसी वासनाएं होती हैं, जैसी कामनाएं होती हैं- वैसे-वैसे हमारा शरीर विकसित होता चला जाता है। समझें, आज से कुछ हजार साल पहले मनुष्यों को सुगंध का अहसास नहीं होता था। ऋग्वेद को पढ़ें- उसमें फूलों का तो वर्णन है सुगंध का कहीं भी कोई वर्णन नहीं है। ऐसा लगता है कि ऋग्वेद के काल में गंध का अहसास नहीं होता था। सुगंध की इंद्रियां विकसित नहीं हुई थीं। पहले चित्त में कामना पैदा हुई कि सूंघा जाए और तब शरीर में वह इंद्रिय विकसित होनी शुरू हुई जो सूंघने में सक्षम है। आज से पांच हजार साल पहले संभवतः केवल तीन रंग ही देखे जाते थे; प्राचीन ग्रंथों में तीन रंगों से ज्यादा का वर्णन नहीं है। आज हम सात रंग देखने में सक्षम हैं। शायद भविष्य

में हम इंद्रधनुष से भी अधिक रंगों को देख सकेंगे। आज भी हमारे बीच में जो कलाकार, पेंटर्स, कवि हैं वे शायद हमसे ज्यादा मनमोहक रंगों को देख पाते हैं जो हमें नहीं दिखते। अब भी करीब 3-4 प्रतिशत कलर ब्लाइंड लोगों की आंखों में वह क्षमता नहीं है कि सातों रंगों को देख सकें।

धीरे-धीरे मनुष्य का विकास होता जा रहा है। इंद्रियां विकसित हो रही हैं। पहले मन में कामनाएं पैदा होती हैं फिर वैसा शरीर निर्मित होना शुरू हो जाता है- चेतन से मन, मन से तन। विज्ञान की इस खोज से बात मिलती जुलती है कि पदार्थ और ऊर्जा आपस में रूपांतरणीय हैं। बिग बैंग थ्योरी से भी यह बात सामंजस्य रखती है कि संसार की शुरुआत एक महाध्वनि-ओम् से हुई और जगत का प्रलय भी उसी महाध्वनि में होगा, उसी में फिर सब विलीन हो जाएगा। विज्ञान कहता है कि पहले महाशून्य था वह दो में विभाजित हो गया- पॉजिटिव और निगेटिव; सकारात्मक और नकारात्मक। निश्चित रूप से प्रलय में फिर वे विपरीत ऊर्जाएं आपस में मिलकर शून्य हो जाएंगी और सारी लीला समाप्त हो जाएगी। यह शक्ति का नृत्य, खेल ही है।

ऐसे समझो पानी, भाप और बर्फ- एच.टू.ओ. (H_2O)के तीन रूप हैं- ठोस, तरल और गैस। ऐसे ही हमारा शरीर ठोस रूप है। मन बहुत तरल, चंचल है। चेतना वाष्परूप है। और ये आपस में परिवर्तनशील हैं। इसलिए इनमें कोई विरोध नहीं है। शरीर और आत्मा एक दूसरे के विपरीत नहीं हैं। जैसे हिमालय पर जमी शाश्वत बर्फ और हवा में उड़ते बादल, एक-दूसरे के विपरीत नहीं हैं। एक ही जल दोनों में मौजूद है, अलग-अलग रूपों में। कहां कोहरा, कहां ओसकण, कहां ओले व हिमपात, कहां मानसूनी वर्षा... यद्यपि सबने होने के बड़े अलग-अलग रंग-ढंग चुने हैं किंतु यथार्थ एक है। जीवन इंद्रधनुष जैसा है।

हमारी ऊर्जा या चेतना के इस स्पेक्ट्रम को समझें। प्रथम, सबसे स्थूल हमारा शरीर, भौतिक देह है। उससे सूक्ष्म एथरिक बॉडी या भाव शरीर या आकाशीय शरीर है। तीसरा- एस्ट्रल बॉडी या सूक्ष्म शरीर। चौथा सूक्ष्म से भी सूक्ष्म जिसे हम कहते हैं मनस शरीर, साइकिक बॉडी। फिर पांचवां आत्म शरीर या स्पिरिच्युअल बॉडी। छटवां कॉस्मिक बॉडी ब्रह्म शरीर, और सातवां निर्वाण काया या शून्य शरीर। शुरुआत शून्य से हुई, वह स्थूल होते-होते स्थूल शरीर तक पहुंच गया। तो सूक्ष्म से स्थूल तक का यह पूरा स्पेक्ट्रम इंद्रधनुष जैसा

है। इसमें विपरीत कुछ भी नहीं है। विज्ञान की यह बात ठीक है कि पदार्थ और ऊर्जा आपस में एक-दूसरे में बदल सकते हैं। इंद्रधनुष का हरा रंग ही धीरे-धीरे नीला हो जाता है एक तरफ, वही दूसरी तरफ पीला हो जाता है। या ऐसा कह लें कि नीले और पीले जहां मिल जाते हैं- वहां हरा रंग दिखने लगता है। इंद्रधनुष में क्लीयर कट डिस्टिंक्शन हम नहीं कर सकते कि कहां पर एक रंग समाप्त होता है और कहां से दूसरा रंग शुरू होता है। एक रंग दूसरे में परिवर्तित होता जाता है।

शून्य शरीर या निर्वाण काया से ही कॉस्मिक बॉडी, ब्रह्म शरीर का निर्माण हुआ। वह ब्रह्म शरीर ही स्पिरिच्युअल बॉडी, आत्मा बन गई। एक इंडीविज्युअल चेतना के भीतर धीरे-धीरे मनस शरीर बना। मनस शरीर से एस्ट्रल बॉडी बनी। उस सूक्ष्म शरीर से भाव शरीर और भाव शरीर के बाद स्थूल शरीर। यह पूरा एक स्पेक्ट्रम है। चीजें आपस में बदल रही हैं। कहने के लिए हमने सात खंडों में बांट दिया लेकिन ऐसे सुस्पष्ट खंड कहीं हैं नहीं। कहीं कोई विभाजन नहीं है। एक रंग दूसरे रंग पर ओवरलैप कर रहा है। एक दूजे में बदल रहा है। कुछ लोगों की यह धारणा सरासर गलत है कि शरीर और परमात्मा एक दूसरे के विपरीत हैं। वस्तुत: वे एक दूसरे के परिपूरक हैं। आत्मा का ही स्थूल रूप शरीर है। शरीर का ही बहुत सूक्ष्म रूप आत्मा है। दोनों में वैमनस्य नहीं है। प्रभु का प्रगट रूप संसार है। संसार का ही अतीन्द्रिय सूक्ष्म रूप परमात्मा है।

प्रश्न ४ : क्या ऊर्जा को जगाने के लिए किन्हीं मंत्रों का प्रयोग किया जा सकता है, जैसे ओम मणि पद्मे हुम्, अहम् ब्रह्मास्मि अथवा सोहम्। कृपया प्रकाश डालें?

उत्तर - मंत्रों का प्रयोग किया तो जा सकता है लेकिन वे मंत्र ज्यादा उपयोगी होंगे जिनमें कोई अर्थ नहीं है। जब आप कहते हैं 'अहम् ब्रह्मास्मि'- मैं ब्रह्म हूं या 'सोहम्'-मैं वही हूं, इनमें अर्थ है। इन शब्दों को रिपीट करने से सम्मोहन तो जरूर पैदा हो सकता है, निद्रा पैदा हो सकती है लेकिन ऊर्जा का जागरण संभव न हो सकेगा।

ऊर्जा जागरण के लिए ज्यादा अच्छा हो कि हम ऐसी ध्वनियां या मंत्र चुनें जिनमें कोई अर्थ नहीं है- कोई शब्द नहीं है। जब एक व्यक्ति कह रहा है मैं ब्रह्म हूं तो वह किसको समझा रहा है? अपने आप को समझा रहा है और किसी को नहीं।

मैंने सुना है एक स्टेशन के प्लेटफॉर्म पर एक पति-पत्नी अपने बच्चे को लिए हुए बैठे थे, पत्नी ने अपने पति से कहा कि मैं पांच मिनट में टॉयलेट होकर आती हूं बच्चे को जरा संभालो। पतिदेव ने बच्चा अपनी गोद में ले लिया। वह महिला जैसे ही वहां से गई वह बच्चा जोर-जोर से चीख-चीख कर रोने लगा। मम्मी-मम्मी चिल्ला रहा है, जोर-जोर से चीख मार-मार कर रो रहा है। उसका बाप उसको हिला-डुला रहा है संभाल रहा है। लेकिन वह संभल नहीं रहा। फिर वह धीरे-धीरे उसको कहना शुरू करता है कि मुरारी शांत रह, मुरारी बिलकुल शांत रह, थोड़ा सा धीरज रख, बस अभी वह आती ही होगी। पांच मिनट की तो बात है, बिलकुल शांत, मुरारी देख- लोग क्या कहेंगे, शांत रह कुछ न कर बिलकुल शांत रह। दूसरे लोग आसपास में खड ़े यह बातचीत सुन रहे थे। वह अपने बच्चे से कह रहा था, बच्चा बिलकुल उसकी सुन नहीं रहा था। पांच मिनट बाद वह महिला आई तो एक दूसरी महिला जो बगल में बैठी थी उसने कहा कि आपके पतिदेव ने तो बच्चे को बड़े प्रेम से बड़े ढंग से संभाला। बार-बार उसे बड़े प्रेम से समझा रहे थे देख मुरारी शांत रह, मुरारी धीरज रख अरे लोग क्या कहेंगे; वह महिला बोली कि माफ करिये मुरारी लाल तो मेरे पति का नाम है। बच्चे का नाम तो पप्पू है। अपने आप को समझा रहे हैं! गुस्सा तो आ रहा है कि एक बार उठा कर पटक दें इस बच्चे को। अपने आप को ही समझा रहे थे कि मुरारी, शांत रह! अरे थोड़ा तो धैर्य रख! कुछ कर मत बैठना। पांच मिनट की बात है, अरे लोग क्या

कहेंगे! कुछ कर मत बैठना।

जब तुम कह रहे हो 'अहम् ब्रह्मास्मि' तो 'सोहम्' किसे समझा रहे हो। मुरारी शांत... धीरज रख। अगर पता ही होता मैं ब्रह्म हूं तो कहने की जरूरत न पड़ती। कोई आदमी सड़क पर जा रहा हो और बार-बार कहता जाए मैं पुरुष हूं क्या समझ रखा है। मैं पुरुष हूं चाहे कोई कुछ भी कहे मैं पक्का पुरुष हूं। 100 प्रतिशत कोई शक नहीं है। तो सभी को शक पैदा हो जाएगा कि मामला क्या है। अगर तुम्हें पता ही है कि तुम पुरुष हो तो कहने की जरूरत क्या है। नहीं! जो लोग रट रहे हैं अहम् ब्रह्मास्मि, अहम् ब्रह्मास्मि उन्हें बिलकुल पक्का पता है कि जो वे कह रहे हैं वे वो नहीं हैं। इसलिए मंत्र का उपयोग आत्म-सम्मोहन तो पैदा कर सकता है, एक प्रकार की निद्रा पैदा कर सकता है। अगर सम्यक् रूप से उपयोग किया जाए तो ऊर्जा के जागरण में उपयोगी हो सकता है। उससे ज्यादा बेहतर हो कि हम अर्थहीन ध्वनियों को चुनें। वे ऊर्जा को जगाने में ज्यादा सहयोगी होंगी।

प्रश्न ५ : एक और मित्र ने इसी प्रकार का प्रश्न पूछा है कि भीतर की शक्तियों को जगाने का विज्ञान समझाएं?

उत्तर : ओशो ने एक प्रवचन में ऊर्जा का पूरा विज्ञान दिया है- भीतरी शक्तियों के संबंध में विस्तृत रूप से समझाया है। भोजन से हमें ऊर्जा मिलती हैं। शरीर में ऊर्जा संग्रहीत होती है। गहन निद्रा में ऊर्जा संरक्षित होती, कन्जर्व होती है। दैनिक क्रियाकलापों में ऊर्जा खर्च होती है। प्राणायाम और व्यायाम से ऊर्जा जागती है। धारणा से ऊर्जा केंद्रित होती है, फोकस्ड, एकत्रित होती है। ध्यान से ऊर्जा उर्ध्वगामी होती है- ऊपर चढ़ती है। काम, क्रोध, लोभ आदि वासनाओं में ऊर्जा नीचे गिरती है- अधोगामी होती है। प्रेम में, प्रसन्नता में, आनंद में ऊर्जा फैलती है। समाधि में ऊर्जा ब्रह्म की परम ऊर्जा के साथ एक होती है- उसमें विलीन होती है। यह ऊर्जा का पूरा विज्ञान है।

ऊर्जा को जगाने के लिए व्यायाम और प्राणायाम बहुत उपयोगी हो सकते हैं। योग की साधना में इन दोनों का बहुत उपयोग किया गया है। धारणा से ऊर्जा एकत्रित होगी, केंद्रित होगी। ध्यान से ऊर्जा ऊपर को चढ़ेगी। प्रेम से ऊर्जा फैलेगी। भय और चिंता में ऊर्जा सिकुड़ती है।

विपरीत को भी याद रखना। जैसे प्रेम में फैलती है, आनंद में विस्तार लेती है। इसका ठीक उल्टा दुख में, चिंता में, डर में ऊर्जा सिकुड़ती है। ध्यान में

ऊपर चढ़ती है, वासना में नीचे गिरती है। इस पूरे विज्ञान को समझ लो तब अपने जीवन की ऊर्जा का ठीक-ठीक सदुपयोग करना सीख सकोगे। ओशो ने जो ध्यान की विधियां बनाई हैं उनमें अलग-अलग तरीकों से ऊर्जा को ऊर्ध्वगामी करने के उपाय किये गये हैं। उदाहरण के लिए सक्रिय ध्यान में कपालभाति प्राणायाम का उपयोग किया गया है। कुंडलिनी ध्यान में शरीर के कंपन वाला व्यायाम, नादब्रह्म ध्यान में गुंजार की ध्वनि का प्रयोग; जो पिछले सवाल के जवाब में आपसे कहा कि एक अर्थहीन ध्वनि ज्यादा उपयोगी होगी इसलिए नादब्रह्म ध्यान में गुंजन का उपयोग किया गया है। गुंजार की आवाज में कोई अर्थ तो है नहीं। वह ऊर्जा जगा सकेगा। सारे शरीर में उसकी ध्वनि के कंपन, देह-ऊर्जा को जगा देंगे। मंडल ध्यान में जॉगिंग का, एक ही जगह खड़े होकर तेजी से उछलने का उपयोग किया गया है शक्ति जगाने के लिए। गौरीशंकर ध्यान में कुंभक का प्रयोग किया गया है। त्राटक ध्यान में आज्ञाचक्र पर ऊर्जा एकत्रित करके उसे ऊर्ध्वगामी किया जाता है। साक्षी भाव, सहस्रार की घटना है। त्राटक की ध्यान विधियां आज्ञाचक्र की घटनाएं हैं। जब हम इन दो केंद्रों पर फोकस करते हैं ऊर्जा को, तब ऊर्जा स्वत: ऊर्ध्वगामी हो जाती है।

जिन्हें हम षट्‌रिपु कहते हैं- काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष- ये ऊर्जा को नीचे की तरफ ले जाते हैं। ऊर्जा को नष्ट करते हैं। इसलिए इनको रिपु कहा गया है- दुश्मन। ये हमारी जीवन ऊर्जा को नष्ट करते हैं। क्रोध में तुम दूसरे को नुकसान पहुंचाओगे, वह तो अलग बात है लेकिन उसके भी पहले तुम स्वयं को नुकसान पहुंचा लेते हो। तुम अपनी ही ऊर्जा को अस्त-व्यस्त कर लेते हो। ईर्ष्या में जल भुन कर तुमने अपनी ऊर्जा को नष्ट कर लिया। दूसरे को क्या हानि पहुंचेगी, सो अलग बात; सर्वप्रथम तुम्हें तो हानि पहुंच ही गई।

महावीर ने 'जिन सूत्र' में कहा है कि आत्म हितैषी पुरुष हिंसा नहीं करते। बड़ा अद्‌भुत वचन है- 'आत्म हितैषी पुरुष' अर्थात् जिन्हें स्वयं का भला करना है वे लोग हिंसा में नहीं जाते। इसमें दूसरे पर परोपकार करने की बात नहीं है। आत्म हितैषी, जो अपना शुभ चाहते हैं, आत्म-मंगल चाहते हैं, जो स्वयं की ऊर्जा को सुव्यवस्थित रखना चाहते हैं, जो अपनी ऊर्जा को एक सम्यक् मार्ग देना चाहते हैं वे हिंसा में नहीं उतरते।

जिन्हें दुश्मन की तरह जानकर रिपु कहा गया है वे बातें वही हैं जो तुम्हारी

ऊर्जा को बेचैन करती हैं, उद्वेलित करती हैं, जलाती-भुनाती हैं, उसे नष्ट-भ्रष्ट करती हैं। वे चीजें साधना में अति सहयोगी है जो तुम्हें साधना में सम्यक् दिशा देती हैं, शांत करती है, विस्तार देती हैं।

इसलिए ध्यान के साथ प्रेम उपयोगी है। ध्यान ऊर्जा को ऊर्ध्वगामी करेगा, प्रेम उसे विस्तार देगा और ये दोनों ही आयाम बिलकुल जरूरी हैं।

इसलिए ओशो की देशना खूब संक्षेप में अगर कहें तो दो शब्दों में समा जाती है- होश और प्रेम या दूसरे शब्द में कहें तो ध्यान और भक्ति। तो ऊर्जा के इस विज्ञान को स्मरण रखना। भोजन से ऊर्जा मिलती है। नींद में ऊर्जा संरक्षित होती है। दिनचर्या में खर्च होती। प्राणायाम और व्यायाम से जागती। धारणा से केंद्रित होती। ध्यान से ऊपर चढ़ती। भय में सिकुड़ती, वासना में नीचे
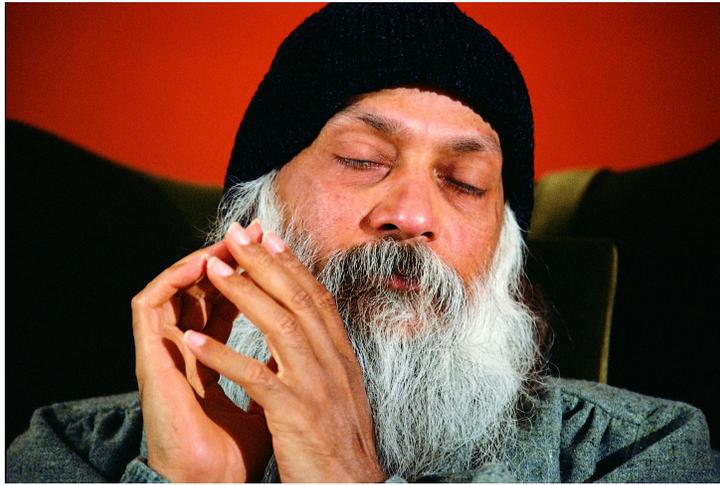
गिरती, प्रेम में फैलती तथा समाधि में विराट के संग एकात्म होती।

ऊर्जा को जगाने का एक और बहुत सुंदर उपाय जो ओशो ने शायद धर्म के जगत में पहली बार किया और वह है हंसी का उपयोग। हास्य का प्रयोग। पहली बार ओशो ने इतिहास में चुटकुलों का उपयोग ऊर्जा के जागरण में और ध्यान में डुबाने के लिए किया। आश्चर्य की बात है कि किसी को पहले यह बात ख्याल क्यों नहीं आई। प्राणायाम साधने या व्यायाम करने में, या अन्य विधियों में बहुत देर लगेगी। लतीफा आधा मिनट के भीतर ऊर्जा को वैसे ही ऊर्ध्वगामी कर देता है और न केवल ऊर्ध्वगामी, वरन फैला भी देता है।

प्रसन्नता का भाव, आनंद-भाव; दोनों काम कर देता है जो ध्यान व प्रेम मिलकर करते हैं। ऊर्जा ऊपर की ओर भागती, सहस्रार की तरफ और साथ-साथ विस्तृत भी होती है फैलती भी है। चलो उसका प्रयोग करके ही देख लें।

(1) एक महिला के छह बच्चे थे और जब भी कोई बच्चा रोता वह महिला कहती थी देखो गलती करके रोते नहीं। हमेशा वह यही समझाती थी, बेटा गलती करके रोते नहीं। एक दिन छहों बच्चे उसे बहुत तंग कर रहे थे और उस महिला ने कहा तुम्हारे जैसे बच्चे पैदा करने से तो बेऔलाद रह जाना ज्यादा ठीक था। उसकी छोटी बेटी बोली-'मम्मी, गलती कलके लोते नहीं'।

(2) दो महिलाएं ट्रेन में सफर कर रही थीं। एक ने फुसफुसाकर अपनी बगल में बैठी स्त्री से कहा-देखो सामने की सीट पर बैठा वह आदमी आधे घंटे से मुझे घूर-घूर कर देख रहा है। कुछ न कुछ करना होगा। दूसरी महिला ने उसे जवाब दिया-कुछ करने की जरूरत नहीं, वह आदमी कबाड़ी है। उसे पुरानी सड़ी-गली रद्दी व बेकार चीजों को घूरकर देखने की आदत है।

(3) सेठ चंदूलाल बस से उतरकर अपनी पत्नी के लिए एक पान खरीद कर लाये। खूब बड़ा किंग साइज पान। कहा- लो भागवान, यह पान खाओ। श्रीमती चंदूलाल ने कहा कि पान सिर्फ मेरे लिए! अपने लिए क्यों नहीं लाए? सेठजी ने कहा- भागवान, मैं बिना पान खाए भी बस में चुप बैठ सकता हूं।

(4) वैद्यराज ने बहुत ही कड़वे स्वाद का काढ़ा बनाकर सरदार विचित्र सिंह को दिया और कहा कि इससे दो दिन के अंदर ही खांसी ठीक हो जाएगी। दूसरे दिन सरदार विचित्र सिंह बाजार में घूमते हुए वैद्यराज जी से मिले, वैद्यराज ने पूछा- खांसी में कुछ कमी हुई कि नहीं, काढ़ा पी रहे हो न। विचित्र सिंह ने कहा- यह कड़वा काढ़ा पीने के बजाय खांसना ही मैंने बेहतर व आसान समझा। काढ़े से तो खांसी ही भली!

(5) वृद्धावस्था उस आयु को कहते हैं जब किसी खूबसूरत लड़की को देखकर आशाएं नहीं बल्कि यादें जागती हैं।

(6) रेफ्रिजरेटर वह उपकरण है जिसमें गृहणियों की बची-खुची चीजें तब तक रखी रहती हैं जब तक कि वे फेंकने लायक न हो जाएं।

(7) यदि किसी महिला की सही उम्र जाननी है तो उसकी सास, देवरानी, ननद, जेठानी या पड़ोसन से पूछिये।

(8) बेचारा मर्द जब पैदा होता है तो लोग उसकी मां को बधाइयां देते हैं।

उसका विवाह होता है तो लोग उसकी पत्नी को उपहार देते हैं और उसके मरने पर बीमे वाले आकर उसके बीमे का पैसा भी उसकी पत्नी को देते हैं।

(9) दो गप्पी फुटबॉल की ऊंची-ऊंची गप्प मार रहे थे। एक ने कहा-एक बार मैंने फुटबॉल में ऐसी किक मारी जो 15 मिनट बाद जमीन में आकर गिरी। दूसरे ने कहा-यह तो कुछ भी नहीं। मैंने एक बार ऐसी किक मारी थी कि 15 दिन बाद फुटबॉल वापस आई और उसमें चिट लगी थी कि आइंदा आपकी फुटबाल चांद पर आई तो हम उसे वापस नहीं भेजेंगे।

प्रश्न ६ : एक मित्र ने पूछा है कि ऊर्जा ध्यान के दौरान स्पष्टरूपेण मैंने अपने भीतर स्पंदित हो रही ऊर्जा को एक पुंज के रूप में महसूस किया। वह जीवंतता से धड़कता हुआ ऊर्जा पुंज एकाकार है उसमें कहीं खंड व विभाजन महसूस नहीं हुए। सब कुछ उस एक में ही समाहित जान पड़ता है। सात चक्रों का अनुभव मुझे नहीं हो पाता। न ऊर्ध्वगमन **की न ही सहस्त्रार से मूलाधार तक उतरने की प्रतीति हुई। यद्यपि ऊर्जा की अनुभूति बिलकुल स्पष्ट थी। मेरे ध्यान में कहां बाधा पड़ रही है? कृपया बताएं क्या मेरे चक्र अवरुद्ध हैं? क्या इस वजह से मुझे चक्रों का ज्ञान घटित नहीं होता?**

उत्तर- इसका ठीक विपरीत भी संभव है। यदि सारे चक्र खुले हुए हों तथा रास्ते में कहीं कोई अवरोध न हो तो ऊर्जा सहज रूप से बह जाती है और चक्रों का कहीं भी पता नहीं चलता। चक्रों का पता तब चलता है जब वहां पर कोई अवरोध हो, ऊर्जा अटक जाती हो। जैसे एक नदी में जल बह रहा है यदि कोई चट्टान न हो मार्ग में तो नदी के बहने से कोई आवाज नहीं होती। चुपचाप शांत मौन पानी बहा चला जाता है। जितनी चट्टानें होंगी रास्ते में जितने व्यवधान होंगे, उतनी ही जोर की आवाज होगी और पता चलेगा कि नदी बह रही है। ठीक इसी प्रकार से कुछ लोगों को ऊर्जा का अहसास तो होता है, चक्रों का पता नहीं चलता। उसके दोनों कारण संभव हैं। यदि चक्र पूरी तरह ब्लॉक्ड हैं तो ऊर्जा का पता नहीं चलेगा। चट्टानें बहुत मजबूत हैं तो नदी बह ही नहीं पाएगी। आवाज पैदा होने का सवाल ही पैदा नहीं होता और अगर कहीं भी कोई चट्टान नहीं है तो चुपचाप नदी बह जाएगी। उसका भी पता नहीं चलेगा।

उपरोक्त दोनों स्थितियों में चक्रों का पता नहीं चलता। इसलिए अलग-अलग

संतों ने अलग-अलग चक्रों की बात कही है। कोई कहते हैं- तीन चक्र, कोई कहते हैं पांच चक्र, कोई कहते हैं सात चक्र, कोई कहते हैं दस चक्र, कोई कहते हैं कोई भी चक्र नहीं। चक्र की बात में ही मत पड़ना, घनचक्कर हो जाओगे। कहीं कोई चक्कर-वक्कर नहीं है। जिनके मार्ग में कहीं कोई अवरोध नहीं आया वह ऊर्जा का तो अहसास करेंगे जैसे प्रश्नकर्त्ता ने यह पूछा है कि ऊर्जा व आनंद का अहसास हो रहा है, मस्ती छा रही है लेकिन चक्रों का पता नहीं चल रहा है? क्योंकि चक्रों में कहीं ब्लॉकेज नहीं है। सब चक्र खुले हुए हैं। ऊर्जा सीधी बह जाती है और इसलिए तुम्हें उस एकाकार ऊर्जा पुंज जिसमें सब कुछ समाहित है, का पता चलता है। हमें उसी चक्र का पता चलेगा जो ब्लॉक्ड है। किसी व्यक्ति का हृदय चक्र ब्लॉक्ड है तो जब ऊर्जा वहां से गुजरेगी तो धक्के मारेगी, कुछ खिंचाव वहां लगेगा, स्पंदन-सा लगेगा। हल्का मीठा दर्द भी हो सकता है। वह दो-चार-छः दिन रहेगा। धीरे-धीरे विदा हो जाएगा। जब हृदय चक्र खुल जाएगा, ऊर्जा वहां से ऊपर चली जाएगी। फिर हृदय चक्र का ज्ञान नहीं होगा। पता चलना अवरोध की वजह से था।

आपने डॉक्टर को देखा होगा ब्लड प्रेशर नापते हुए। भुजा पर रबर-कप बांधकर हवा भरने पर खून की धमनी में खून जाना बंद हो जाता है, धीरे-धीरे प्रेशर को कम करने पर एक समय आता है जब रक्त प्रवाह पुनः शुरू होता है लेकिन झटके के साथ आवाज करता हुआ। जिस दाब पर स्टेथोस्कोप द्वारा वह 'खट-खट' आवाज सुनी जाती है, उसे कहते हैं सिस्टोलिक ब्लड प्रेशर। तब प्रेशर और कम करने पर एक दूसरी अवस्था आती है जहां स्मूथ फ्लो

मेन्टेन हो जाता है। बिना आवाज के खून धमनी में बहने लगता है। उस दाब को कहते हैं डायस्टोलिक ब्लड प्रेशर। सामान्य खून जो बह रहा है उसमें कोई आवाज नहीं है। चुपचाप बह रहा है। कहीं कोई ब्लॉकेज नहीं हैं। लेकिन जब प्रेशर डाल के हमने रक्त प्रवाह को अवरुद्ध कर दिया तब आवाज शुरू हुई। अर्थात् दो ढंग से आवाज नहीं होगी- या तो धमनी बिलकुल ब्लॉकड हो; सिस्टोलिक ब्लड प्रेशर से ज्यादा प्रेशर हो तो खून के बहाव की आवाज नहीं आएगी। क्योंकि खून बह ही नहीं रहा। या फिर डायस्टोलिक प्रेशर से कम हो जाए तब भी आवाज नहीं आएगी। क्योंकि अब चुपचाप स्मूथ फ्लो आफ ब्लड मेन्टेन हो गया। बीच में आवाज आएगी। ठीक ऐसे ही समझो कि चक्रों के बारे में घटित होता है।

दूसरा उदाहरण समझो कि एक बिजली का पंखा बीस साल से नहीं चला। धूल-धवांस जम गई। चिड़िया ने घोंसला बना लिया, मकड़ी के जाले लगे हुए हैं, जंग लग चुकी। बीस साल बाद कोई बटन दबाए, बिजली की ऊर्जा पहुंचकर उसे चलाए तो बड़ी खटर-पटर की आवाज होगी। लेकिन थोड़ी देर उसे चलाते रहें, चलते-चलते धूल-धवांस गिर जाएगी। जंग घिस जाएगी। थोड़ी देर में पंखा चलने लगेगा, स्मूथली, बिना शोर-शराबे के।

ठीक ऐसे ही हमारे चक्रों की स्थिति है। अगर बहुत लम्बे समय से वे उपयोग में नहीं आए हैं तो जब पहली बार ऊर्जा वहां पहुंचकर उसे चलाने की कोशिश करती है वो प्रतिरोध पैदा करता है। उसी प्रतिरोध की वजह से उसका पता चलता है। एक बार अगर वह प्रतिरोध हट गया तो ऊर्जा सहज रूप से प्रवाहित होने लगेगी और तब उस चक्र का पता नहीं चलेगा। मगर इसका प्रमाण क्या होगा? प्रमाण यही होगा कि जिस व्यक्ति के सभी चक्र खुल गये उसे चक्र का अहसास तो नहीं होगा लेकिन उसे आनंद की अनुभूति होगी, मस्ती का भाव होगा, ऊर्जा का स्पष्ट अहसास होगा।

प्रश्न ७ : एक मित्र ने पूछा है ऐसा आभास होता है ऊर्जा साकार का ही सूक्ष्म और निराकार रूप है। सभी आकार एक ही निराकार ऊर्जा से ओतप्रोत हैं एवं यह पूरा अस्तित्व जो दिखाई पड़ता है वह एक अगोचर ऊर्जा का महाखेल है। साकार से निराकार में छलांग कैसे लगे? हमारा प्रयास अनिवार्य है या केवल आनंद से भरी प्रतीक्षा पर्याप्त है?

उत्तर : तीन बातें जरूरी हैं- प्रयास, प्रतीक्षा और प्रसाद। प्रयास करना होगा,

प्रयास के बाद प्रतीक्षा भी करनी होगी और प्रतीक्षा करते-करते जब प्रतीक्षा भी छूट जाएगी तब प्रभु का प्रसाद बरसता है- उसकी कृपा से वह घटना घटती है जिसका इंतजार था।

पहले कर्ता-भाव सहित, सक्रियता से हम संलग्न होते हैं। श्रमपूर्वक साधना करते हैं फिर हमारी सक्रियता कम होती। प्रतीक्षा में भी एक सूक्ष्म सक्रियता मौजूद रहती है। हम इंतजार करते हैं कि कुछ हो! माना कि हम अपनी तरफ से कुछ नहीं कर रहे लेकिन फिर भी इंतजार तो है... एक सूक्ष्म क्रिया अभी भी भीतर चल रही है। अंततः वह भी धीरे-धीरे खो जाएगी।

मैंने सुना है- सेठ चन्दूलाल की पत्नी ने रात को 12 बजे अपने पति को जोर से हिलाकर कहा कि उठो मैं परेशान हो रही हूं। लड़के को भेजा था बड़े प्रयास से, बहुत समझा-बुझाकर कि बाजार चला जाए कुछ सामान लाने के लिए, 8 बजे रात को भेजा था, 12 बज गये; चार घंटे हो गये अभी तक वह नालायक वापस नहीं लौटा। और मैं परेशान हो गई हूं। बोर हो गई हूं। मुझे नींद आने लगी जोर की, अब बोलो मैं क्या करूं?

चन्दूलाल ने पूछा- तुमने उसको बाजार किसलिए भेजा था?

श्रीमती ने बताया- केमिस्ट-शॉप से नींद की गोली लाने के लिए।

वह कह रही है मैं परेशान हो गई हूं मुझे जोर की नींद आ रही है। अब बताओ क्या करूं? तो पहले प्रयास करो लड़के को भेजो नींद की गोली लाने के लिए फिर इंतजार करो कि आ जाए। लेकिन तुम्हारे इंतजार से भी वह नहीं आने वाला। लेकिन इस बीच में तुम्हें नींद आने लगेगी। इतना पक्का समझो। तो इंतजार करते-करते सो जाना और वह परम घटना घट जाएगी जो घटनी चाहिए। तुम्हारा प्रयास भी जरूरी, प्रतीक्षा भी जरूरी यद्यपि तुम्हारे प्रयास और प्रतीक्षा से कुछ भी नहीं होता।

लेकिन मेरी बात सुनकर अगर तुम कुछ भी न करोगे तब भी कुछ नहीं होगा। अतः पूरा-पूरा प्रयास करो ताकि जल्दी थक जाओ। मैं बारंबार कहता हूं पूरी समग्रता से, टोटलिटी से, सारी शक्ति लगा दें ध्यान में। इसलिए नहीं कि आपकी सारी शक्ति लगा देने से कुछ हो जाएगा। संपूर्ण शक्ति लगाने से आप जल्दी थक जाओगे, बस इतना ही होगा।

आप कुनकुनी साधना धीरे-धीरे करोगे तो सालों-साल या जन्म लग जाएंगे। आप थकोगे नहीं और तब वह प्रसाद की घड़ी कभी न आ सकेगी। जब हम

पूरी तरह निष्प्रयत्न हो जाते हैं तभी वह प्रसाद बरसता है और उस क्षण में यह भी पता चलता है कि यह प्रसाद तो सदा-सदा से बरस रहा था। हम अपने प्रयास के कारण अथवा प्रतीक्षा के कारण वंचित रहे। हम अपनी ऊहापोह में व्यर्थ ही व्यस्त थे।

प्रश्न ८ : कबीर दास कहते हैं, गगन मंडल से अमृत बरसे, भीजे दास कबीर। प्रिया गाती हैं हरि की ऊर्जा बरस रही है भीगे तन-मन सारा। इन अमृत वचनों को समझाएं?

उत्तर : समझने की नहीं, जानने की बात है- समाधिस्थ चेतना का यह अनुभव कि परमात्मा की कृपा हो रही है। उसका प्रसाद निरंतर बरस रहा है। चाहे हम जानें अथवा हम न जानें। उसके प्रति जाग्रत हों अथवा सोए- अनुकंपा तो सदा बरस ही रही है। निष्क्रिय हों तो उसे ग्रहण कर पाते हैं।

जैसे कोई पूछे- क्या हमारे खिड़की खोलने से सूरज उग जाएगा?

नहीं, हमारे खिड़की खोलने से सूरज नहीं उगता। सूरज तो अपने नियम से उगता है लेकिन अगर हमारी खिड़की बंद है तो सूरज की किरणें हमारे कमरे को रोशन नहीं कर पाएंगी। हम अंधेरे में रह जाएंगे।

बस इतना प्रयास जरूरी है- एक नकारात्मक प्रयास कि हम सूरज को कमरे के भीतर तक आने से रोकें न! हमारे प्रयत्न से सूर्योदय नहीं होता। धूप हमारी कोशिश से नहीं आती। लेकिन हमारी नकारात्मक कोशिश 'खिड़की खोलने की कोशिश' से सहयोग मिलेगा और धूप भीतर आ सकेगी। यदि हम खिड़की नहीं खोलेंगे तो सूरज बाहर खड़ा इंतजार करता रहेगा और भीतर अंधेरी रात ही रह जाएगी। प्रयास का इतना ही नकारात्मक उपयोग है, जो बाधा हमने खड़ी की है वह हम हटा दें। उसकी ऊर्जा बरस ही रही है- 'गगन मंडल से अमृत बरसे, भीजे दास कबीर।'

प्रश्न ९ : आप ध्यान प्रयोगों में सुझाव देते हैं कि समग्रता से टोटलिटी से श्रम करें पूरी निष्ठा के साथ। उससे बड़ी थकान पैदा हो

जाती है तो ऊर्जा की अनुभूति थकावट में कैसे होगी? कृपया स्पष्ट करें।

उत्तर : तुम्हारी परिधि थक जाएगी और उस कंट्रास्ट में ऊर्जामय केंद्र स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ने लगेगा। तुम्हारा शरीर थक जाएगा और भीतर की स्पिरिच्युअल एनर्जी, जो आत्मिक ऊर्जा है वह थके हुए शरीर के कंट्रास्ट में साफ दिखाई पड़ेगी। तुम्हारी आंखें जवाब दे देंगी कि अब नहीं देखना बाहर। आधा घंटा हो गया त्राटक करते-करते आंखें थक गईं। लेकिन इससे यह होगा कि तुम्हारी आंखें बंद हो जाएंगी। बाहर देखने की कोई आकांक्षा अब तुम्हारे भीतर नहीं रह गई। तुम थक गये एक ज्योति की लौ देखते-देखते। अब अंतस का आलोक देखा जा सकेगा क्योंकि आंख बाहर नहीं जाएगी। बाहरी इंद्रियों ने जवाब दे दिया। अंतस इंद्रियां सक्रिय हो सकेंगी।

ऐसा समझें घोड़े पर एक घुड़सवार है, घोड़े को वह दौड़ा रहा है और स्वयं के होने को भूल गया कि मैं सवार हूं और अपने आपको घोड़ा ही मानने लगा। हम उससे कह रहे हैं दौड़ाओ घोड़े को, तेज दौड़ाओ... और तेज दौड़ाओ। एक क्षण आएगा जब घोड़ा थक के चकनाचूर होकर गिर पड़ेगा। और उस समय उसको स्पष्ट अहसास होगा कि मैं अलग हूं। घोड़े से तादात्म्य टूटेगा।

शरीर और आत्मा के साथ कुछ ऐसा ही हुआ है। इस शरीर पर सवार हमारी चेतना भूल ही गई कि मैं चैतन्य हूं। वह अपने आप को शरीर ही मानने लगी। इसलिए ध्यान के प्रयोग में शरीर जितना थक जाए, जितनी शीघ्रता से थक जाए, उतनी ही जल्दी भीतर की चैतन्यता स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है। जैसे ब्लैक बोर्ड पर सफेद चाक से लिखा हुआ उभरकर दिखाई पड़ता है। थका हुई देह, थकी हुई इंद्रियां; मगर भीतर की चैतन्य-ऊर्जा पूरी तरह तरोताजा, स्व-स्फूर्त। एक कंट्रास्ट पैदा हो गया, तब पता चलता है यह पड़ा है शरीर नीचे, मैं तो अभी भी ज्यों का त्यों हूं भीतर। इसलिए ध्यान प्रयोगों में थकावट का भी एक मकसद है। तादात्म्य तोड़ने में उपयोगी है।

दो

ऊर्जा चिकित्सा
(डिवाइन हीलिंग)

प्रश्न १ : कृपया ऊर्जा ध्यान के द्वारा चक्र उपचार की विधि समझाएं?

उत्तर : स्वयं के उपचार हेतु यह विधि बहुत सरल है। विशेषकर साइको-सोमैटिक, मनो-शारीरिक बीमारियों के लिए जो भीतर से बाहर की तरफ आती हैं। इसे आसानी से कर सकते हैं- निर्देश सहित म्युज़िक के संग।

पहला चरण है- ऊर्जा जागरण। खड़े हो जाएं। अपने शरीर को नीचे से लेकर ऊपर तक कंपित होने दें। कंपन महसूस करते हुए भाव करें कि पैर के पंजों से होती हुई ऊर्जा सिर की तरफ जा रही है। पांच मिनट यह प्रक्रिया करने के बाद मंगल भाव से भरे हुए धीरे से बैठ जाएं। रीढ़ सीधी रखनी है, गर्दन सीधी, बिना तनाव के जितनी सीधी हो सके और फिर क्रमशः एक-एक चक्र पर संगीत के साथ भाव करना है कि ऊर्जा उस चक्र को और उस चक्र से संबंधित अंगों को स्वस्थ कर रही है।

जैसे इन्द्रधनुष में सात रंग होते हैं और संगीत में सात स्वर, ठीक वैसे ही हमारे भीतर सूक्ष्म शरीर में भी सात चक्र हैं जहां से ब्रह्म-ऊर्जा प्रवाहित होती हुई हमारे स्थूल शरीर तक पहुंचती है। वे सम्पर्क बिंदु हैं। उनकी स्थिति का ख्याल रखें। पहला मूलाधार चक्र, कमर के सबसे निचले हिस्से में, मेरुदंड के अंतिम भाग जिसे काकिक्स (मेरुपुच्छ) कहते हैं, वहां पर स्थित है।

दूसरा, जननेन्द्रिय के पीछे स्वाधिष्ठान चक्र है। तीसरा, मणिपुर चक्र नाभि के पास। चौथा, अनाहत या हृदय चक्र छाती के मध्य में। पांचवां, विशुद्ध चक्र गले में। छठवां, आज्ञाचक्र दोनों भृकुटियों के बीच में जहां तिलक लगाते हैं। और सातवां, सिर के सबसे ऊपरी हिस्से पर है सहस्रारचक्र। इन चक्रों की स्थिति सामने से और पीछे से, दोनों तरफ से स्मरण रखें। यद्यपि चक्र वस्तुतः देह के मध्य भाग में स्थित हैं। बाएं और दाएं, दोनों के ठीक मध्य में, सामने और पीछे इन दोनों के भी ठीक मध्य में। लेकिन करेस्पॉन्डिंग प्वाइन्ट्स, सम्पर्क बिंदुओं को हम सामने और पीछे दोनों तरफ से ख्याल में ले सकते हैं।

शरीर के कंपन से अभ्यास करके, बैठने के उपरांत इस जागी हुई ऊर्जा का उपयोग चक्रोपचार में करते हैं। शुरुआत पीछे से करते हैं। संगीत सुनते हुए डेढ़ मिनट तक हम भाव करते हैं कि मूलाधार चक्र स्वस्थ हो रहा है और उससे संबंधित अंग, नीचे के दोनों पैर भी स्वस्थ हो रहे हैं। क्रमशः ऊपर की ओर बढ़ते हैं, रीढ़ में चक्र की स्थिति को और ठीक से महसूस करने के लिए

एक अथवा दोनों हाथेलियों से चक्र को स्पर्श करना भी उपयोगी है। हाथ से छूते ही ऊर्जा का अहसास घनीभूत रूप से होने लगता है। कल्पनाशील साधक चाहें तो चक्र का रंग भी प्रक्षेपित करके देख सकते हैं, अथवा कोई फूल या कोई और पैटर्न जो आपको पसंद आता है, भाव करें कि उस रंग का फूल उस चक्र पर खिल रहा है।

ये जो सात रंग हैं इन्द्रधनुष के, वही हमारे चक्रों के रंग भी हैं। मूलाधार का रंग लाल है, स्वाधिष्ठान का रंग नारंगी, मणिपुर चक्र पीले रंग का, हृदय

चक्र हरे रंग का, विशुद्ध चक्र नीले रंग का, आज्ञा चक्र जामुनी रंग का और सहस्रार बैंगनी रंग का है। इन रंगों की कल्पना भी सहयोगी हो जाती है। भाव करें कि संगीत की तरंगें उस चक्र तक पहुंचकर उस चक्र को स्वस्थ कर रही हैं। ब्रह्म-ऊर्जा उस चक्र पर बरस रही है, ग्रहणशील हो जाएं, पूरी तरह पैसिव और रिसेप्टिव हो जाएं। आपको कुछ करना नहीं है केवल ग्रहणशीलता का भाव.... कि आप ऊर्जा रिसीव कर रहे हैं और उस चक्र से संबंधित अंग धीरे-धीरे स्वस्थ हो रहे हैं। उनमें जीवन-शक्ति का प्रवाह हो रहा है।

इस प्रकार करीब-करीब डेढ़-डेढ़ मिनट एक चक्र को हीलिंग देते हुए क्रमशः रीढ़ की हड्डी पर पीछे से आरोह क्रम में चलेंगे। सहस्रार पर पहुंचने के बाद सामने से उतरते हुए यानी अवरोह क्रम में फिर एक-एक चक्र की हीलिंग करेंगे। इस प्रकार इन सातों चक्रों की चिकित्सा दिव्य ऊर्जा द्वारा की जाती है।

हीलिंग के पश्चात् ध्यान में डूबें- शिथिलीकरण और आत्मस्मरण। उपचार तो एक बहाना है असली बात है ध्यान। उपचार के माध्यम से आप ग्रहणशील हो जाते हैं। ऊर्जा ग्रहण करने की क्षमता, ग्राहकता बढ़ जाती है। तब शिथिल

होना अति-आसान है और आत्म स्मरण में डूबना भी बहुत सुगम। ऊर्जा ध्यान, सच पूछो तो ध्यान का एक प्रयोग है। इलाज को उसका एक बाइ-प्रोडक्ट, उप-उत्पत्ति समझें। मुख्य उद्‌देश्य तो ध्यान ही है। यद्यपि कोई मित्र चाहें तो मात्र उपचार के लिए भी प्रयोग कर सकते हैं। मनो-शारीरिक रोगों हेतु डिवाइन हीलिंग का प्रयोग अद्‌भुत है।

प्रश्न २: कई बार लेट जाने से नींद आ जाती है। यदि ऊर्जा ध्यान में शिथिलीकरण के समय लेटने के बजाय हम बैठे ही रहें तो क्या यह भी उतना ही लाभदायक होगा?

उत्तर : व्यक्तिगत तौर पर जैसा उचित जान पड़े, वैसा करें। नींद की चिंता न करें। नींद आ जाए तो उसे भी स्वीकार कर लें। उससे लड़ें नहीं, उसका प्रतिरोध न करें। बैठकर या खड़े होकर जब आप ध्यान करेंगे- खासकर ऊर्जा ध्यान, तो थोड़ा कठिन होगा- क्योंकि यह ग्राहकता पर आधारित है। खड़े होकर या बैठकर हमारी ग्रहणशीलता कम हो जाती है। एक प्रकार का तनाव बना रहता है, सूक्ष्म तल पर अस्तित्व से लड़ाई-सी चलती रहती है। लेटने में शरीर पूर्णतः शिथिल हो जाता है। इसलिए लेटना उपयोगी होगा। आप ज्यादा संवेदनशील हो पाते हैं। ज्यादा ग्रहण कर पाते हैं। बैठकर उतनी संवेदनशील ग्राहकता संभव नहीं है। आप करके देखना, कोई अपवाद भी हो सकता है।

आप बैठकर सो तो नहीं पाएंगे लेकिन याद रखना आप ऊर्जा को ग्रहण भी ठीक ढंग से न कर पाएंगे। क्योंकि रिलैक्स नहीं हो पाएंगे। एक प्रकार का प्रतिरोध ऊर्जा के साथ निरंतर चलता रहेगा। इसलिए तो लेटने पर नींद आ जाती है क्योंकि हमारा प्रतिरोध समाप्त हो जाता है। बैठकर सोना मुश्किल है खड़े होकर सोना तो और भी ज्यादा मुश्किल। इसलिए ऊर्जा ध्यान में उपचार के पश्चात लेटकर शिथिलीकरण और आत्मस्मरण में जाएं। भले ही नींद आ जाए, कोई बात नहीं, वह नींद भी स्वास्थ्यदायी होगी।

सामान्यतः नींद भी हीलिंग में मददगार होती है। ऊर्जा ध्यान के बाद साधारण नींद न आएगी। वह एक प्रकार की सम्मोहन की दशा, 'योग निद्रा' बड़ी लाभदायक होगी। बैठकर या खड़े होकर हमारा चित्त आक्रामक बना रहता है। इसलिए लेटना ही ज्यादा उपयोगी है।

प्रश्न ३ : किसी मित्र को डिवाइन हीलिंग देते समय कौन-कौन सी

सावधानी बरतें और डिवाइन हीलिंग किस विधि दूसरे को दें?

उत्तर : सबसे पहली बात– प्रत्येक व्यक्ति एक हीलर हो सकता है। यह हम सबकी प्राकृतिक क्षमता है। कोई विशेषता या खूबी की बात नहीं है। यह कोई विशिष्ट कला नहीं हैं। हमने उपयोग नहीं किया है इस विधि का, यह अलग बात है। उपयोग करना अगर हम चाहें तो हमारे भीतर वह शक्ति छिपी हुई है और वह शक्ति शीघ्र ही अपना असर दिखाने लगेगी। जल्द ही आप उसके प्रभावों को महसूस कर सकेंगे और जिन मित्रों को आप हीलिंग दे रहे हैं वे भी असर देख पाएंगे। भीतर दिव्य ऊर्जा को व्यवस्थित करने की बात है। कुछ प्रयोगों से वैसा हो जाएगा।

दूसरी बात, याद रखें कि असली हीलर परमात्मा है। डिवाइन इनर्जी, उसकी दिव्य ऊर्जा ही चिकित्सा का कार्य करती है। हम केवल उसके माध्यम हैं। अगर अहंकार बीच में आ गया और आप सोचने लगे कि मैं हीलिंग कर रहा हूं, कोई बड़ी खूबी का काम कर रहा हूं तब हीलिंग न हो सकेगी। आप माध्यम न बन पाएंगे। बिलकुल बांस की पोली पोंगली के सामान हो जाएं, प्रभु के होंठो पर बांसुरी बन जाएं, प्रभु को अपना गीत गाने दें। आप स्वयं से शून्य हो जाएं। अहंकार से शून्य, विचारों से शून्य, मंगल भाव से, प्रार्थना भाव से भरे हुए। जिस व्यक्ति को आप हीलिंग देने जा रहे हैं उसके प्रति खूब-खूब सद्भाव से भरें।

परमात्मा को अपना काम करने दें। स्वयं को एक उपकरण की भांति मानें– प्रभु के हाथों में नाचती हुई कठपुतली; और तब पाएंगे कि आप एक बहुत अच्छे माध्यम बन गये। प्रत्येक व्यक्ति के भीतर यह क्षमता है, प्रत्येक व्यक्ति यह कर सकता है। थोड़े से आप प्रयोग करेंगे तो बात ख्याल में आ जाएगी।

तीसरी बात, यदि कोई आपके अहंकार को चैलेंज करता है, चुनौती देता है कि मेरी हीलिंग करके बताओ, उसकी हीलिंग कभी मत करना। क्योंकि वह व्यक्ति रिसेप्टिव नहीं है। वह आपसे संघर्ष करेगा, उसकी ऊर्जा शिथिल नहीं होगी। वह आपसे ऊर्जा ग्रहण नहीं करेगा। और जब उसने चुनौती दी है तो उसने आपके अहंकार को भी सजग कर दिया है। आप भी एग्रेसिव हो जाएंगे। आप कुछ करने की सोचेंगे और फिर कुछ भी न हो सकेगा। प्रयोग असफल जाएगा। तो कभी ऐसे व्यक्ति की हीलिंग मत करना। क्योंकि उसने ठान लिया है कि वह हील नहीं होगा। उसकी हीलिंग करने से कोई लाभ नहीं।

स्मरण रखिए कि हीलिंग तो एक बहुत ही प्रेमपूर्ण माहौल में, भाईचारे की मनस्थिति में, बड़े सद्भाव, सिम्पैथी व सहानुभूति के शांत, आशापूर्ण माहौल में ही संभव है। हीलर और हीलिंग लेने वाला इन दोनों के बीच में कोई संघर्ष नहीं होना चाहिए। एक हार्दिक तालमेल होना चाहिये, प्रेम-ऊर्जा का प्रवाह होना चाहिये तो ही चिकित्सा संभव है, अन्यथा हीलिंग नहीं हो सकती।

चौथी बात, हीलिंग का समय सुबह चुनें तो अच्छा। उस समय आप ताजे होते हैं। अभी-अभी नींद पूरी हुई है, चित्त शांत है, शून्य है उस समय हीलिंग करना ज्यादा आसान है। कोई व्यक्ति सोचे कि शाम को थके-मांदे दिनभर के काम-काज से लुटे-पिटे से किसी की हीलिंग करने बैठेंगे तब मुश्किल जाएगी। क्योंकि आप स्वयं ही अपनी सारी ऊर्जा दिन भर के क्रिया-कलापों में खो चुके हैं। इसलिए जब आप सुबह ताजगी से भरे हुए, प्रसन्न, ऊर्जावान हैं, वह समय उपयोगी है। स्नान करने के बाद हीलिंग दें और जो व्यक्ति हीलिंग ले रहा है वह भी स्नान किया हो तो बेहतर। आप स्वयं ताजे कपड़े पहनें और जो व्यक्ति हीलिंग ले रहा है वह भी।

पांचवीं बात, ऐसा स्थल चुनें जहां स्वच्छ हवा आती हो। खिड़की-दरवाजे खोलकर रखें। मन शांत हो। कमरे में कोई फूल या कोई अगरबत्ती, अपनी पसंद की कोई खुशबू, रूम स्प्रे का इस्तेमाल करें। एक विशिष्ट भावदशा आपकी बन जाए।

छठवीं बात, जिन गुरु या इष्ट देवता के प्रति आपकी श्रद्धा है उनकी तस्वीर या मूर्ति उस कमरे में हो।

सातवीं, जिस कमरे में आप हीलिंग करने जा रहे हैं, उस कमरे को उसी कार्य के लिए सुरक्षित रखें। छोटा हो कमरा और सिर्फ वहां पर हीलिंग का ही काम हो तो वह कमरा धीरे-धीरे चार्ज हो जाता है। ऐसे ऊर्जावान कक्ष में हीलिंग देना सरल है। यदि वहां अन्य गतिविधियां भी चलती हैं तो थोड़ा मुश्किल हो जाता है, बहुत प्रकार की तरंगों के प्रभाव वहां छूट जाते हैं।

आठवीं, हीलिंग देने के पहले थोड़ा-सा व्यायाम कर लें, अपने भीतर की शक्ति को जगा लें। पांच मिनट भस्त्रिका प्राणायाम या कपालभाति क्रिया कर लें, अपनी ऊर्जा को ऊर्ध्वगामी कर लें। कुछ मिनट शांत, शून्य, ध्यानपूर्ण हो जाएं। साक्षी हो जाएं स्वयं के। और जिन मित्रों को समाधि का ज्ञान है वे सुरति और निरति का स्मरण करें। परमात्मा के संगीत को सुनें, उसके आलोक को

देखें। कुछ मिनट उसमें डूबने के बाद फिर हीलिंग की प्रक्रिया शुरू करें।

नौवीं, जिस व्यक्ति को आप हीलिंग दे रहे हैं उसको लिटा दें। वह आराम से हो, सुविधापूर्ण हो।

दसवीं, यदि रोगी अपरिचित हो तो उसे स्पर्श न करें। व्यक्ति का आभामंडल शरीर से करीब छह इंच दूर तक फैला हुआ होता है। आप तीन-चार इंच दूर अपनी हथेली को रखें वहां से भी वही प्रक्रिया हो सकेगी जो छूने से होती है। सामान्यत: किसी के छूने से हम चौंकते हैं, सजग हो जाते हैं और जो व्यक्ति हमें छू रहा है उससे एक प्रकार का संघर्ष व प्रतिरोध शुरू हो जाता है। जिस प्रकार की सभ्यता हमने विकसित की है उसमें स्पर्श अच्छी बात नहीं मानी जाती। स्पर्श का अर्थ या तो कामुकता से या हिंसा से होता है। पिता ने चांटा मारा बच्चे को। पिता का यही स्पर्श बच्चे ने रिसीव किया है। स्पर्श के साथ-साथ हिंसा, क्रोध जुड़ गये या फिर स्पर्श के साथ कामवासना जुड़ गई। और इन दोनों ही स्थितियों से व्यक्ति बचना चाहता है। दोनों ही आक्रमण जैसे लगते हैं।

अत: हीलिंग देते हुए सामान्यत: स्पर्श न ही करें। जब तक बहुत नजदीकी न हो, जब तक वह व्यक्ति बिलकुल शिथिल न हो और स्पर्श के लिए तैयार न हो। तो इस बात को आप परख लें। क्योंकि जैसे ही आप स्पर्श करते हैं वह व्यक्ति चौंककर सजग हो जाता है। ग्रहणशील नहीं रह जाता, वह अपना बचाव करने लगता है। यह घटना बहुत सूक्ष्म तल पर घटती है- अनजाने में। अचेतन में स्पर्श से हम बचना चाहते हैं। इसलिए स्पर्श न करें। तीन या चार इंच दूर से भी आप हीलिंग दे सकते हैं। वह उतनी ही प्रभावी होगी।

ग्यारहवीं बात, हीलिंग की शुरुआत प्रार्थना से करें, मंगल भाव से करें। वह व्यक्ति भी प्रार्थना की भावदशा में हो, आप भी प्रार्थना की भाव दशा में हों। दोनों मिलकर परमात्मा से प्रार्थना करें कि हम एक छोटा सा प्रयोग करने जा रहे हैं- इस प्रयोग में हमारी मदद करें। हम आपके माध्यम बन रहे हैं, आपकी ऊर्जा हमसे बहने दें। इस मंगल भावना एवं प्रार्थना के संग, करुणा से भरे हुए हीलिंग शुरू करें। यदि उसका कोई विशिष्ट अंग रुग्ण है तो उस अंग के पास अपनी हथेलियां रखकर भाव करें कि प्रकाश ऊर्जा या ऊष्मा आपकी हथेलियों से निकलकर उसके शरीर की ओर जा रही है। आपके आभामंडल से

निकलकर उस व्यक्ति के 'ऑरा' में प्रवेश कर रही है। जो मित्र निरति समाधि कर चुके हैं उनके लिए तो यह कल्पना नहीं, वास्तविकता है। अंतस आलोक में डूबकर अपने आभामंडल का स्मरण करें और भाव करें कि आपके आभामंडल से ऊर्जा व्यक्ति के आभामंडल में प्रवेश कर रही है।

यदि आपको स्पष्ट ऊर्जा का अहसास न हो तो अपनी दोनों हथेलियों को एक मिनट रगड़ लें, गरमाहट से भर लें या दोनों हाथों को जोर-जोर से झटक लें ताकि आपके हाथों में ऊर्जा आ जाए। आपकी हथेलियां जीवंत हो उठें; तब सफलता की संभावना अधिक हो जाएगी। निरंतर स्मरण रखें कि आप केवल एक माध्यम हैं। दिव्य ऊर्जा आपके माध्यम से प्रवाहित हो रही है, बह रही है। जितनी देर तक आपका भाव हो हीलिंग की इस प्रक्रिया को करें उसके बाद उस व्यक्ति को धन्यवाद दें; उसने आपको एक मौका दिया है। उसके प्रति अनुग्रह से भरें। परमात्मा के प्रति भी अनुग्रह से भरें, धन्यवाद से भरें कि आपको एक मौका मिला, आप माध्यम बन सके। यह न सोचें कि आपने उस व्यक्ति पर कोई उपकार किया है, उसकी कोई भलाई की है। बल्कि यही ख्याल आपके मन में हो कि उसने आपको एक खूबसूरत मौका दिया था, अपना प्रेम शेयर करने का, अपनी करुणा को बांटने का, परमात्मा की ऊर्जा का माध्यम बनने का।

हीलिंग समाप्त करने के बाद अच्छा हो एक बार आप स्नान कर लें। अपनी दोनों हथेलियों को जोर-जोर से झटक लें या पूरे शरीर को कंपित कर लें। जैसा कि ऊर्जा ध्यान के प्रथम चरण में या कुंडलिनी ध्यान के प्रथम चरण में किया जाता है। दो-तीन मिनट अपने पूरे शरीर को कंपा लें। ताकि उस बीमार व्यक्ति से कोई नकारात्मक ऊर्जा आपकी तरफ आ गई है तो वह साफ सुथरी हो जाए। उस कमरे को भी एक बार साफ कर लें, ताजी हवा वहां आती रहे। अगरबत्ती या फूल वहां पर रखें उसकी खुशबू वहां फैले ताकि कोई नकारात्मक ऊर्जा तरंगें अगर वहां हों तो वे बाहर निकल जाएं। इस प्रकार से हीलिंग का यह प्रयोग किया जाता है व्यक्तिगत रूप से।

सामूहिक रूप से भी हीलिंग की जाती है। उसके दो तरीके हैं। एक तरीका रुग्ण व्यक्ति को लिटाकर तीन व्यक्ति उसकी सामूहिक चिकित्सा करें। एक व्यक्ति उसके सिर के पास हाथ रख कर बैठ जाए, दूसरा व्यक्ति उसके पैरों के दोनों तलवों के पास अपनी दोनों हथेलियां रखकर और तीसरा व्यक्ति या

तो बीमार अंग पर अथवा उसके पेट पर नाभि के ऊपर अपनी दोनों हथेलियां रखकर बैठ जाए। ये तीनों व्यक्ति बैठकर एक मिनट भस्त्रिका प्राणायाम करें। फिर शांत हो जाएं, शिथिल हो जाएं, साक्षी भाव में डूबें, बांस की पोली पोंगरी हो जाएं। ऊर्जा को प्रवाहित होने दें और यदि सुरति समाधि और निरति समाधि का उन्हें ज्ञान है तब प्रभु के संगीत और प्रभु के आलोक में डूबें और भाव करें कि आपकी हथेली के आभामंडल से होती हुई ऊर्जा उस व्यक्ति के शरीर में प्रवाहित हो रही है और वह स्वस्थ हो रहा है। प्रार्थना भाव के साथ अनुग्रह से भरे हुए पांच-सात मिनट इस भाव दशा में डूबे रहें। इस विधि से बहुत से लोगों की चिकित्सा एक साथ की जा सकती है। पांच-सात मिनट एक व्यक्ति को देना होगा। सामूहिक चिकित्सा की एक और विधि है जब ओशो स्वयं ध्यान शिविर लिया करते थे तब चिकित्सा की ये तीनों विधियां इंडिविज्युअल

डिवाइन हीलिंग और ग्रुप डिवाइन हीलिंग के दोनों रूपों का ध्यान शिविरों में उपयोग किया जाता था।

तीसरी विधि सामूहिक चिकित्सा की इस प्रकार है- एक मुख्य चिकित्सक बीच में एक टेबल या कुर्सी रखकर उस पर खड़ा हो जाता है। उसके चारों तरफ रुग्ण लोगों का समूह जिन्हें हीलिंग लेनी है वे बैठ जाते हैं और उनके चारों तरफ एक गोल घेरा बनाकर वे लोग जो हीलिंग में मदद पहुंचाना चाहते

हैं वह सब खड़े हो जाते हैं। चारों तरफ कीर्तन होता है। कीर्तन में सब लोग नाचते हैं, झूमते हैं, हीलिंग देने वाले भी और हीलिंग लेने वाले भी। खूब उत्सव प्रसन्नता के माहौल में नाचते, झूमते गोल-गोल घूमते हुए और यह भाव करते हैं कि इन मित्रों की हीलिंग हो जाए, इन मित्रों के शरीर, मन स्वस्थ हो जाएं। बीच में थोड़ी देर रुककर कीर्तन बंद कर दोनों हाथ आकाश की ओर उठाते हैं। भाव करते हैं ऊपर आकाश से ऊर्जा बरस रही है। स्वयं के शरीर को ऊर्जा से भरा हुआ महसूस करते हैं और फिर दोनों हाथ उन रुग्ण लोगों की तरफ हथेलियां नीची करके भाव करते हैं कि यह ऊर्जा उन लोगों की तरफ जा रही है और उनको स्वस्थ कर रही है। इस प्रक्रिया को दो-तीन बार दोहराते हैं। सामूहिक चिकित्सा की यह विधि भी बहुत कारगर है।

चिकित्सा का चौथा प्रयोग भी होता है जिसको डिस्टेंट हीलिंग कहते हैं। इसमें उस व्यक्ति का फोटोग्राफ रखना या उसकी स्पर्श की हुई कोई चीज जैसे रुमाल या उसका कोई वस्त्र... इस तरह की कोई चीज उपयोगी होगी; उस व्यक्ति की ऊर्जा किसी भांति वहां मौजूद हो। इस व्यक्ति को आपने यदि कहीं पहले देखा है तो उसका फोटोग्राफ बहुत उपयोगी हो जाएगा। और कभी-कभी किसी व्यक्ति को आप नहीं भी जानते हैं तो उसको भी चित्र के द्वारा हीलिंग भेज सकते हैं। प्रक्रिया वही होगी स्नान करके सुबह-सुबह प्रार्थना भाव में डूबकर व्यायाम और प्राणायाम करने के उपरांत साक्षी भाव में, समाधि में स्थिर होकर उस व्यक्ति के फोटोग्राफ की तरफ देखें। आप चाहें तो अपने आज्ञा चक्र पर अपनी ऊर्जा को फोकस करके उस व्यक्ति के फोटोग्राफ के आज्ञा चक्र पर ऊर्जा को प्रेषित करें। या चाहें तो दोनों हथेलियों से भाव करें कि ऊर्जा जा रही है। उसके फोटोग्राफ के माध्यम से उस व्यक्ति तक पहुंच रही है और उसकी चिकित्सा हो रही है।

इस चौथे प्रयोग के लिए एक विशेष समय नियुक्त किया जाए। उस व्यक्ति को भी पता हो कि आप इस समय उसकी हीलिंग कर रहे हैं। तो टेलीफोन से इस बात का समय पहले से तय होना चाहिए। वह व्यक्ति उस समय स्नान करके ताजे वस्त्र पहनकर ध्यानपूर्वक प्रार्थना भाव में डूबा हुआ शिथिल और शांत होकर ऊर्जा को ग्रहण करने की भावदशा में हो। पहले से समय तय कर लें कि 15 मिनिट यह प्रयोग चलेगा उस 15 मिनिट में वह बहुत ग्रहणशील हो जाए। वह यही कल्पना करें कि हीलर उसके पास बैठ कर ही उसको

हीलिंग दे रहा है। यह डिस्टेंट हीलिंग, दूर से दिव्य चिकित्सा का एक प्रयोग है।

अंतिम बात, इसे केवल एक सहयोगी चिकित्सा के रूप में लें, मुख्य इलाज जो चल रहा है, उसे चलने दें। स्वास्थ्य में सुधार आने पर डॉक्टर की सलाह के अनुसार दवा अथवा उसके डोज में परिवर्तन करें।

प्रश्न ४ : एक मित्र ने पूछा है कि 'जिन खोजा तिन पाइयां' नामक प्रवचन माला में किसी साधक ने ओशो से पूछा कि कुंडलिनी जागरण में अगर खतरा है तो फिर उसे जगाया ही क्यों जाए? ओशो ने उत्तर दिया खतरा तो बहुत है इसलिए निमंत्रण है, चुनौती है। एक दूसरी प्रवचन माला 'झरत दसहुं दिस मोती' में ओशो ने कहा है कि भीतर की शक्ति से छेड़खानी मत करना, कुंडलिनी जगाना खतरनाक है। ओशो के इन दो वक्तव्यों के विरोधाभास को स्पष्ट करने की अनुकंपा करें।

उत्तर : निश्चित रूप से जब भी कोई नई घटना घटती है चाहे वह ऊर्जा का जागरण हो, खतरे तो हैं। जहां लाभ होने की संभावना है वहां हानि होने की भी संभावना है। मस्तिष्क में इतने विचार चल रहे हैं, जितनी ऊर्जा मस्तिष्क में है वही ऊर्जा लोगों को अशांत और बेचैन किये हुए है। अगर और ज्यादा ऊर्जा ऊर्ध्वगमन करके ऊपर पहुंच जाए–यह भी संभव है मनुष्य और ज्यादा विक्षिप्त हो जाए और ज्यादा बेचैन और उत्तेजित हो जाए बजाय शांत होने के। ऊर्जा जागरण के पहले इसलिए भावनाओं का शुद्धिकरण यानी अंतस की सफाई जरूरी है। अकेली ऊर्जा का जागना नुकसानदायी भी हो सकता है। विद्युत ऊर्जा है इससे अभी पंखा चल रहा है। विद्युत के बल्ब जल रहे हैं, इसका उपयोग हो रहा है। लेकिन इससे इलेक्ट्रिक करेंट और शॉक भी लग सकता है। और मृत्यु भी हो सकती है।

अत: ऊर्जा का हम कैसा उपयोग करेंगे हम पर निर्भर है। अकेला ऊर्जा जागरण खतरे में ले जा सकता है। और बहुत लोगों को ले भी गया है। मस्त नाम आपने सुना होगा; सूफी कहते हैं दीवाने हो गए हैं, मस्त हो गये हैं। पागलों जैसे हो गये हैं, ध्यान करते–करते। सच पूछो तो इन्होंने अपनी ऊर्जा को जगा लिया और यह शांत नहीं हो पाए। अब वह ऊर्जा एक प्रकार की दीवानगी, एक प्रकार की मस्ती बन गई बजाय स्वास्थदायी होने के, बजाय शांत और समाधिस्थ करने के वह एक प्रकार के पागलपन में ले गई– ध्यान

का पागलपन।

'जिन खोजा तिन पाइयां' में ओशो ने जो कहा है और 'झरत दसहुं दिस मोती' में जो कहा है, याद रखना इनके बीच में दस साल का फासला है। 'जिन खोजा तिन पाइयां' प्रवचनमाला के वक्त ओशो नये प्रयोग करवा रहे थे। ऊर्जा जागरण के प्रयोग करवा रहे थे लेकिन उसके परिणामों को देखकर दस साल बाद जो कह रहे हैं वह हमारे लिए ज्यादा उपयोगी है। दस साल के अनुभव भी उसमें जुड़ गये। याद रखना जब कोई बुद्ध पुरुष कुछ कहते हैं, शुरुआत में वह स्वयं को आधार मान कर कहते हैं वह सोचते हैं जैसा मैं हूं वैसे ही सब होंगे। बहुत सी बातें ऐसी बता देते हैं जो लोगों के उपयोग की नहीं हैं। लेकिन वह तो धीरे-धीरे पता चलता है कि जिस-जिस अवस्था में मैं हूं वैसी अवस्था में लोग नहीं हैं और सब तो उनके लिए खतरनाक भी हो सकता है।

ओशो ने 'झरत दसहुं दिस मोती' में जो कहा है कि कुंडलिनी जगाना खतरनाक है और इसलिए ओशो ने कुंडलिनी ध्यान जो विधि बनाई है उसका नाम मात्र ही है कुंडलिनी ध्यान। उसका उस प्रकार के ऊर्जा जागरण से संबंध नहीं है जैसा कि परम्परागत रूप से समझा जाता है। आपने जिस प्रवचन का उल्लेख किया 'झरत दसहुं दिस मोती' का मुझे स्मरण आता है; उसमें ओशो ने यह भी कहा है कि कुंडलिनी ध्यान तो मैंने नाम यूँ ही रख दिया है कुछ तो नाम रखना था। कोई शब्द तो चुनना था।

शब्द मैं खुद तो गढ़ूंगा नहीं। इसलिए पुराने शब्दों का ही उपयोग करना होगा। इसलिए कुंडलिनी ध्यान नाम रख दिया है। लेकिन परम्परागत ढंग से कुंडलिनी से जो समझा जाता है वह मेरा अर्थ नहीं है। मैं चाहता हूं तुम्हारी ऊर्जा नृत्य बने, तुम्हारी ऊर्जा नाचे, तुम आनंदमग्न होओ, तुम अपने भीतर डूबो, झूमो, संगीत में डूबो, शांत होओ, साक्षी में डूबो। ऊर्जा अगर जाग जाए तो उपद्रव भी हो सकता है।

मैं एक चुटकुला पढ़ रहा था एक बच्चा दूसरे से पूछ रहा है कि बताओ जब रावण ने कुंभकर्ण को छह महीने के बाद नींद से जगाया और कुंभकर्ण ने जाकर राम की सेना पर आक्रमण किया तो वहां अचानक भगदड़ क्यों मच गई? दूसरे बच्चे ने कहा कि कुंभकर्ण छह महीने से नहाए हुए जो नहीं थे।

अचानक ऊर्जा जाग जाएगी बिना नहाई हुई बिना शुद्धिकरण के तो भगदड़ तो मचने वाली है। इसलिए ऊर्जा जागरण के साथ-साथ शुद्धिकरण पर बहुत

जोर है। इसलिए ध्यान के प्रयोगों के पहले चित्त का शुद्धिकरण। ध्यान सूत्र नामक प्रवचनमाला में ओशो ने शरीर का शुद्धिकरण, चित्त का शुद्धिकरण और ह्दय का शुद्धिकरण- ये तीन प्रवचन दिये हैं। और कहा है कि इसके बाद ही कोई व्यक्ति ध्यान में डूबे तो ध्यान का सदुपयोग हो पाता है। ऊर्जा का सदुपयोग हो पाता है।

निश्चित ही खतरा तो है। जहां लाभ है वहां नुकसान का डर भी है। तो समझपूर्वक ही अपनी ऊर्जा को जगाना। उसके पहले अपने शरीर को, मन को, ह्दय को शुद्ध कर लेना, शून्य कर लेना। फिर यह ऊर्जा तुम्हें परम आनंद की तरफ ले जाएगी। नहीं तो बुद्धत्व की तरफ जाने के बजाय विक्षिप्तता की तरफ भी जा सकते हैं। तो ओशो की इस बात को बहुत महत्व देना क्योंकि दस साल के अनुभव के बाद उन्होंने यह वक्तव्य दिया है।

दूसरी बात यह भी याद रखना कि दोनों वक्तव्य अलग-अलग प्रश्नकर्ताओं को अलग-अलग लोगों को दिये गये हैं। हर व्यक्ति का सत्य अलग होता है। किसी अशुद्ध व्यक्ति के लिए कहा होगा कि ऊर्जा की छेड़खानी मत करना, ऊर्जा को जगाना खतरनाक है। किसी बहुत सरल, सहज व्यक्ति को कहा होगा कि ऊर्जा को जगाओ, खतरा है तो भी लो उसको चुनौती की तरह, एक निमंत्रण की तरह स्वीकार करो। तो किस व्यक्ति से कौन सी बात कही जा रही है, बाद में किताब में यह तो नहीं रह जाता कि किससे कहा गया था. .. सिर्फ वक्तव्य रह जाते हैं। जैसे डॉक्टर अलग-अलग वक्तव्य देता है- किसी मोटे मरीज से वह कहे कि खाना कम करो, थोड़ा खाना खाओ, खूब व्यायाम करो, चार मील रोज पैदल चलो और किसी ह्दय के मरीज से कहे कि बिस्तर से हिलना मत, चलना फिरना बिल्कुल नहीं। और किसी दुबले-पतले मरीज से कहे कि खूब खाना खाओ। और बाद में यह वक्तव्य रह जाए और किससे कहे गये थे इसलिए कोई भी वक्तव्य को आउट आफ कन्टैक्सट, संदर्भ के बाहर मत करना। हर वक्तव्य किसी के संदर्भ में दिया गया है किसी खास व्यक्ति के लिए कहा गया है।

अंततः यह भी याद रखना कि सदा एक जीवित सद्‌गुरु की जरूरत होती है। यद्यपि किताबों में जो लिखा है, शास्त्रों में, वे भी सद्‌गुरु के वचन हैं लेकिन वे किससे कहे गये हैं, किस स्थिति में कहे गये हैं, वह संदर्भ उसमें

नहीं है और इसलिए हर साधक को सदा ही एक जीवित गाइड चाहिए। जैसे मेडिकल साईंस की किताब पढ़कर स्वयं का इलाज नहीं किया जा सकता, सर्जरी की किताब पढ़कर खुद का ऑपरेशन नहीं किया जा सकता। एक जीवित डाक्टर चाहिए। ठीक उसी प्रकार अध्यात्म में सदा ही एक जीवित सद्गुरु रूपी मार्गदर्शक चाहिए।

प्रश्न ४ : प्राणिक चिकित्सा के संबंध में कुछ बताइए?

उत्तर : इस बारे में डॉ. बृजेश जी काफी अनुभवी हैं, अभी थोड़े दिन पहले ही उनका एक लेख भी ओशोधारा पत्रिका में प्रकाशित हुआ है। उसे पढ़ लीजिएगा। व्यक्तिगत तौर पर उनसे मिलकर आप और अच्छे से प्रयोग करना सीख सकते हैं।

(नोट- पाठकों की सुविधा हेतु वह लेख यहां पुनः प्रकाशित किया जा रहा है।)

प्राणिक चिकित्सा

–डा. बृजेश शर्मा

प्राणिक चिकित्सा एक उपचार विधि है, जिसके द्वारा हम प्राणशक्ति के लय को पुनः स्थापित करते हैं। प्राण का अर्थ है वह शक्ति, जो जीवन को गतिमान रखती है। हमारे चारों ओर ऊर्जा का भंडार है। प्राण इस ऊर्जा का वह अंश है जो हमारे जीवन को संचालित करता है।

जब शरीर में इस ऊर्जा की कमी हो जाती है तब हम रोगों का शिकार होने लगते हैं। अगर हम प्राकृतिक नियमों का पालन करते हैं तो प्राण ऊर्जा का संचार ठीक ढंग से होता है और अगर हम उनका उल्लंघन करते हैं तो शरीर पहले उसको अपनी संचित शक्ति द्वारा पूर्ति करता है। अगर हम नियमों
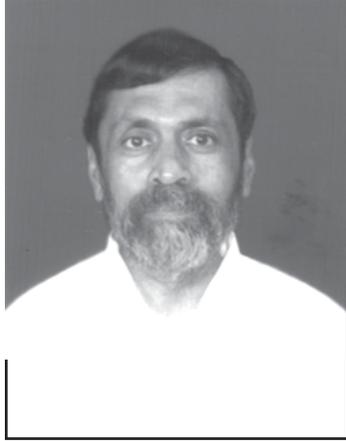
का उल्लंघन बार बार करते हैं तो वह शक्ति कमजोर पड़ जाती है और हम बीमारियों का शिकार होने लगते हैं।

प्राणिक चिकित्सा में हम शरीर को स्पर्श नहीं करते। इसमें प्राण ऊर्जा पर काम किया जाता है। यह अत्यन्त सरल क्रिया है। दो या तीन दिन में इसे सीखा जा सकता है और अपने व अपने परिवार का उपचार कर सकते हैं। इसके द्वारा हम शारीरिक बीमारियों को भौतिक शरीर में आने के पहले ही इलाज कर सकते हैं।

भौतिक शरीर एवं ऊर्जा शरीर

हमारा शरीर दो भागों से बना है – एक जो हमें दिखाई देता है, दूसरा जो हमें दिखाई नहीं देता है। जो हमें दिखाई देता है, जिसे हम छू सकते हैं, जिससे हमें तकलीफों का पता चलता है, उसे भौतिक शरीर कहते हैं। दूसरा शरीर, जो दिखाई नहीं देता हैं, जो आभा मंडित है, उसे ऊर्जा शरीर कहते हैं। यह भौतिक शरीर से चार-पांच इंच बाहर की ओर फैला होता है।

'प्राणशक्ति उपचार' एक प्राचीन विज्ञान एवं कला है।

प्राणशक्ति का स्त्रोत-

प्राण या प्राणशक्ति के मुख्यत: तीन स्त्रोत हैं – पहला सौर प्राणशक्ति जो पूरे ब्रह्माण्ड में व्याप्त है- इसे कॉस्मिक शक्ति के नाम से जाना जाता है। दूसरा, वायु प्राणशक्ति और तीसरा, भूमि प्राणशक्ति।

सौर प्राणशक्ति हमें सौर मंडल से प्राप्त होती है। इसे धूप में खड़े रहकर प्राप्त किया जा सकता है। जो प्राण वायुमंडल से प्राप्त होता है, उसे वायुप्राण या प्राणवायु कहते हैं। श्वसन-क्रिया द्वारा इसे फेफड़ों में ग्रहण किया जाता है। 'प्राणायाम' द्वारा वायु प्रणाली को ग्रहण करने की एक विशेष प्रणाली है। भूमि

से पाई जाने वाली प्राणशक्ति को हम भू-प्राणशक्ति कहते हैं। नंगे पैर चलने में यह विशेष रूप से प्राप्त की जा सकती है। यह भी प्राणशक्ति को बढ़ाने का एक सरल माध्यम है।

प्राणशक्ति उपचार -

प्राणशक्ति का कम होना या इसका अत्याधिक होना, दोनों ही शरीर के लिए नुकसानदेह हो सकता है। प्राणशक्ति उपचार से प्राणशरीर पर काम किया जाता है। जिस व्यक्ति के पास प्राणशक्ति अधिक होती है उसके पास बैठना सुखद होता है और इसकी कमी वाले व्यक्ति के पास बैठने से उदासी महसूस होती है।

कुछ वृक्ष भी प्राणशक्ति प्रदान करते हैं। इसके विपरीत, कुछ पेड़ प्राणशक्ति खींच लेते हैं। कोई भी व्यक्ति अपनी जाग्रत अवस्था में, पेड़ों को अपने हाथों में लेकर प्राणशक्ति को अनुभव कर सकता है।

प्राणशक्ति उपचार में हम प्राणशक्ति को पूरे शरीर में व्यवस्थित करते हैं, ताकि पूर्ण स्वास्थ्य लाभ हो सके।

आभा मंडल

व्यक्ति का शरीर एक आभा मंडल से ढका होता है जो एक भौतिक शरीर की तरह होता है। प्राणशक्ति उपचार में इसको महसूस कर इस पर उपचार किया जाता है। इसको दिव्यदर्शियों द्वारा देखा गया है। व्यक्ति अपनी दिव्यशक्तियों को बढ़ाकर इसे देख सकता है। प्राणशक्ति उपचार में हमें हाथों में महसूस करना सिखाया जाता है।

प्राणाक्ति उपचार के दो
मूल सिद्धान्त हैं-

1. **स्व-उपचार की शक्ति**- प्रत्येक व्यक्ति के भीतर प्रकृतिगत स्व-उपचार

की शक्ति होती है। हम दवाओं के सेवन के बिना भी सर्दी, जुकाम, साधारण बुखार, हल्की चोट आदि में दो-चार दिनों में ठीक हो सकते हैं। हमारा शरीर अपनी प्राकृतिक शक्ति द्वारा अपना उपचार कर लेता है।

2. **प्राण ऊर्जा या जीव शक्ति**- जीवित रहने के लिए शरीर में प्राण ऊर्जा या जीवन शक्ति आवश्यक है। प्रभावित अंगों में प्राण ऊर्जा अव्यवस्थित हो जाती है, या प्राणशक्ति कम हो जाती है तो उपचार द्वारा गंदगी को निकालकर प्राणिक हीलिंग द्वारा इसे व्यवस्थित किया जाता है, ताकि शरीर में प्राण ऊर्जा का शरीर में सामान्य संचार हो जाये। प्राणिक हीलिंग में जब प्राण ऊर्जा शरीर के प्रभावित अंग या पूरे शरीर में दी जाती है तो उपचार गति कई गुना बढ़ जाती है।
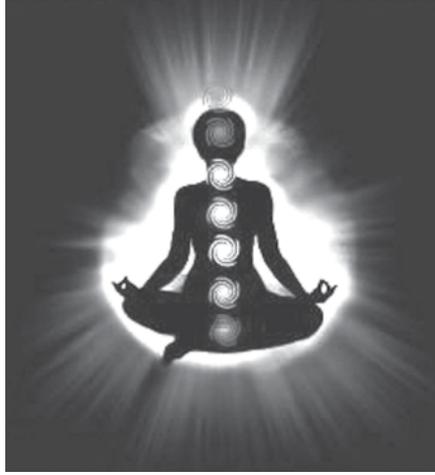
चमत्कारिक उपचार और कुछ नहीं बल्कि शरीर को स्वयं उपचार गति को ही बढ़ाना है। प्राणिक हीलिंग प्राकृतिक नियमों पर ही आधारित है।

प्राणशक्ति- उपचार से क्या किया जा सकता है?

1. तेज बुखार से पीड़ित व्यक्ति या बच्चे का तापमान, कुछ ही घंटों में कम किया जा सकता है और दो दिनों में पूर्ण लाभ प्राप्त किया जा सकता है।
2. सिर दर्द, गैस, दांत, मांसपेशियों के दर्द से छुटकारा पाया जा सकता है।
3. सामान्य सर्दी-जुकाम, दस्त आदि में कुछ घंटों में लाभ उठाया जा सकता है।

4. तन, मन दोनों प्रकार की बीमारियों में उपयोगी है। आंख, गुर्दे, हृदय रोगों में भी प्रभावकारी है। इन बीमारियों में लाभ कुछ महीनों बाद ही देखा जा सकता है।
5. किसी प्रकार की उपचार प्रणाली– एलोपैथी, आयुर्वेद या होमियोपैथी के साथ, इसे करने से लाभ शीघ्र प्राप्त किया जा सकता है।
6. आध्यात्मिक प्रगति में यह अत्यधिक सहायक है।

कौन प्राणिक हीलिंग सीख सकता है?

कोई भी स्वस्थ व्यक्ति, जो सामान्य बौद्धिक क्षमता, ध्यान केन्द्रित कानों की सामान्य योग्यता एवं खुली प्रकृति का हो, वह आसानी से सीख सकता है। इसमें कुशलता प्राप्ति के लिए दैनिक अभ्यास एवं समय की जरूरत होती है।
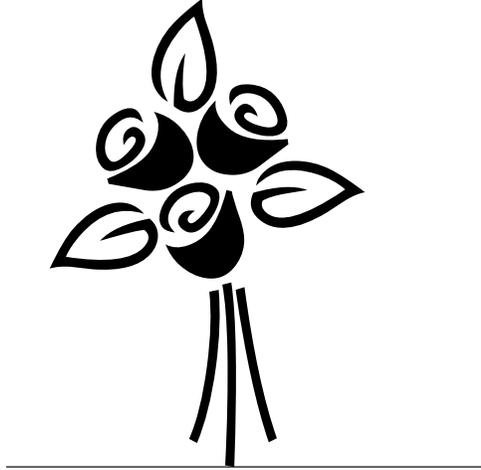
तीन
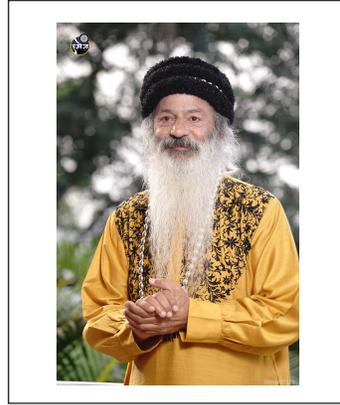
संकल्प शक्ति

प्रश्न १ : एक संकल्पवान व्यक्ति बनने के लिए मुझे किन-किन सोपानों पर कदम रखने होंगे?

उत्तर : सात सोपानों की चर्चा मैं आपसे संक्षेप में करना चाहूँगा। पहला सोपान है भाव और विचार का सन्तुलन- एक समझ हमारे भीतर हो। निश्चित रूप से जब हम कोई यात्रा शुरू करेंगे, जो समझ हमारी होगी वह प्राथमिक समझ भी हो सकती है। एक आरंभिक समझ। बहुत परिपक्व समझ तो वह नहीं होगी। परिपक्व समझ तो अनुभव के बाद ही आएगी। लेकिन शुरुआत में भी थोड़ी सी समझ चाहिए। उस समझ में सम्यक् विचार हों और सम्यक् भाव का सन्तुलन हो। यदि किसी व्यक्ति ने केवल भावावेग में आकर कोई निर्णय लिया वह भी गलत हो जाएगा। और यदि किसी व्यक्ति ने केवल विचारों से प्रेरित होकर निर्णय लिया वह भी गलत हो जाएगा। बिना सोचे-विचारे निर्णय लिया तो भी गलत और अति सोच विचार किया, तो निर्णय ही नहीं हो पाएगा। इसलिए अक्सर ऐसा होता है कि बहुत विचारवान आदमी, बहुत बुद्धिमान आदमी संकल्पहीन हो जाता हैं। तो दो अतियाँ हुईं, एक हुई बिना विचारे निर्णय करना और दूसरी- अति विचार करना, उसमें निर्णय ही नहीं हो पाता। कीर्क गार्ड के बारे में आपने सुना होगा डेनमार्क का प्रसिद्ध दार्शनिक और विचारक हुआ। हमेशा संशय में डोलता रहता था यह करूँ कि वह करूँ। उसकी प्रसिद्ध किताब का शीर्षक है 'आइदर और'- यह या वह। यही उसके पूरे जीवन की पद्धति थी, वही उसके जीवन की शैली थी; यह करूँ कि वह करूँ। कार ड्राइव करता चौराहे पर जाकर खड़ा हो जाता। बैठकर अपना सिर खुजा रहे हैं बाएँ सड़क पर जाएँ कि दाहिने जाएँ या सीधे निकल जाएँ या जरूरत ही क्या है, लौट ही क्यों न जायें। पीछे ट्रैफिक जाम हो गया उसकी परवाह ही नहीं। वे कह रहे हैं रुको, अभी थोड़ा सोचने तो दो, इतनी जल्दी कहीं तय होता है। धीरे-धीरे ट्रैफिक पुलिस वाले उसकी कार को पहचानने लगे। जहाँ उन्होंने देखा कि कीर्क गार्ड की गाड़ी आ रही है, पुलिस वाला आकर उसे धक्का मारकर कहीं भी भेज देता। तुम यहाँ से तो टलो, जहाँ तुम्हें जाना है जाओ। वह कहता भई रुको, मुझे विचार तो करने दो। तुम बाद में विचार कर लेना यहाँ ट्रैफिक जाम मत करो। कीर्क गार्ड जिंदगी में कभी कुछ निर्णय नहीं कर पाता था, बहुत ज्यादा सोच-विचार करता था। एक महिला ने प्रेम प्रस्ताव रखा। सोरेन कीर्क गार्ड ने कहा कि जरूर तुम्हारे प्रेम

प्रस्ताव के संबंध में विचार करूँगा। अब कोई प्रेमी ऐसे उत्तर नहीं देते; प्रेमी या तो हाँ कहते हैं या न कहते। सॉरेन कीर्क गार्ड ने कहा कि विचारूँगा। देखूँगा इसके पक्ष-विपक्ष में क्या तर्क हैं; प्रेम करना चाहिये या नहीं करना चाहिये, शादी करने योग्य है कि नहीं करने योग्य है। वह महिला बहुत प्रसन्न हुई कि देश के इतने प्रसिद्ध दार्शनिक से उसका विवाह होने वाला है। तीन-चार दिन बाद उसने पूछा कि सॉरेन कीर्क गार्ड तुमने क्या निर्णय लिया। कीर्क गार्ड ने कहा कि इतनी जल्दी कैसे निर्णय होगा। मेरे घर के बगल में लायब्रेरी है, उसको ज्वाइन कर लिया है। प्रेम के ऊपर, विवाह के ऊपर जो भी किताबें हैं उन सबको मैं पढ़ रहा हूँ, नोट्स बना रहा हूँ, पक्ष-विपक्ष में दलीलें इकट्ठी कर रहा हूँ। अभी तक बराबर के तर्क दोनों तरफ मिले हैं, अभी तय नहीं हो पाया। एक दस-पन्द्रह दिन बाद उस लड़की ने फिर पूछा कि तय हुआ। कीर्क गार्ड ने कहा यह जिंदगी भर का सवाल है, विवाह इतनी जल्दी तय नहीं होने वाला। मैं बहुत मेहनत कर रहा हूँ। तुमको जान कर आश्चर्य होगा कि सुबह से लेकर शाम तक लगा रहता हूँ, रात देर तक उसी काम में लगा हुआ हूँ। महीना भर बाद उस लड़की ने फिर पूछा। फिर कीर्क गार्ड ने कहा कि डार्लिंग, तुमको जान कर बड़ी प्रसन्नता होगी कि गद्य साहित्य पूरा समाप्त हो गया। अब थोड़ा पद्य साहित्य देखना है कि कवियों ने क्या कहा है प्रेम के संबंध में, विवाह के संबंध में। उस लड़की ने सोचा कि चलो थोड़े दिन और लगेंगे। एक-आध महीने बाद फिर उसने पूछा। कीर्क गार्ड ने कहा कि तुम्हें जानकर प्रसन्नता होगी, घर के पास जो एक छोटी सी लायब्रेरी थी, उसका सारा साहित्य समाप्त हो गया है और कल से मैंने यूनीवर्सिटी की बड़ी
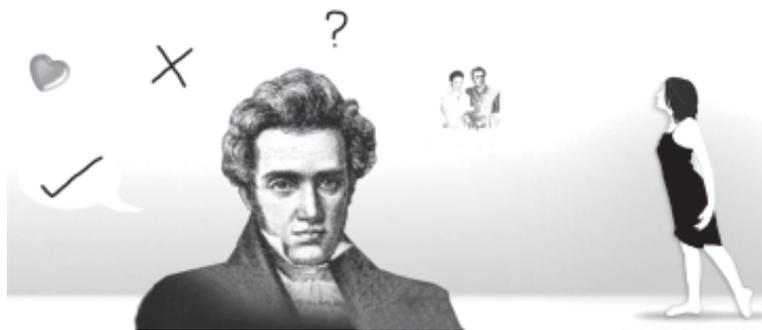
लायब्रेरी ज्वाइन कर ली है। उस लड़की ने फिर तो आशा छोड़ दी कि जब तीन महीने में छोटी लायब्रेरी समाप्त हुई है तो बड़ी लायब्रेरी समाप्त होगी शायद उससे पहले हमारी जिंदगी समाप्त हो जाए, जवानी समाप्त हो जाए।

कीर्क गार्ड अपने काम में लगा रहा। वह धीरे-धीरे यह भी भूल गया कि उद्देश्य क्या था। वह तो अपने नोट्स बनाने में लगा हुआ था। पर्चे पर पर्चे दलीलें इकट्ठी कर रहा था। चार, छह महीने के बाद एक पत्र उस लड़की को डाल देता। अभी तक इतना-इतना हो चुका है। लेकिन तर्क बराबर मिले दोनों तरफ। बहुत तार्किक व्यक्ति अगर खोजेगा तो उसे हमेशा ही दोनों तरफ के तर्क दिखाई देंगे। एक दिन उस बड़ी लायब्रेरी के चपरासी ने पूछा कि आप कौन सा रिसर्च वर्क कर रहे हैं। कुछ समय तक आप डैनिश साहित्य देखते रहे, फिर आप जर्मन साहित्य देखने लगे, अब आप रशियन साहित्य देख रहे हैं, फिर अंग्रेजी साहित्य देख रहे हैं। यह कौन सा काम आप कर रहे हैं। बड़े-बड़े पी.एच.डी., डी.लिट्. करने वाले हमने देखे हैं। तीन साल में, चार साल में उनका काम भी पूरा हो जाता है। आप कौन सा प्रोजेक्ट लिये हुए हैं जो खत्म ही नहीं होता। कीर्क गार्ड ने बताया कि मेरी बड़ी मुसीबत हो गयी, एक लड़की ने प्रेम प्रस्ताव रख दिया है। वह चपरासी भी खूब हँसा, उसने कहा कि एक तर्क मैं अपको ऐसा बताता हूँ कि विपक्ष में कोई आर्गुमेन्ट नहीं होगा। कीर्क गार्ड ने कहा जल्दी बताओ उसी की तो मैं तलाश में था। उसने कहा कि एक तर्क ऐसा है- वह है अनुभव का। कुछ चीजें ऐसी हैं कि अनुभव करके ही जानी जा सकती हैं कि करने योग्य है कि नहीं; सच पूछो तो 'हैं कि नहीं' की बजाय करने योग्य 'थीं कि नहीं थीं' बाद में पता चलता है, अनुभव के बाद। पहले एडवांस में पता नहीं चल सकता।

निश्चित रूप से अनुभव के विपक्ष में कोई तर्क नहीं हो सकता था। तो शादी के पक्ष में एक तर्क ज्यादा हो गया। सॉरेन कीर्क गार्ड भागा उस लड़की के घर पहुँचा, दरवाजा खटखटाया। एक बूढ़े आदमी ने दरवाजा खोला। कीर्क गार्ड ने कहा कि आपको जानकर खुशी होगी कि आपकी बेटी का विवाह प्रस्ताव मैंने स्वीकार कर लिया है, आपको बधाई हो। बूढ़े आदमी ने अपना माथा ठोंक लिया कि कीर्क गार्ड तुमने बहुत देर कर दी, मेरी बेटी की शादी हुए तो बीस साल हो गए। उस बेचारी ने तुम्हारा बहुत समय तक इंतजार किया। लेकिन कब तक इंतजार करती?

याद रखना जिंदगी इंतजार नहीं करती। प्रतिपल हमारे हाथ से जीवन चुकता चला जा रहा है। निर्णय तो करना ही होगा। यहाँ तक कि अनिर्णय की अवस्था भी एक प्रकार का निर्णय है। जो व्यक्ति संशय में डोल रहा है, बजाए यह कहने के कि मैंने अभी तय नहीं किया उसे यह कहना चाहिए कि मैंने अनिर्णय में रहने का तय किया है। क्योंकि अंततः तो अनिर्णय भी एक निर्णय बन गया जाने अनजाने - 'इनडिसीजन इज ऑलसो ए डिसीजन'। अनिर्णय की स्थिति में डोलना भी एक निर्णय है। इसका मतलब हुआ कि निर्णय से हम बच ही नहीं सकते। चाहे हम पक्ष में निर्णय लें, चाहे हम विपक्ष में निर्णय लें अथवा हम अनिर्णय का निर्णय लें। वह भी एक प्रकार का निर्णय है। जब निर्णय करना ही है, निर्णय से बचा नहीं जा सकता तो फिर क्यों न हम निर्णय ही करें, पक्ष या विपक्ष में। कम से कम अनुभव से कुछ समझ तो आएगी। अनिर्णय में डूबा हुआ आदमी तो कभी भी कुछ न समझ सकेगा, अनुभव को प्राप्त न कर सकेगा। इससे तो अच्छा गलत ही निर्णय हो जाता। कम से कम निर्णय के बाद पता तो चलता कि हमसे गलती हो गयी। फिर हम सही की तरफ कदम उठा सकते थे। अनिर्णय वाला व्यक्ति अनुभव से वंचित रह जाता है।

तो सबसे पहली बात मैं कहना चाहता हूँ- सम्यक् समझ, सम्यक् सोच विचार, सम्यक् भाव। टटोल लेना अपने भीतर जो निर्णय तुम करने जा रहे हो इसके पीछे तुम्हारे हृदय का भाव भी है कि नहीं। कहीं दूसरों के कहने में आकर तुम कोई निर्णय तो नहीं करने जा रहे हो। तुम्हारा भाव हो, तुम्हारी समझ साथ दे रही हो, एक बार विचार कर लेना, दो बार विचार कर लेना, इतना बहुत है। फिर उस दिशा में आगे बढ़ना।

दूसरा सोपान है साहस- अतीत से मुक्ति का साहस और नई सम्भावनाओं को खोजने का साहस। अक्सर हम नए से डरते हैं। नया कुछ होने लगे हमारे प्राण काँप जाते हैं। पुराने की हमारी बहुत गहरी पकड़ है, पुराने को हम छोड़ना नहीं चाहते। हमारा मन बड़ा रूढ़ीवादी, परम्परावादी है। जो होता चला आया है हम उसी को करते चले जाना चाहते हैं। कोई भी नई चीज हमको बड़ी खतरनाक लगती है। जो व्यक्ति खतरों से खेलने को राजी नहीं है, जो थोड़ा सा जोखिम उठाने को तैयार नहीं है, रिस्क लेने को राजी नहीं है, वह संकल्पवान नहीं हो सकता। तो अतीत से बहुत ज्यादा मोह न करना। जो बात

हो चुकी सो हो चुकी। उसी-उसी को रिपीट करने से, उसकी पुनरावृत्ति से क्या लाभ? एक ढंग का जीवन तुम जी तो चुके। उससे जो प्राप्त करना था वह तो प्राप्त हो चुका। चलो कुछ नया देखें, कुछ नया सोचें, कुछ नया हो। नये के साथ सम्भावना है- अच्छा भी हो सकता है, बुरा भी हो सकता है। इसलिए हमें डर लगता है। थोड़ा सा खतरा उठाने का, जोखिम उठाने का साहस चाहिए।

तो पहला कदम हुआ समझ, दूसरा कदम हुआ साहस, तीसरा कदम संकल्प लें, निर्णय करें। अब एक कमिटमेंट शुरू होना चाहिए। हर क्षण जीवन में हम एक चौराहे पर हैं और हमें तय करना होगा हम किस दिशा में जाएं। निश्चित रूप से जब हम तय करते हैं दक्षिण की तरफ जाएंगे तो बाकी की तीन दिशाओं में जाने से हम वंचित रह जाते हैं। सब दिशाओं में एक साथ नहीं जाया जा सकता इस बात को समझ लें। तीन दिशाओं का त्याग अपने आप हो जाता है, जब हम एक दिशा चुनते हैं। कोई व्यक्ति चारों दिशाओं के लोभ में पड़ गया हो, वह आत्महीन हो जाएगा। वह चार कदम इस तरफ चलेगा, चार कदम विपरीत दिशा में चलेगा। थोड़ा सा आगे, थोड़ा सा पीछे, वह कहीं भी नहीं पहुंच पाएगा। अंत में वह पाएगा उसकी मृत्यु के समय वह ठीक उसी चौराहे पर खड़ा है जहाँ जन्म के समय मौजूद था। चलने की उसने कोशिश बहुत की पर पहुंचा कहीं भी नहीं। इस प्रकार के लोग मुझे मिल जाते हैं और कहते हैं- हम ध्यान कर रहे हैं 20 साल से, अभी तक हुआ नहीं, होश सधता नहीं। मैं उनसे पूछता हूँ- और विस्तार से बताइए आपकी जीवन शैली कैसी है? तब पता चलता है वह सज्जन रोज शाम को शराब भी पीते हैं, रोज सुबह ध्यान करते हैं। ध्यान यानी होश की साधना और शराब यानी बेहोशी की साधना- दो बातें एक-दूसरे के विपरीत हो गईं। यह तो ऐसा हुआ कोई कहे कि मैं दस कदम रोज सुबह पूरब की तरफ चलता हूँ और फिर शाम को दस कदम पश्चिम दिशा में चलता हूँ, मैं कहीं पहुँच क्यों नहीं पा रहा? सीधी सी बात है, कहीं भी पहुँचना नहीं हो सकता। यह तो ठीक ऐसे हुआ कोई आदमी कहे कि मैं मकान बना रहा हूँ। सुबह से ईंट जोड़ना शुरू करता हूँ, दीवार उठाने की कोशिश करता हूँ और दोपहर तक तीन-चार फुट ऊँची दीवार बन जाती है। और दोपहर के बाद मैं एक-एक ईंट गिराना शुरू कर देता हूँ और शाम तक सारी ईंटें गिरा देता हूँ। फिर धरातल साफ। दूसरे दिन फिर

सुबह से मकान बनाना शुरू कर देता हूँ। 20 साल हो गये मकान बनाते-बनाते अभी तक बन नहीं रहा। यह बीस साल में नहीं, बीस जन्म में भी नहीं बनेगा, बीस हजार जन्मों में भी नहीं बनेगा क्योंकि तुम बना भी रहे हो और तोड़ भी रहे हो। जिन ईंटों को तुमने जोड़ा, तुमने ही उनको तोड़ दिया। यह भवन तो कभी भी निर्मित न हो सकेगा। कोई आदमी रोज ध्यान करता है और रोज शराब भी पीता है, कब इसकी यात्रा पूरी होगी? कभी भी नहीं। सिर्फ समय बर्बाद हो रहा है, जिंदगी बेकार जा रही है। यह सोच रहा है कि मैं भक्त हूँ और प्रेम की साधना कर रहा हूँ और प्रेम का उपाय करता है, कोशिश करता है ओर जिन लोगों से यह प्रेम करता है उन्हीं से घृणा भी करता है। उन्हीं पर क्रोधित भी होता है। उन्हीं से ईर्ष्या और वैमनस्य भी रखता है। इसके प्रेम का फल कब आयेगा? कभी भी नहीं आयेगा क्योंकि यह विपरीत काम एक साथ कर रहा है। यह प्रेम और क्रोध इकट्ठे साध रहा है। दो चार दिन प्रेम चलता है, दो चार दिन क्रोध शुरू हो जाता है। मिला-जुलाकर नतीजा शून्य। यह करुणावान होता है कुछ समय के लिए, कुछ घन्टों के लिए, कुछ दिनों के लिए और कुछ दिन बहुत कठोर हो जाता है। कुल मिलाकर नतीजा शून्य हो जाएगा, हाथ में कुछ भी नहीं आयेगा। मेहनत बहुत करेगा पर परिणाम कुछ भी न होगा। इसलिए निर्णय लो, संकल्प लो, यह तीसरा कदम हुआ।

इस निर्णय को, अपने संकल्प को छोटे-छोटे हिस्सों में बाँट लो। एक टारगेट सेटिंग करो, एक लक्ष्य निर्धारित करो कि क्या तुम्हें पाना है, क्या तुम्हें होना है और छोटे-छोटे खंडों में उसको बांट लो। और एक बार में एक ही खंड का, अभी सामने जो है वर्तमान में, उसकी चिन्ता लो उसकी फिक्र करो। बहुत दूर की मत सोचना, अभी सामने जो है उसको देखना। ऐसा समझें कि आप यहां सोनीपत से दिल्ली कार ड्राइव करते हुए जा रहे हैं। तो आपके मन में एक तो दूर का लक्ष्य है कि दिल्ली पहुँचना है। लेकिन आपकी नजर कहाँ होती है? नजर होती है वर्तमान पर, अभी सामने जो ट्रैफिक है, गाड़ियां आ जा रही हैं, लोग गुजर रहे हैं। हाँ, बीच-बीच में आप तिरछी नजर से देख लेते हैं सड़क के किनारे लगे माइल स्टोन को कि दिल्ली कितने किलोमीटर दूर है। पहले 30 था, अब 25 बचा, अब 20 बचा। इसका मतलब है कि ठीक दिशा में जा रहे हैं। लेकिन मुख्य रूप से नजर वर्तमान पर होती है। ऐसे ही हम अपने भविष्य का लक्ष्य निर्धारित करें उसके प्रति कमिटेड रहें। बीच-बीच

में थोड़ी सा पुर्नविचार करते रहें कि हम उसी दिशा में जा रहे हैं कि नहीं, कहीं भटक तो नहीं गये। लेकिन मुख्य रूप से हमारी दृष्टि वर्तमान पर हो। जैसे ड्राइवर बीच-बीच में कार में लगे बैक मिरर (पीछे देखने वाले दर्पण) पर दृष्टि दौड़ा लेता है, वैसे ही हम भी कभी पुर्नविचार कर लें। जो हमने किया, जो हुआ, जो परिणाम आए उन पर चिन्तन मनन कर लें कि ठीक हो रहा है कि नहीं हो रहा है। तो अतीत और भविष्य से बस इतना ही संबंध रखें जैसे ड्राइविंग करते समय माइल स्टोन और बैक मिरर पर कभी-कभी नजर पड़ती है। मुख्य रूप से 99 प्रतिशत दृष्टि वर्तमान के ट्रैफिक पर होती है। ऐसी ही हमारे जीवन की शैली हो।

चौथा कदम मैं कहना चाहूंगा शेयरिंग- अपने संकल्प की घोषणा करें। लोगों को बताएं, अपने मित्रों परचितों को खबर पहुंचाएं कि मैंने यह संकल्प लिया, मैंने यह निर्णय लिया है। इससे आपको बहुत प्रकार की सूचनाएं मिलेंगी। बहुत अनुभवी लोग जो उस दिशा में आपसे आगे गए हुए हैं, जिन्होंने उस प्रकार का काम किया हुआ है, उनसे बहुत प्रकार की सूचनाएं आपको मिल सकेंगी जो आपके काम आयेंगी।

फिर लोगों का सहयोग प्राप्त करें, एक टीम निर्धारित करें। छोटे मोटे संकल्प हम स्वयं पूरे कर सकते हैं लेकिन बड़े संकल्प को पूरा करने के लिए हमें पांचवां कदम उठाना पड़ेगा- समर्थन की प्राप्ति, सहयोग की प्राप्ति। अब उन लोगों को ढूंढ़ें जो आपकी मदद करने के लिए तैयार हैं। निश्चित रूप से आप सौ लोगों से बात करेंगे, 5-10 लोग अवश्य ही ऐसे मिलेंगे जो आपके काम में मदद पहुंचा सकते हैं, उनकी मदद लें। अक्सर अहंकारी व्यक्ति किसी की मदद लेना नहीं चाहता। वह स्वयं ही सब कुछ करना चाहता है। लेकिन इस प्रकार का व्यक्ति कोई बहुत बड़े काम नहीं कर सकता। ठीक है छोटे-मोटे काम वह कर सकेगा लेकिन बहुत बड़ी सफलता हासिल न कर सकेगा। बड़ी सफलता हासिल करने के लिए हमें एक संघ, एक टीम निर्धारित करनी होती है। अपने मित्रों का चयन करें जो आपको सहयोग दे सकते हैं।

इसके बाद छटवां कदम हुआ- श्रम करें। अब समय आ गया। लोग सहयोग करने को तैयार हैं, आवश्यक सूचनाएं आपने इकट्ठी कर ली हैं, अब मेहनत करना शुरू करें। अब हाथ पर हाथ धरे बैठे न रहें।

और सातवां कदम है- एक दिन आपका संकल्प सफलता तक पहुंचता है।

बीच में कभी-कभी छोटी-मोटी असफलताएं भी मिलती हैं। असफलताएं जब मिलें उन पर पुनर्विचार करें कि कहां हम से भूल-चूक हुई। क्या हमसे गलती हो गई? और फिर से अतीत से मुक्त होकर नये सिरे से नया संकल्प लें। अपने संकल्प को पूरा करने के लिए फिर कदम आगे बढ़ाएं।

तो ये सात कदम हुए। पहला समझ, दूसरा साहस, तीसरा संकल्प, चौथा शेयरिंग, पांचवां सहयोग प्राप्ति, छठवां श्रम, सातवां सफलता अथवा असफलता दोंनो चीजें सम्भव हैं। हमेशा हर बार सफलता ही नहीं मिल जाएगी। जब सफलता मिले तो याद रखना उसको अहंकार से मत जोड़ना। धन्यवाद देना अस्तित्व को, धन्यवाद देना अपने मित्रों को जिन्होंने सहयोग पहुंचाया, धन्यवाद देना उन परिस्थितियों को जिनके कारण सफलता मिली। असफलता मिले तो देखना कहां भूल-चूक हुई। कौन सी गलती हो गई ताकि आगे से हम उसे सुधार सकें।

सांतवे कदम के बाद हमारी समझ और विकसित होती है। हम फिर पहले कदम पर पहुँच जाते हैं, समझ। पहले हमारी समझ एक प्राथमिक समझ थी बस। वह बहुत गहरी समझ नहीं थी। लेकिन ये सात कदम चलने के बाद अब हममें एक और गहरी समझ (एक डीपर अन्डरस्टैन्डिंग) पैदा होती है। और जीवन में आगे हम फिर से नये संकल्प लेने के लिए और बेहतर, उच्चतर सफलता हासिल करने के लिए तैयार हो जाते हैं। तो ये सात कदम सात सोपान

हैं।

प्रश्न २ : कोई संकल्प सम्यक् है या नहीं यह कैसे पहचानें?

उत्तर : बीज रूप में तो पहचानना थोड़ा कठिन है कि यह सम्यक् है कि नहीं, फल रूप में पहचानना आसान है। मैं दोनों उपाय कहूँगा। फल रूप में पहचानना तो बहुत सरल है। यदि आप पाते हैं कि आपको संतोष मिला, शांति मिली, आनन्द मिला, आपके भीतर विकास हुआ, फैलाव हुआ, आपकी संकल्प शक्ति और प्रगाढ़, मजबूत हुई, आप एक प्रकार की स्वतन्त्रता महसूस कर रहे हैं, मुक्ति और प्रीति महसूस कर रहे हैं, बढ़ोतरी और विकास हुआ है हृदय का, समझ का, संकल्प का, तृप्ति का, तो आप जानें कि आपका संकल्प सम्यक् था। यदि इसके विपरीत हुआ तो भलीभांति जानें कि आपका संकल्प असम्यक् था। तो ये तो हुए फल, परिणाम आने पर पता चलेगा। बीज रूप में कैसे पहचानें? जब हम शुरू कर रहे हैं, उस समय हमारे पास कौन सा क्राइटीरिया है जिससे हम जांच सकें कि हमारा संकल्प सम्यक् है कि नहीं? बीज रूप में आप कुछ कसौटियों पर कसें।

पहला, मैं कहना चाहूंगा 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्'। पहले आप टटोल कर देखें कि जो आप करने जा रहे हैं क्या वह प्रामाणिक है? सत्य से सम्बन्धित है? सच्चाई है उसके भीतर? आप वास्तविकता के धरातल पर खड़े हैं या नहीं? कहीं आसमान के तारे तो तोड़ने नहीं चले?

दूसरा शिवम् – क्या वह शुभ संकल्प है? क्या आप बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय कुछ करने जा रहे हैं? इससे हित होगा कि अहित होगा? यदि अहित होगा– ऐसा आपको लगता है तो बीज रूप में ही आप पहचान सकते हैं कि यह संकल्प असम्यक् है। याद रखना एक अच्छा संकल्प लेकर असफल हो जाना भी ज्यादा अच्छा है, बजाए इसके कि हम अशुभ संकल्प लेकर सफल हो जाएं। फिर से दोहरा दूं– एक शुभ संकल्प लेकर असफल हो जाना बजाए अशुभ संकल्प लेकर सफल हो जाने के। तुमने बुद्ध या महावीर जैसे होने का प्रयास किया और उस प्रयास में अगर तुम असफल भी हो गये तो यह भी ज्यादा अच्छी स्थिति है बजाए इसके कि तुमने हिटलर या मुसोलिनी होना तय किया और उसमें सफल हो गये। तो संकल्प शुभ है कि नहीं इसे तो बीज रूप में तुम अपने भीतर पहचान सकते हो कि तुम्हारा इरादा क्या है।

तीसरी बात, जो तुम करने जा रहे हो क्या यह ऑथेंटिक है? क्या यह एक

सुन्दर बात होगी? तुम कल्पना कर सकते हो कि जो तुम करने जा रहे हो अगर इसके परिणाम आयेंगे तो क्या इसको तुम सुन्दर बात मानोगे कि नहीं मानोगे? और तुम कल्पना करके ही जान सकते हो कि वस्तुतः यह काम करने जैसा भी है या नहीं है?

अगली कसौटी मैं कहना चाहूँगा- स्वांतः सुखाय- अपने सुख के लिए तुम करो, लेकिन बस इतना याद रखना कि इससे किसी और को दुख न मिले। तुम अपने आनन्द से जीना, तुम ऐसे निर्णय लेना जिसमें तुम्हारे जीवन का रस बहता हो, बस इतना ही ख्याल रखना कि किसी और को इससे कष्ट न मिलता हो। ये छोटी-छोटी सी कसौटियां हैं। तुम बीज रूप में ही देख पाओगे कि अगर इससे किसी को कष्ट मिलता है, अंततः यह बात तुमको भी कष्ट देने वाली सिद्ध होगी क्योंकि बहुत गहरे तल पर हम दूसरों से जुड़े हुए हैं। जो तुम दूसरों को दे रहे हो वही तुम्हें मिल जाएगा। तुम कुछ ऐसा काम करने चले जिससे दूसरों को कष्ट मिले, आज नहीं कल, कल नहीं परसों ये सारे कष्ट लौटकर कई गुना होकर तुम्हीं को झेलने पड़ेंगे। तुम बीज रूप में ही उसको देख लो यह जो तुम करने जा रहे हो वह तुम्हारा आनन्द हो, वह तुम्हारा रस हो जरूर, बस इतना ख्याल रखना- किसी और को इससे तकलीफ न पहुंचती हो, तो यह सम्यक् संकल्प होगा।

फिर देखना कि तुम्हारा संकल्प सृजनात्मक हो, कुछ विधायक हो, विध्वंसात्मक न हो, हिंसात्मक न हो, प्रेमपूर्ण हो, अहिंसात्मक हो। निगेटिव संकल्प से बचना। एक मित्र ने पूछा है कि मैं चार-पांच बार सिगरेट छोड़ने का व्रत ले चुका हूँ। जो भी मैं संकल्प लेता हूँ वह टूट जाता है। यह सिगरेट मुझसे छूटती नहीं। मैं कहना चाहूँगा ये सिगरेट छोड़ने का संकल्प एक नकारात्मक संकल्प है, निगेटिव संकल्प है। नकारात्मक संकल्प से बचना। कुछ पाने की कोशिश करो तो वह विधायक संकल्प होता हैं। जब तुम कुछ छोड़ने की कोशिश करते हो वह नकारात्मक संकल्प होता है। नकारात्मक संकल्प से हार जाना बड़ी हार होती है। एक छोटी सी सिगरेट से तुम हार गये इससे तुम्हारी आत्मा और भी विनष्ट होगी। अगर तुम जीत गये तब तो ठीक। अगर तुम हार गये तब तुम बुरी तरह से हारोगे। फिर तुम आत्महीनता की ग्रंथी से भर जाओगे। अपनी ही नजरों में नीचे गिर जाओगे। यह तो अच्छा न हुआ। यह परिणाम तो पहले ही देखा जा सकता है, संकल्प लेने से पहले कि मैं

सिगरेट छोड़ने की कोशिश कर रहा हूँ क्या सम्भावना है। दो सम्भावनाएं हैं- या तो मैं छोड़ पाऊंगा या नहीं छोड़ पाऊंगा। यदि छोड़ पाऊंगा तब तो ठीक, यदि नहीं छोड़ पाऊँगा तो मैं भीतर टूट जाऊँगा। अपनी ही नजर में मेरा आत्मसम्मान गिर जायेगा। तब ये करने जैसा नहीं। विधायक- कुछ पाने के लिये करो। उदाहरण के लिये आप समाधि पाने को चले, परमात्मा को पाने को चले। दो सम्भावनायें हैं- या तो आप पाने में सफल हो जायेंगे या नहीं हो पायेंगे। पाने में सफल हो गये तब तो कहना ही क्या? यदि असफल भी हो गये तो भी आपको संतोष रहेगा कि आपने सम्यक् दिशा में, प्रभु की दिशा में कदम उठाये थे। न चलो मंजिल तक पहुंचे, कुछ कदम तो चले, थोड़ी तो यात्रा हुई। परमात्मा की दिशा में हार जाना भी शुभ है। वह तुम्हें तोड़ेगा नहीं तुम्हें और इन्टीग्रेटेड कर जायेगा। आज नहीं कल, इस जन्म में नहीं अगले जन्म में, तुम यह यात्रा पूरी कर ही पाओगे। शुरूआत तो हो गयी। तो शुभ की दिशा में, विधायक दिशा में उठाया गया कदम हमेशा तुम्हें और मजबूत कर जाता है, चाहे जीतो चाहे हारो। और अशुभ दिशा में, नकारात्मक दिशा में उठाया गया कदम कुछ देकर नहीं जाता। अगर सिगरेट छूट भी गयी तो कुछ विशेष तुम्हें मिलने वाला नहीं। और अगर नहीं छूटी तब आत्मसम्मान टूट जायेगा। तो बीज रूप में ही इस बात को पहचाना जा सकता है।

अगला बिंदु मैं कहना चाहूँगा कि बीज रूप में पहचानने के लिये कि संकल्प शुभ है या नहीं, क्या वह तुम्हारे चैतन्य से उपज रहा है? क्या तुम्हारा अचेतन मन अनकॉन्शस माइन्ड डिमान्ड कर रहा है? तुम्हारी अचेतन आदतें तुम्हें पुकार रही हैं और तुम्हें उकसा रही हैं कुछ करने के लिये? या तुम चैतन्य से भरकर, होश से भरकर, जागरूकता से भरकर संकल्प ले रहे हो? यदि तुम अपनी पुरानी आदतों के वश, तुम्हारे अचेतन मन के कहने से कुछ निर्णय कर रहे हो वह अशुभ की दिशा में जायेगा। यदि तुम्हारी चेतना से पुकार उठती है कुछ करने की, वह शुभ की दिशा में जायेगी, सम्यक् दिशा में जायेगी।

अगला बिंदु पहचानने के लिये क्या तुम शांति की अवस्था में निर्णय कर रहे हो कि अशांत और उत्तेजित होकर निर्णय कर रहे हो? शांति से उपजे निर्णय सुखदायी होंगे। अशांति से उपजे निर्णय दु:खदायी होंगे।

और अंतिम बिंदु मैं कहना चाहूँगा- क्या तुम प्रफुल्लता से, आनन्द से, आंतरिक उत्साह से यह निर्णय कर रहे हो कि किसी मजबूरी में, दूसरों के

कहने से या दूसरों कि प्रेरणा लेकर यह कर रहे हो? अपने भीतर तौल लेना। यदि तुम्हारे आनंद से, तुम्हारी प्रफुल्लता से, आंतरिक उमंग और उत्साह से संकल्प आ रहा है तो वह शुभ दिशा में जायेगा। वह एक सम्यक् संकल्प होगा।

प्रश्न ३ : सम्यक् संकल्प का आष्टांगिक मार्ग के अन्य सात अंगों से क्या नाता है?

उत्तर : तीन अंग आष्टांगिक मार्ग के-सम्यक् दृष्टि, सम्यक् स्मृति और सम्यक् वाणी- अगर इनसे कोई संकल्प उत्पन्न होता है तो वह संकल्प सम्यक् होगा। तो ये तीन बिंदु बीज रूप में संकल्प को प्रभावित करते हैं। जिस व्यक्ति की दृष्टि ही असम्यक् है, जो ठीक को गलत और गलत को ठीक देख रहा है उस व्यक्ति का निर्णय भी ठीक नहीं होने वाला। तो सम्यक् दृष्टि से उत्पन्न निर्णय सम्यक् संकल्प होंगे। ठीक उसी प्रकार सम्यक् जागृति से, होश से, जागरूकता से, सम्यक् स्मृति से उत्पन्न निर्णय, राइट माइन्डफुलनेस से उत्पन्न निर्णय सम्यक् निर्णय होंगे। बेहोशी से, अहंकार से उत्पन्न निर्णय असम्यक् निर्णय होंगे। और तीसरा बिंदु है सम्यक् वाणी। याद रखना जब बुद्ध कहते हैं सम्यक् वाणी तो उनके दो अर्थ हैं। एक तो जो हम प्रगट करते हैं, बोलते हैं, वह वाणी और एक वह वाणी जो हमारे भीतर चल रही है, जिसको हम कहते हैं विचार। तो वाणी के दो हिस्से हुए- एक प्रकट वाणी और एक अप्रकट वाणी। विचार यानी अप्रकट अनएक्सप्रेस्ड स्पीच। तो वाणी में वह दोनों इंक्लुडेड हैं; एक वह बातचीत जो हमारे भीतर चल रही है- विचार। और एक वह वाणी जो हम दूसरों से बोलते हैं। तो सम्यक् विचार से उत्पन्न, सम्यक् वाणी से उत्पन्न निर्णय सम्यक् होते हैं। यदि हमारा विचार ही गलत है, हमारे भीतर भाव ही गलत हैं, इरादे ही गलत हैं तब हमारा संकल्प भी गलत हो जायेगा। तो ये तीन बिंदु- सम्यक् दृष्टि, सम्यक् वाणी अर्थात् सम्यक् विचार, और सम्यक् जागृति - ये तीन बीज रूप से संकल्प को प्रभावित करते हैं। फिर मध्य में है कर्म, जिसको हम कह लें वृक्ष
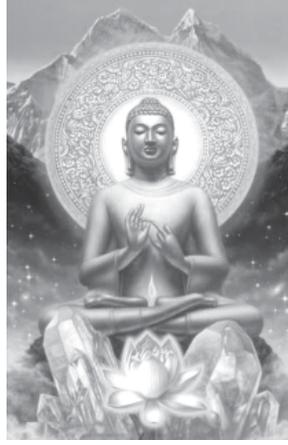
का तना और उसकी शाखायें। दृष्टि, जागृति और वाणी बीज हैं तो सम्यक् कर्म वृक्ष है संकल्प का। जब आप श्रम कर रहे हैं, मेहनत कर रहे हैं अपने निर्णय को पूरा करने के लिये कमिटेड होकर, तो वह सम्यक् कर्म होता है। यदि कर्म में असम्यकता आ गयी तब भी संकल्प प्रभावित हो जायेगा।

बाकी की तीन बातें आष्टांगिक मार्ग की- सम्यक् आजीविका, सम्यक् समाधि, और सम्यक् स्वीकृति- ये संकल्प के फल से संबंधित हैं। यदि तथाता भाव उतपन्न हो रहा है, स्वीकार भाव पैदा हो रहा है फलस्वरूप, तो जानना संकल्प सही था। यदि समाधि की दिशा में जा रहे हो, शांति की दिशा में, निर्विचार की अवस्था में जा रहे हो, ध्यान गहरा होने लगा तो जानना कि संकल्प सही था। यदि तुम्हारी आजिविका सम्यक् है, लोगों के साथ संबंध मधुर बन रहे हैं, प्रेमपूर्ण बन रहे हैं तो जानना की तुम्हारा संकल्प सही था। तो अगर ये तीन चीजें परिणाम के रूप में नहीं आ रही हैं तो जानना की कहीं भूल-चूक हो रही है। अगर लोगों से तुम्हारे प्रीतिपूर्ण संबंध नहीं बचे, कटुता पैदा हो गयी, तुम्हारी आजीविका असम्यक् हो गयी, ध्यान और समाधि में प्रवेश कठिन हो गया और भीतर अस्वीकार भाव, तनाव और बेचैनी पैदा हो गयी तो जानना कि तुम्हारा संकल्प सम्यक् नहीं था। तो तीन बातें बीज रूप में, तीन बातें फल रूप में और सम्यक् कर्म वह संकल्प का वृक्ष और उसकी शाखाएं हैं। इस प्रकार सम्यक् संकल्प आष्टांगिक मार्ग के अन्य सातों बिन्दुओं से जुड़ा हुआ है।

प्रश्न ४ : एक मित्र ने पूछा है कि अन्तर्द्वन्द्व से कैसे पार जाएं?

उत्तर : यह अन्तर्द्वन्द्व से पार जाने की विधि ही मैं बता रहा हूँ। जब आपने श्वास रोक ली अचानक आपके भीतर का पूरा मन इकट्ठा जागरूक हो गया। अब आप श्वास ले ही नहीं रहे और अपने निर्णय को दोहरा रहे हैं कि मैं चार बजे सुबह उठूंगा। दस बार आप इसको करके सो गये। फिर अचानक सुबह 4 बजे आपकी नींद खुल गयी और भीतर से कोई विरोधी स्वर नहीं आया। तो यह प्रयोग बहुत कारगर हैं संकल्प शक्ति को बढ़ाने के लिये।

इसी प्रकार निर्णय की शक्ति को बढ़ाने के लिए आज्ञा चक्र के प्रयोग, राज योग के प्रयोग बहुत उपयोगी हैं। कुछ विधियों का मैं नाम लेता हूँ जैसे त्राटक ध्यान की बहुत सी विधियाँ, शिवनेत्र ध्यान, मंडल ध्यान, गौरीशंकर ध्यान, सडन स्टॉप एक्सरसाइज। गुरजिएफ ने इनका बहुत प्रयोग किया। ओशो ने भी

सक्रिय ध्यान के अंतिम चरण में सडन स्टॉप विधि का प्रयोग किया, अचानक रुक जाना। क्योंकि जब आप अचानक कुछ करते-करते रुक जाते हैं, मूर्तिवत हो जाते हैं, पत्थर की प्रतिमा हो जाते हैं तब आपने एक निर्णय लिया कि आधा मिनट के लिये कि एक मिनट के लिये मैं इसी अवस्था में रहूँगा, नहीं हिलुंगा-डुलुंगा। आपके भीतर से एक निर्णय, एक संकल्प आया और आपने उसे पूरा किया। ऐसे छोटे-छोटे संकल्प लेना शुरू करें। कई बार बहुत छोटे-छोटे संकल्प, जिनका सीधा हमारे जीवन से संबंध भी नहीं, उनको लेने से शुरूआत करें। समझो कि आपने तय किया कि आज जब मैं बाजार में से गुजरूंगा, ऑफिस से अपने घर जाऊँगा, साइनबोर्ड नहीं पढूँगा। बहुत छोटी सी बात है, लेकिन अगर आप इसको पूरा कर पाये, पुरानी आदत है साइनबोर्ड पर नजर पड़ती ही है, फिजूल ही, और हम पढ़ते चले जाते रास्ते में जो भी बोर्ड पड़ता उसी को पढ़ लेते हैं। आज आपने तय किया कि साइनबोर्ड पर मेरी नजर नहीं जाएगी ऑफिस से अपने घर तक जाते समय। यह संकल्प आप पूरा कर पायेंगे। क्योंकि यह सिगरेट छोड़ने जैसा कठिन नहीं हैं। सिगरेट में एक रासायनिक आदत बन चुकी है शरीर की, उसको छोड़ना बहुत कठिन है। लेकिन इसमें तो कोई ऐसी बात नहीं थी। सिर्फ एक पुरानी आदत है कि हम चलते हुए कुछ भी पढ़ते जाते हैं जो रास्ते में मिलता है। आज हमने तय किया कि हम नहीं पढ़ेंगे। यह कोई सिगरेट जैसा एडिक्शन नहीं, इसको करना आसान होगा। लेकिन एक छोटा सा संकल्प आपने पूरा किया, आपके भीतर आत्मा का विकास हुआ, आप ज्यादा निर्णयात्मक बनें। इस प्रकार छोटे-मोटे प्रयोग करते रहें। गुरजिएफ ने सडन स्टॉप एक्सरसाइज पर बहुत बल दिया। गुरजिएफ के जो नृत्य होते हैं उनमें अचानक रुकने का आदेश दिया जाता है। अब किसी का एक पैर ऊंचा उठा हुआ है, एक विचित्र अवस्था में शरीर है और स्टॉप की आज्ञा आ गई। हो सकता है उस अवस्था में वह रुक भी न पाये, सम्भल भी न पाये और गिर जाए। कोई हर्ज नहीं। वह गिरने के रबाद भी वैसा ही पड़ा रहेगा जैसा गिरा था। गुरजिएफ ने बहुत लोगों को आत्मवान बनाया। उसने बड़ी विधियां ढूंढ़ी थीं संकल्प को जगाने की।

तिलक-टीका का प्रयोग भी आज्ञाचक्र को जगाता है, संकल्पवान बनाता है। सालिगराम का प्रयोग जो हम अमृत समाधि में सिखाते हैं वह नाभिकेन्द्र को मजबूत करता है और भीतर साहस को पैदा करता है। जीवन में छोटे-मोटे

जोखिम और कठिनाई वाले काम करने की कोशिश करें। छोटी-मोटी चुनौतियों को स्वीकार कर लें। हमने अपने जीवन की व्यवस्था कुछ ऐसी बना ली है कि हम बिल्कुल ही संकल्पहीन हो गये हैं। और खासकर प्रेम के नाम पर, सुरक्षा के नाम पर हम अपने बच्चों को संकल्पहीन बनाते हैं।

तिब्बत के दलाईलामा ने उल्लेख किया है अपनी जीवन कथा में कि जब वह 5 वर्ष का हुआ उसके पिता ने उससे कहा कि बेटे कल सुबह तुम्हें पाठशाला जाना होगा। घर का बूढ़ा नौकर घोड़े पर तुम्हें बिठाकर स्कूल ले जाएगा। दो तीन बातें तुमसे कह दूं- एक बार घोड़े पर बैठ जाओगे तो पीछे मुड़कर न देखना। दूसरी बात- तुम्हारी आंखों में आंसू नहीं आने चाहिए। तीसरी बात- स्कूल में जो प्रवेश की परीक्षा होगी उसमें असफल मत होना। यदि असफल हो गये तो लौटकर फिर इस घर मे मत आना, यह घर तुम्हारा नहीं है। हमारे घर में ऐसे असफल लोगों का स्वागत नहीं है। जो पीछे मुड़कर देखते हैं, हमारे कुल में ऐसे लोग पैदा नहीं हुए। जहां जाना है वहां देखो।

वह बच्चा 5 साल का सोचो उस पर क्या बीती होगी। शायद रात को ठीक से सो भी नहीं पाया होगा। सुबह हुई उसके घर के बूढ़े नौकर ने उसका सामान घोड़े पर लादा, उसको बिठाया और फिर से तीनों बातें उसको याद दिला दीं कि तुम्हारे पिता और माता खिड़की पर खड़े होकर देख रहे हैं। यदि तुमने पलट कर देखा तो वे तुम्हें हमेशा-हमेशा के लिये त्याग देंगे। यह जीवन-मरण का प्रश्न है कोई छोटा-मोटा सवाल नहीं है। चेहरे पर मक्खी बैठ गयी उड़ाने के लिये गर्दन हिला लो पीछे, फिर भी वे सुनेंगे नहीं कि हमने तो मक्खी उड़ाने के लिये सिर हिलाया था। फिर वे तुम्हें घर से निष्कासित ही कर देंगे। इस कुल की मर्यादा का ख्याल रखना। वह बच्चा बैठ गया है। दलाईलामा ने लिखा है अपने संस्मरण में कि बहुत मन हुआ कि पीछे मुड़कर एक बार उस घर को देख लूं, जिसमें इतने समय रहा। लेकिन भीतर से उतना ही एक प्रगाढ़ संकल्प आया कि नहीं, नहीं मुड़ना है तो नहीं। आंखों में आंसू आने-आने को थे लेकिन सूख गये। स्कूल पहुंचा, वहां के प्राचार्य ने कहा तुम्हारी परीक्षा होगी। बैठ जाओ यहीं द्वार पर और जब तक मैं न आऊं तब तक यहां से हिलना-डुलना नहीं, आंख नहीं खोलना, आंख बन्द करके बैठो। न बोलना है कुछ, न हिलना-डुलना है। यही तुम्हारी परीक्षा है। हो सकता है मैं आधे घंटे बाद आऊं, घंटे बाद आऊं या 2 घंटे बाद आऊं। वह बच्चा वहां बैठ गया

बेचारा आंख बंद करके। जो नौकर उसे छोड़ने आया था उसने कहा कि मैं तो वापिस घर जा रहा हूँ। क्योंकि मेरे रुकने का कोई सवाल नहीं। या तो तुम स्कूल की परीक्षा में पास हो जाओगे तो तुम यहीं हॉस्टल में रहोगे या तुम फेल हो जाओगे तब तुम्हें जहां जाना है चले जाना क्योंकि घर लौटने का तो कोई सवाल ही नहीं। इसलिये मैं तो चला। अब जरा सोचो वह 5 साल का बच्चा वहां बैठा है, घर का नौकर वापिस चला गया है। उसका जीवन दांव पर लगा है, आंख नहीं खोलनी है।

थोड़ी देर में वहां से एक खिलौना बेचने वाला निकलता है। इस बच्चे का बड़ा मन होता है कि कम से कम एक बार तो आंख खोलकर देख लूं। यह पहली बार शहर में आया, शहर में कैसे खिलौने बिकते हैं। लेकिन आंख नहीं खोली; भीतर एक मजबूत निर्णय कि आंख नहीं खोलनी। क्योंकि आंख खुलने

का मतलब स्कूल की परीक्षा में असफल और घर में प्रवेश से भी इंकार। मिठाई बेचने वाला निकला, बच्चे का मन बहुत ललचाया लेकिन आंख नहीं खोली। फिर स्कूल के बच्चों की छुट्टी हो गयी वे वहां से गुजरे तो इस बच्चे को तंग करने लगे। कोई उसका पीछे से कुर्ता खींच रहा है, किसी ने उसको कंकड़ मार दिया, किसी ने उसके बाल खींच दिये। वे बच्चे उसका मज़ाक उड़ा रहे हैं, व्यंग्य कर रहे हैं। इसका मन तो हुआ कि आंख खोलकर देखूं कि कौन मेरे बाल खींचता है। जवाब दूं उसको जिसने मुझे कंकड़ मारा। लेकिन नहीं, उसके भीतर एक प्रगाढ़ संकल्प पैदा हो रहा था कि आंख नहीं खोलनी है, जवाब नहीं देना है, चाहे जो हो जाए। घंटे भर बाद वह प्राचार्य आया। उसने उठाकर इस बच्चे को गले लगाया और कहा कि बेटे तुम परीक्षा में पास हुए। आओ, तुम्हारा स्वागत है। तुम हो संकल्पवान, तुमसे उम्मीद की जा सकती हैं कि तुम जिंदगी में कुछ करके दिखाओगे। जो बच्चा एक घंटा

आंख बंद न कर सके वह जिंदगी में क्या खाक करेगा। मैं देखता हूँ लोग ध्यान करने आते हैं नये-नये साधक। बार-बार मैं कहता हूँ आंख बंद कर लें, आंख बंद कर लें, मगर उनकी आँख ही बंद नहीं होती। आँखें खोल-खोलकर देखते रहते हैं कि क्या हो रहा है। डूबना है अपने भीतर, देखना है अपने भीतर, लेकिन वे बाहर देख रहे हैं। अब ये संकल्पहीन आदमी- क्या ये अपने भीतर विचार को बंद कर पायेगा? जो आंख बंद नहीं कर पा रहा वह विचार कैसे बंद कर पायेगा। इतना स्थूल काम नहीं कर पा रहा है, विचार तो बहुत सूक्ष्म है। क्या यह क्रोध को जीत पायेगा? कि काम को जीत पायेगा? वह तो बहुत गहरे, बहुत सूक्ष्म, बायलॉजी में घुसे हुए हैं। यह तो बहुत छोटे से काम को भी नहीं कर पा रहा है।

दलाईलामा ने लिखा है कि उस दिन जो मुझे लगा था कि मेरे शिक्षक, मेरे माता-पिता कितने क्रूर हैं, कितनी कठिन मेरी परीक्षा ले रहे हैं। लेकिन मैं आज जानता हूं कि वे लोग क्रूर नहीं थे, वे कठोर नहीं थे, वे बड़े करुणावान थे। उन्होंने मेरे भीतर संकल्प को जगाया।

तो मैं आपसे कहना चाहूँगा कि छोटी-मोटी चुनौतियां, छोटे-मोटे रिस्क, कुछ खतरे के काम, कुछ काम जिनमें आपको कठिनाई जान पड़ती है, उनको करने की कोशिश करें। और तब आप पायेंगे कि आपके भीतर संकल्प शक्ति मजबूत होने लगी।

प्रश्न ५ : संकल्प के मार्ग पर कौन-कौन सी बाधाएं आ सकती हैं?

उत्तर : जो मैंने सात सोपान कहें हर सोपान पर एक कठिनाई आ सकती है। जो सोपान है अगर वही तुम्हें बांध ले तो वही रुकावट बन जाएगा, बाधा बन जाएगा। उदाहरण के लिए अगर पहले सोपान पर ही अगर तुम्हारे भाव और सोच विचार का सन्तुलन नहीं है तो वह बाधा बन जाएगा। अगर तुम बहुत सेन्टीमेन्टल (भावुक) किस्म के हो तब भी तुम्हारे निर्णय गलत हो जाएंगे। अगर तुम अतिविचारशील हो, बिल्कुल ही भावशून्य हो तो भी तुम्हारे निर्णय असम्यक् हो जाएंगे वे ही बाधा बन जाएंगे।

दूसरे सोपान पर अतीत का मोह और नए का भय रोकने वाला बाधक बन जाता है।

तीसरे सोपान पर अनिर्णय, डांवाडोल चित्त, बहुचित्तवान व्यक्तित्व, वह बाधा बन जाता है।

चौथे सोपान पर अपने निर्णय को अपने तक सीमित रखना वह बाधा बन जाता है।

पांचवां टीम वर्क का अभाव- किसी का सहयोग नहीं लेंगे, अकेले ही सब कुछ करेंगे वह बाधा बन जाता है।

छठवां आलस्य, श्रम करने से हिचकिचाना- वह बाधा बन जाता है।

सातवां सफलता मिलने पर अहंकार से भर जाना, या असफल हो जाने पर हीनता की ग्रन्थी से पीड़ित हो जाना यह बाधा बन जाता है। यह फिर आगे के संकल्प में बाधा बनेंगे।

ये सात सोपान हैं तो सात प्रकार की बाधायें भी सम्भव हैं।

आठवां बिन्दु मैं कहना चाहूंगा असम्यक् विश्लेषण। हमें जीत मिली या हार मिली उसके बाद यदि हमने घटना का ठीक-ठीक विश्लेषण नहीं किया कि किस कारण से हम असफल हुए तो आगे हम फिर असफल होंगे। मैंने सुना है मुल्ला नसरुद्दीन ने तय किया कि शराब के बारे में पता लगाना है कि शराब में ऐसा कौन सा तत्व है जिससे नशा चढ़ता है। तो एक दिन उसने रम में सोडा वॉटर मिला कर पिया। खूब नशा उसे चढ़ गया। उसने अपनी डायरी में नोट कर लिया कि सोडा वॉटर धन (+) रम नशा आया। दूसरे दिन उसने रम की जगह विस्की रखी और सोडा मिलाकर पिया। फिर भी नशा हो गया। तीसरे दिन उसने शैम्पेन में सोडा मिला कर पिया, उस दिन भी नशा चढ़ गया। इस प्रकार एक हफ्ते तक उसने विभिन्न प्रकार की शराबों के साथ प्रयोग किये और तब आठवें दिन उसने निष्कर्ष निकाला कि इन सातों में जो कॉमन फैक्टर है वह सोडा ही है। इससे सिद्ध होता है कि सोडा से ही नशा होता है और आज से कसम खाता हूँ कि सोडा नहीं मिलाऊंगा।

हमारे विश्लेषण में भूल-चूक हो सकती है। और तब हम जो आगे निर्णय करेंगे वे फिर गलत हो जायेंगे। तो एक ठीक-ठीक विश्लेषण, एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अपनी जीत का या हार का, दोनों का ही विश्लेषण करें। यदि हम सफल हुए तब भी हम उन बिंदुओं के देखें कि कैसे सफल हुए ताकि उनको हम आगे और बढ़ा सकें। अगर हम असफल हुए तब भी हम देखें कि किन बिंदुओं से हम असफल हुए, इसका ठीक-ठीक विश्लेषण हो। कभी-कभी ज्यादा अच्छा होता है कि हम स्वयं विश्लेषण करने के बजाय किसी और से विश्लेषण करवायें। क्योंकि हमने जो किया है उसके प्रति हमारा

मोह बन जाता है, हमारा साक्षी भाव उसमें खड़ा नहीं हो पाता। दूसरा व्यक्ति ज्यादा अच्छे से देख पाता है, वह हमारा साक्षी हो पाता है। कबीर ने कहा है 'निंदक नियरे राखिये आंगन कुटी छवाय'। निंदा करने वाले को, आलोचना करने वाले को अपने पास ही रख लेना स्वागत करके। बड़ी महत्त्वपूर्ण बात कही। अक्सर हम आलोचकों से बचते हैं। लेकिन मैं आपसे कहता हूँ आपके आलोचकों का आप सदुपयोग करना सीख जाएं तो उनसे बड़ा कोई मित्र नहीं है, क्योंकि वे आपको वो पॉइन्टस बता रहे हैं जो आपके गलत बिंदु हैं। यदि आप उनकी बात को सुनें गौर से, उनकी बात पर ध्यान दें, तब आपके जीवन में ज्यादा सही विश्लेषण हो पायेगा। आप स्वयं अपना विश्लेषण उतना अच्छा कभी भी नहीं कर सकते। जो समझदार व्यक्ति है वह अपने आलोचकों की बात में से भी अपनी सफलता के सूत्र ढूंढ लेता है। तब उसके आलोचक भी उसके लिये हितैषी ही साबित होते हैं। उसकी बुराई करने वाले लोग भी अंततः उसका हित ही कर जाते हैं।

प्रश्न ६ : क्या समर्पण का मार्ग संकल्प के मार्ग से विपरीत है?

उत्तर : जरा भी नहीं। केवल सुनने में ऐसा लगता है कि दो विपरीत बातें हैं। बिल्कुल एक ही हैं। संकल्प का अर्थ क्या हुआ? संकल्प का अर्थ हुआ कि अपने किसी एक लक्ष्य के प्रति समर्पित, सिर्फ भाषा का ही तो डिफ्रेन्स है, आप जिसको समर्पण कह रहे हैं। संकल्प का अर्थ हुआ कि अपने निर्णय के प्रति समर्पित; तो समर्पण तो इसमें भी आ गया। और समर्पण अपने आप में एक महासंकल्प है, याद रखना। संकल्पवान व्यक्ति ही समर्पण कर सकता है। जो डांवाडोल चित्त का है, संशय में डोलने वाला है वह कैसे समर्पण करेगा। आज वह कह रहा है कि आपके चरणों में सब छोड़ता हूँ कल को वह फिर पलट जाएगा, क्योंकि उसके अन्दर तो टुकड़े-टुकड़े हैं। एक हिस्से ने समर्पण किया, दूसरा हिस्सा उसके विपरीत संदेह से भरा हुआ होगा, अश्रद्धा से भरा हुआ होगा। तो श्रद्धा, समर्पण और भक्ति का मार्ग भी महासंकल्पवान व्यक्ति ही पूरा कर सकता है। जिसने कहा कि झुक गया यह सिर, तो फिर झुक ही गया अब न उठेगा। यह तो महासंकल्पवान व्यक्ति ही कर सकता है। इसलिए सुनने में जरूर लगता है कि समर्पण और संकल्प के मार्ग भिन्न हैं लेकिन ऐसा जरा भी नहीं क्योंकि समर्पण संकल्पवान व्यक्ति ही कर सकता है। और संकल्प का मतलब ही होता है अपने निर्णय के प्रति पूरी तरह समर्पित। कमिटमेन्ट का क्या अर्थ हुआ? कमिटमेन्ट का अर्थ है समर्पित।

अतीत में दो प्रकार की संस्कृतियां इस देश में पैदा हुईं– एक ब्राह्मण संस्कृति– समर्पण के मार्ग वाली, भक्ति के मार्ग वाली और दूसरी श्रवण संस्कृति – बुद्ध और महावीर की श्रम और संकल्प वाली। लेकिन मैं इन दोनों में कोई विरोध नहीं देखता और ओशो के संन्यासी को एक पूर्ण संस्कृति का निर्माता होना चाहिए। श्रवण संस्कृति भी अधूरी है और ब्राह्मण संस्कृति भी अधूरी है। एक पूर्ण संस्कृति में दोनों का समन्वय होगा। शुरुआत करो संकल्प से और अंतत: तुम पाओगे तुम्हारे भीतर समर्पण घटित होने लगा।

प्रश्न ७ : क्या संकल्प से ऊपर भी कुछ है?

उत्तर : हां, समझ संकल्प से भी ऊपर है। गीता में उदाहरण आता है भीष्म पितामह का और कृष्ण का। भीष्म पितामह बहुत संकल्पवान हैं लेकिन उनका संकल्प मूढ़ता बन जाता है अंतत:। कभी उन्होंने तय किया था कि सिंहासन पर जो भी बैठेगा उसका साथ दूंगा। लेकिन परिस्थितियां बदल गयीं, अशुभ शक्तियों के हाथ में सिंहासन चला गया, और भीष्म पितामह फिर भी उनका संग–साथ देते रहे। उनका संकल्प, जो कभी शुभ था, परिस्थिति के बदल जाने पर अशुभ हो गया। तो भीष्म पितामह संकल्पवान तो हैं, अपनी प्रतिज्ञा पर डटे हुए तो हैं कि 'प्राण जाये पर वचन न जाये'। लेकिन यह समझदारी नहीं है। इसके ठीक विपरीत कृष्ण हैं। संकल्पवान तो नहीं लगते; कहा था कि नहीं उठाऊंगा शस्त्र और फिर शस्त्र उठा लिया। लेकिन ये ज्यादा समझदार हैं। इसलिए संकल्प से ऊपर मैं समझ को रखता हूँ। जो व्यक्ति समझदार है सचमुच में, उसे संकल्प की कोई जरूरत नहीं है। वह अपने संकल्प को बदल भी सकता है। परिस्थितियों को देखते हुए वह अपने विवेक से चलेगा।

प्रश्न ८ : २१ मार्च, ओशो के सम्बोधि दिवस पर, हमारे लिए आपका क्या संदेश है?

उत्तर : यह संदेश है कि अपने संकल्प को अन्तर्यात्रा की दिशा में लगाओ। महाकवि दिनकर ने कहा है–

'तुम एक अनल कण हो केवल, अनुकूल हवा लेकिन पाकर।
छप्पर तक जा सकते उड़कर, अम्बर में आग लगा सकते।
ज्वाला प्रचंड फैला सकते।'

एक छोटी सी चिंगारी क्या नहीं कर सकती; पूरे जंगल को खाक कर सकती है। हमारे भीतर जो संकल्प की शक्ति है वह एक चिंगारी है। इस चिंगारी को फैलने दो। अपने संकल्प को अंतस की दिशा में लगाओ। बाहर के जीवन में तो तुमने बहुत संकल्प लिए होंगे; कभी विद्यार्थी जीवन में पढ़ाई-लिखाई से संबंधित, कभी गृहस्थ जीवन में नौकरी करने से संबंधित कि व्यवसाय करने से संबंधित। तो इस प्रकार बहुत से संकल्प तुमने बाहर के जीवन में लिए, अपने भीतर के लिए संकल्पित बनो। केवल बाहर-बाहर ही नहीं, असली जीवन का खजाना तो भीतर छुपा है। अपने संकल्प को भीतर मोड़ो, सम्यकता लाओ।

पूछा था न किसी ने कि सम्यक् संकल्प क्या होता है? उसमे मैं जोड़ना चाहूँगा बाहर और भीतर दोनों दिशाओं में यात्रा करना सम्यक् है। अगर कोई व्यक्ति केवल बहिर्मुखी है यह भी असम्यक् और कोई केवल अन्तर्मुखी है यह भी असम्यक्। जीवन का फैलाव दोनों तरफ है, भीतर भी और बाहर भी। बाहर धन भी कमाओ और भीतर ध्यान में भी डूबो। दोनों दिशाओं में तुम्हारी यात्रा हो, तब तुम पूरे-पूरे सम्यक् संकल्पवान बने। तो अपने जीवन को बहने दो, संकल्प को प्रगाढ़ होने दो। अपने आप को कभी छोटा मत समझना, तुम्हारे अन्दर वह बीज रूपी शक्ति छिपी है– तुम एक अनल कण हो केवल।

अनुकूल हवा लेकिन पाकर, छप्पर तक जा सकते उड़कर।
अम्बर में आग लगा सकते, ज्वाला प्रचंड फैला सकते।

जो बुद्ध को हुआ, जो महावीर को हुआ, जो गुरुनानक को हुआ, जो ओशो को हुआ वह हम में से प्रत्येक को हो सकता है। वह हम सबकी सम्भावना है। वह बीज हम लेकर ही पैदा हुए हैं। जब तक वह बीज फूल न बन जाए, जब तक तुम भी बुद्धत्व को न जान लो, ठहरना मत, रुकना मत, चले चलना –चरैवेति चरैवेति चरैवेति। आज सम्बोधि दिवस पर यही मेरा संदेश है– चलते रहो, चलते रहो, जब तक कि अपनी परम मंजिल-परमात्मा को न पा लो।

धन्यवाद।

चार

हठयोग और प्राण ऊर्जा

हठयोग समझने के लिए थोड़ी सी भूमिका की बातें पहले कर लें।

मनुष्य की चेतना बहिर्मुखी अथवा अंतर्मुखी दो दिशाओं में गतिमान हो सकती है। पुनः बहिर्मुखी चेतना दो प्रकार की हो सकती है- चंचलता वाली या एकाग्रता वाली। यदि हम एक बिन्दु पर स्थिर हैं, हमारी बाहर जाने वाली चेतना का तीर एक बिन्दु पर एकाग्र है तो उसे कहते हैं एकाग्र चेतना- (फोकस्ड कॉन्शसनेस) और इसका विपरीत-चंचल चित्त, जब हमारा मन यहाँ-वहाँ डोल रहा वह जो चेतना का तीर बाहर की ओर जा रहा है उसकी दिशा सुनिश्चित नहीं है, बार बार विषय बदलता है। एकाग्रता में विषय स्थिर है, चंचलता में विषय बदल रहा है। हठयोगी यदि अपने आप को एकाग्र कर रहे हैं किसी बिन्दु पर, तब वह योग नहीं हुआ क्योंकि एकाग्रता का वह बिन्दु स्वयं से बाहर है। समझें कि कोई त्राटक कर रहा है या दीवार पर एक निश्चित बिन्दु बनाकर उसकी तरफ देख रहा है या श्वासों को एकाग्र होकर देख रहा है, यह भी योग नहीं हुआ क्योंकि चेतना अभी भी बाहर की ओर ही जा रही है, स्वयं की ओर नहीं आ रही। तो चंचलता और एकाग्रता

दोनों ही बहिर्मुखी चेतना की दो दिशाएं हैं जबकि ध्यान की शुरुआत ही दृ**श्यभाव?** से होती है। मध्य में आता है साक्षीभाव और अंततः समाधि की अवस्था बनती है- योग उसकी प्रक्रिया है। तो जब तक दृश्यभाव, साक्षीभाव और समाधि न आए तब तक जानना कि योग नहीं हुआ, ध्यान नहीं हुआ। तो सिर्फ एकाग्र होकर आसन साधना, मुद्रा बांधना कि बंध लगाना या प्राणयाम साधना, ज्यादा से ज्यादा दृश्यभाव तक ले जा सकेगा इसके आगे नहीं। अक्सर तो लोग दृश्यभाव में भी नहीं जाते, चेतना पूरी की पूरी बहिर्मुखी रह जाती है। इसलिये इस बात को खूब अच्छे से समझ लें कि एकाग्रता ध्यान नहीं है-

कनसन्ट्रेशन इज नॉट मेडिटेशन। वे जो हठयोगी जबरदस्ती अपने चित्त को इन्द्रियों से हटाकर कहीं और लगाने की कोशिश कर रहा है, उसमें सफलता उसे नहीं मिलने वाली। बहिर्गामी चेतना चाहे एकाग्र भी हो जाये तब भी वह बहिर्गामी ही है, वापिस लौटना नहीं हुआ प्रत्याहार या प्रतिक्रमण।

दो शब्द समझने जैसे हैं- एक अतिक्रमण दूसरा प्रतिक्रमण। अतिक्रमण का अर्थ होता है अपनी सीमा के बाहर, दूसरे पर आक्रमण- हम अपनी सीमा के बाहर चले गये, हम अपनी रेखा लांघ गये। आपने सुना होगा न शहर में अतिक्रमण कर लिया लोगों ने, म्यूनिसपैल्टी ने मकान गिरा दिये अतिक्रमण वाले। अतिक्रमण का क्या अर्थ है वहां? लोगों ने अपने मकान की सीमा के आगे मकान बना लिया, सरकारी जमीन पर बिल्डिंग खड़ी कर ली। और प्रतिक्रमण का क्या अर्थ हुआ- इसके विपरीत अपनी सीमा में वापिस लौटना। पतंजलि ने उसे प्रत्याहार कहा है। महावीर ने प्रतिक्रमण कहा है। जापान के झेन फकीरों ने उसे नाम दिया है रिटर्निंग टू द सोर्स- मूल उद्गम की ओर वापसी। तो जब तक हमारी चेतना प्रत्याहार न करे, प्रतिक्रमण न करे, चेतना का प्रकाश मूल उद्गम-उस दीपक की तरफ न चले जहां से वह आया है तब तक योग नहीं हुआ। चेतना का प्रकाश अगर केवल बाहर की ओर जा रहा है भले ही वह एकाग्र है- टॉर्च की तरह तब भी वह ध्यान नहीं हुआ। तो एकाग्रता को ध्यान मत समझना। एक स्टूडेंट जो क्लास मे पढ़ रहा है, चित्त उसका एकाग्र है, शिक्षक जो कह रहे हैं वह सुन रहा है, ब्लैक बोर्ड पर जो लिखा जा रहा है वह देख रहा है, इससे उसकी कोई आध्यात्मिक उन्नति नहीं हो जाएगी। हां, वह अपने कार्य में सफलता पाएगा, परीक्षा में अच्छे नम्बर ला सकेगा क्योंकि वह एकाग्र होकर पढ़ रहा था। लेकिन यह एकाग्रता बहिर्मुखी है, इससे कोई आत्मज्ञान घटित नहीं हो जाएगा। एक वैज्ञानिक एकाग्र है, माइक्रोस्कोप में देख रहा है, कुछ अन्वेषण कर रहा है, वह पदार्थ के बारे में जान लेगा, कि वह दूरबीन लगा के दूर ग्रह नक्षत्रों का अध्ययन कर रहा है, चेतना उसकी अभी भी बहिर्गामी है। यद्यपि वह बड़ा एकाग्र है; अंतरिक्ष का अध्ययन कर रहा है, खगोलविद् है, बड़ी जानकारी प्राप्त कर लेगा वह। लेकिन आत्मज्ञान घटित नहीं हो जाएगा। तो बाहर हमारा चित्त चंचल हो कि एकाग्र, अंततः वह बहिर्गामी ही है। तो जब तक पहले प्रतिक्रमण न करे, अपनी ही ओर वापिस न लौटे तब तक आत्मज्ञान के निकट वह नहीं आएगा। तो

कनसन्ट्रेशन इज नॉट मेडिटेशन- ध्यान समग्रता है, एकाग्रता नहीं- अवेयरनेस इन टोटैलिटि। और फिर उस टोटल अवेयरनेस के भी पार हम जाते हैं, योग की दिशा में, जब हम स्वयं के भीतर निमज्जित हो जाते हैं।

तो कुछ टर्म्स बड़े महत्त्वपूर्ण हैं- एकाग्रता, चंचलता, तल्लीनता। तल्लीनता का अर्थ है एक विषय में डूब जाना, लेकिन वह विषय हम से बाहर ही है। एक कवि कविता के विषय मे डूबा हुआ है, एक चित्रकार चित्र बना रहा है और पूरी तरह तल्लीन है, लेकिन इसकी तल्लीनता की कोई आध्यात्मिक कीमत नहीं है। क्योंकि तल्लीनता का विषय भी स्वयं से बाहर ही है। तो तल्लीनता भी ध्यान नहीं है। सामान्य भाषा में हम कह सकते हैं कि वह बड़े ध्यानपूर्वक चित्र बना रहा है। तो सामान्य भाषा में तो ठीक, लेकिन आध्यात्मिक भाषा में यह ध्यान नहीं हुआ। महावीर ने एक नया शब्द प्रयोग किया है संल्लीनता। संल्लीनता का अर्थ है- स्वयं के भीतर तल्लीन होना। वह विषय जिसमें हम तल्लीन हो रहे हैं, हमसे बाहर नहीं बल्कि हमारा स्वयं का होना है। अपने होने में जो डूबा, उसका नाम है संल्लीनता।

समग्रता बीच में हुई। समग्रता में दोनों बातें हैं- बहिर्मुखी चेतना और अंतर्मुखी चेतना इकट्ठी। ऐसा समझें कि किसी मकान की देहरी पर हम खड़े हैं- एक पैर घर के बाहर और एक पैर घर के भीतर; बाहर का दृश्य भी दिखाई दे रहा, भीतर का दृश्य भी दिखाई दे रहा- यह हुई समग्रता (अवेयरनेस इन टोटैलिटि) तो जिसको हम साक्षीभाव या ध्यान कह रहे हैं वह है मध्य की अवस्था, देहरी पर खड़े हुए। बहिर्मुखी व्यक्ति घर के बिलकुल बाहर है उसे घर के भीतर का कुछ पता नहीं और समाधिस्थ व्यक्ति अपने घर के भीतर पहुँच गया, भीतर के शून्य आकाश में संल्लीन हो गया, स्वयं में डूब गया। तो ये कुछ पारिभाषिक शब्द हमारे काम के होंगे समझने के लिये।

अब हठयोग पर आते हैं- हठयोग का सबसे महत्त्वपूर्ण बिन्दु है श्वास। श्वास और प्रश्वास को पान और अपान भी कहा जाता है। पतंजलि की भाषा में इसको पूरक और रेचक कहते हैं। भीतर जाती श्वास अर्थात् पूरक और बाहर जाती श्वास अर्थात् रेचक, जिसको हम अंग्रेजी में कह सकते हैं- इन्हेलेशन ऐण्ड एग्जेलेशन। बुद्ध पाली भाषा का प्रयोग करते थे। उनकी भाषा में इसे पान और अपान कहा जाता है, दोनों को मिलाकर इकट्ठा अनापान कहते हैं। पाली भाषा में सती शब्द का अर्थ होता है स्मृति, जैसे सम्मासती यानी सम्यक् स्मृति;

तो अनापानसती का अर्थ है आती जाती श्वासों की स्मृति अर्थात् होशपूर्वक आती जाती श्वासों को देखना। योग का अर्थ तो आप जानते हैं। अनापासती योग का अर्थ है आती जाती श्वासों का स्मरण रखते हुए आत्मस्मरण में डूबना, योग की अवस्था में पहुंचना, यह अनापानसती योग हुआ। विपस्सना शब्द धीरे-धीरे अनपानसती योग का पर्यायवाची हो गया यद्यपि इसका अर्थ थोड़ा सा भिन्न है। विपस्सना का अर्थ होता है देखना, जिसे हम द्रष्टाभाव या साक्षीभाव कह रहे थे। संस्कृत का शब्द है पश्य, पश्य यानी देखना। उससे बना है विपस्सना। बुद्ध कहते थे भिक्षुओं, इहि पश्यिको- आओ, और देखो, पलट कर देखो। पलटकर देखो का अर्थ प्रतिक्रमण कर, वापिस लौटकर अपने भीतर देखो। देखने के लिये बुद्ध ने तीन सहारे कहे थे, तीन आलम्बन। पहला- अपने शरीर की क्रियाओं को देखना। दूसरा- मन की क्रियाओं अर्थात् विचारों को देखना और तीसरा- श्वास को देखना। बुद्ध ने श्वास पर बहुत जोर दिया। बुद्ध मध्यम मार्ग के प्रर्वतक हैं। कर्म है बाहर परिधि पर, मन है भीतर, मध्य में है श्वास। बुद्ध कहते हैं मध्य को पकड़ लो। न तो कर्म पर उनका जोर है न विचारों पर उनका जोर है; कर्म स्थूल शरीर करता है विचार मानस? शरीर करता है, दोनों के बीच का, जोड़ने वाला सेतु है।

बुद्ध कहते हैं तुम तो श्वास के प्रति होश को साध लो। यहां से बड़ा आसान रास्ता बन जाएगा आत्मस्मरण का।

तो तीन प्रकार की विपस्सना उन्होंने कही- शरीर की क्रियाओं को देखना, आती-जाती श्वास को देखना, मन मे चल रहे विचारों को देखना- ये तीनों ही विपस्सना कहलाते हैं। तो अनापानसती योग विपस्सना का एक प्रकार हुआ, लेकिन कालान्तर में अनापानसती योग इतना ज्यादा प्रचलित हुआ क्योंकि बुद्ध ने उस पर बहुत जोर दिया था, इसलिए विपस्सना और अनापानसती आपस में पर्यायवाची ही हो गये, समानार्थी हो गये। तो आज जब हम कहते हैं विपस्सना तो हमारा सामान्य अर्थ अनापानसती योग ही होता है। लेकिन मूल अर्थ विपस्सना का दृश्यभाव, साक्षीभाव ही है। बुद्ध कहते थे भिक्षुओं से कि बैठकर अपनी श्वास देखना, अगर तुम्हें लगे कि मूर्छा घेरने लगी, तमस और प्रमाद बढ़ने लगा तो उठ के खड़े हो जाना, धीरे-धीरे चलने लगना; चलने की इस क्रिया को देखना, इसका नाम उन्होंने रखा चक्रमण। चलते हुए अपने पैरों की गति को देखना और सांसों को भी देखना और अपना होश भी रखना कि मैं

देखने वाला दृश्य हूँ तो 'चक्रमण ध्यान'। कभी चुपचाप बैठे अपने मन के भीतर विचारों को देखना कि विचार आ जा रहे हैं।

ओशो ने कहा है कि आज तक जितने भी लोग बुद्धत्व को उपलब्ध हुए

हैं उनमें से सबसे ज्यादा लोग विपस्सना के प्रयोग से हुए हैं। तो तीन प्रकार की विपस्सनाओं में सबसे सरल विधि है- अनापानसती योग। और सारे योग के रास्ते कोई खास प्रकार के व्यक्ति के काम आएंगे। समझो कोई व्यक्ति भावुक है तो वह भक्त बन सकेगा, हर कोई भक्त न बन सकेगा। कोई व्यक्ति बड़े कर्मठ किस्म का है तो वह कर्मयोगी बन सकेगा, सभी लोग तो कर्मयोगी न बन सकेंगे। कोई बड़ा विचारक है तो वह ज्ञानयोगी बन सकेगा, सारे लोग ज्ञानयोगी नहीं बन सकते। सबकी लिमिटेशन्स हैं, सीमाएं हैं; लेकिन अनापानसती योग ऐसा है जो हर किस्म के व्यक्तियों के काम आ सकेगा।

हठयोग ऐसा है कि सभी लोग इसमें गति कर सकते हैं। तो ओशो का यह वक्तव्य बड़ा महत्त्वपूर्ण है कि आज तक जितने लोग भी बुद्धत्व को प्राप्त हुए हैं, सबसे ज्यादा लोग श्वास की विधि के द्वारा उपलब्ध हुए हैं। हठयोग का जोर श्वास पर है।

पतंजलि कहते हैं- पूरक, रेचक और कुम्भक। कुम्भक अर्थात् श्वास को रोकना। कुम्भक के दो प्रकार हैं- अंतर्कुम्भक और बहिर्कुम्भक। बहिर्कुम्भक

का अर्थ है- रेचक के बाद श्वास को बाहर रोकना और अंतर्कुम्भक का अर्थ है पूरक श्वास के बाद श्वास को भीतर रोकना। कुम्भक शब्द बना है कुम्भ से, कुम्भ यानी घड़ा। जब हम भीतर श्वास लेते हैं और पेट को फुला के श्वास को रोक लेते हैं, हमारा पेट घड़े की भांति फूल गया, कुम्भ जैसा दिखाई देने लगा, इसीलिये इसका नाम कुम्भक पड़ा। तो अंतर्कुम्भक और बहिर्कुम्भक और तीसरे प्रकार का कुम्भक- पतंजलि कहते हैं कि कहीं पर भी श्वास को रोकना, उसे सिर्फ कुम्भक कहा है। तो अंतर्कुम्भक और बहिर्कुम्भक में तो एक खास अवस्था में श्वास रोकी गई और जिसे सामान्य कुम्भक कहा गया है उसमें कहीं पर भी जब याद आई तभी श्वास रोक ली, किसी विशेष अवस्था में नहीं। आ रही थी तो आती हुई रोक ली, जा रही थी तो जाती हुई रोक ली, ठहरी हुई थी, मुड़ रही थी, जहां याद आयी वहीं रोक ली, उसका नाम है सामान्य कुम्भक। तो अंतर्कुम्भक और बहिर्कुम्भक विशेष अवस्थाएं हुईं कुम्भक की तथा एक अवस्था हुई सामान्य कुम्भक- ऑल ऑफ सडेन, अचानक जहां थे वहीं रोक लिया।

कुम्भक इसलिये महत्त्वपूर्ण है क्योंकि हमारी श्वासों के विशेष ढांचे से हमारे मन की, हमारी चेतना की विविध अवस्थाएं जुड़ी हुई हैं। उदाहरण के लिये, जब हमें क्रोध आता है तो श्वास एक विशेष प्रकार से चलती है, जब हम शांत होते हैं तो अलग ढंग की श्वास चलती है। आप गौर करना जब कामवासना चित्त को पकड़ती है, श्वास का पैटर्न बदल जाता है, जब प्रेम से भरे हुए होते हैं श्वास अलग तरीके से चलती है, जब आप बेचैन होते हैं श्वास का ढंग बदल जाता है, जब आप प्रसन्न होते हैं श्वास का ढंग बदल जाता है, जब आप उदास होते हैं श्वास अलग तरीके से चलती है। हमारे चित्त की अवस्थाएं, हमारी भावदशाएं विविध प्रकार के श्वास के पैटर्न से जुड़ी हुई हैं। चित्त की दशाओं को बदलना तो कठिन है। अगर आप उदास हैं और मैं आपसे कहूँ कि प्रसन्न हो जाओ तो आप कैसे प्रसन्न होओगे। वह उदासी जाने में समय लेगी। हो सकता है घंटा लगे, दो घंटे लगें, चार दिन लग जाएं। आपके वश में नहीं है चित्त की दशा को बदलना। लेकिन योगियों ने खोज लिया है कि उदासी के साथ एक विशेष प्रकार की श्वास की पैटर्न जुड़ी हुई है। यदि आप श्वास की उस पैर्टन को बदल दें तो उदासी विदा हो जायेगी। यदि आप श्वास ऐसी लेने लगें जैसी आप प्रसन्न भाव में लेते हो, प्रफुल्लता में लेते हो,

पांच मिनट का प्रयोग और अचानक आप पाओगे कि आपकी भावदशा परिवर्तित हो गई। यह तो बड़ा जादुई असर हो जाएगा। इसका मतलब यदि आप दुखी हो तो एक खास प्रकार की श्वास उसमें चल रही है, आप श्वास के उस पैटर्न को तोड़ दो। आप ऐसी श्वास लेने लगो जैसी आप खुशी के क्षणों में लेते हो, उत्सव के क्षणों में लेते हो तो दुख की वह भावदशा मिट गई। वह कहां वाष्पीभूत हो गई पता भी न चलेगा।

यह तो बड़ी अद्‌भुत तरकीब हाथ में आ गई। श्वास को बदल के हम अपने भीतर की भावदशा को रूपांतरित कर सकते हैं। कामवासना ने चित्त को पकड़ा है, वासना से लड़ने की कोई जरूरत नहीं है, आप केवल श्वास का पैटर्न बदल लो। आप शांतचित्त दशा में जैसी श्वास लेते हो, निर्वासना की अवस्था में जैसी श्वास लेते हो वैसी ही श्वास लेना शुरू कर दो और पांच मिनट भी नहीं लगेंगे कामवासना तिरोहित हो जाएगी। क्रोध की अग्नि भीतर जल रही है, इस अग्नि से उलझने की जरूरत नहीं। अब चुपचाप ऐसी श्वास लेने लगो जैसी आप शान्ति के क्षणों में लेते हो, प्रेम के क्षणों में, करुणा के क्षणों में, दया के क्षणों में, सहानुभूति के क्षणों में जैसी श्वास आप लेते हो वैसी शुरू कर दो, आप पाओगे कि क्रोध की अग्नि ठंडी हो गई, न केवल ठंडी हो गई उसकी ऊर्जा प्रेम और करुणा में संलग्न हो गई, रूपांतरित हो गई। आपने दमन नहीं किया किसी चीज का, आपने उस ऊर्जा का उपयोग कर लिया किसी और चीज में। वह क्रोध की ऊर्जा, वह शक्ति जो क्रोध के द्वारा पैदा हुई थी, आपने श्वास को बदलकर उसे एक नई दिशा दे दी। आप उत्सव मनाने लगे, नाचने लगे, झूमने लगे, क्रोध की शक्ति उत्सव में रूपांतरित हो गई। तो श्वास को बदलकर हम अपने भीतर की चेतना की अवस्था को भी बदल सकते हैं। योगियों ने बड़े पुराने समय में इस रहस्य को सीख लिया।

तो हठयोग की मुख्य जो आधारशिला है वह श्वास का प्रयोग है। प्राणायाम का शाब्दिक अर्थ होता है प्राणों का फैलाव- एक्सप्रेशन ऑफ वाईटैलिटी- वह जो हमारी प्राण ऊर्जा है उसे फैलाना। हमारी जो एस्ट्रल बॉडी है, हमारा जो सूक्ष्म शरीर है जिसे हम तीसरा शरीर कहते हैं वह हमारे तीसरे चक्र मणिपुर से जुड़ा हुआ है। जब हम गहरी श्वास लेते हैं, गहरी श्वास छोड़ते हैं, जब हम अंतर्कुम्भक या बहिर्कुम्भक करते हैं, तो हमारी एस्ट्रल बॉडी, हमारा सूक्ष्म शरीर फैलता है। अब तो इसके वैज्ञानिक प्रमाण भी उपलब्ध हैं। किरलियान

की फोटोग्राफी के द्वारा फैले हुए आभामंडल के चित्र लिये जा सकते हैं। जब हम उदास होते हैं, दुखी होते हैं, चिंतित होते हैं अथवा भयभीत होते हैं या किसी नकारात्मक भावना से भरे होते हैं, हमारा आभामंडल सिकुड़ जाता है। सबसे ज्यादा सिकुड़ता है भय की अवस्था में, और सबसे ज्यादा फैलता है प्रेम और करुणा की अवस्था में। आभामंडल विस्तीर्ण हो जाता है। जब हम वास्तव में प्रेम, करुणा से भरे होते हैं तो हम एक प्रकार से उत्सव की भावदशा में हैं– ओवर फ्लोइंग ऑफ एनर्जी। हम अपनी ऊर्जा शेयर कर रहे हैं दूसरे के साथ, प्रेम का वही तो अर्थ होता है। हम अपनी प्राण शक्ति दूसरे पर उलीच रहे हैं, करुणा का वही तो अर्थ होता है। हम अपने आपको अर्पित कर रहे हैं, हम दूसरे के साथ बाँट रहे हैं अपने होने को, अपनी ऊर्जा को, अपनी जीवन शक्ति को। तो प्रेम में हमारा आभामंडल फैल जाता है, डर में हमारा आभामंडल सिकुड़ जाता है। डर प्रेम की उल्टी अवस्था है। साधारणतः हम सोचते हैं प्रेम का उल्टा है घृणा। नहीं, हम गलती में हैं। प्रेम का उल्टा घृणा नहीं होता। वे उल्टे नहीं हैं, वे तो संग साथ चलते हैं। जिससे आप प्रेम करते हो उसी से आप घृणा भी करते हो। इसलिये उनको विपरीत कहना ठीक नहीं है। रोज सुबह पति–पत्नी का झगड़ा होता है शाम को फिर प्रेम हो जाता है। अगर ये विपरीत होते तो एक साथ कैसे घटते। आप अपने माता–पिता से थोड़ी बहुत नफरत भी करते हो और उनका आदर भी करते हो। तो इनमें आपस में कुछ विपरीत नहीं है। प्रेम और घृणा तो संग साथ चलते हैं। विपरीत क्या हैं? प्रेम और भय। जिससे आप भयभीत हो उससे आप कभी प्रेम नहीं करते और जिससे आप प्रेम करते हो उससे आप डरते नहीं हो, यही प्रेम का लक्षण है। जिससे आपको डर न लगे जानना कि सच्चा प्रेम है। इसलिये जिसे हम प्रेम करते हैं, जिससे हमारा मैत्रीभाव है, उसके सामने हम अपने को पूरा उघाड़ पाते हैं, अपने हृदय को पूरा खोल पाते हैं अर्थात् हमें उससे डर नहीं है। हम भयभीत नहीं हैं कि हम अपने हृदय की सारी बात इससे कह देंगे तो यह कोई नाजायज फायदा उठा लेगा। अब हमारा भय मिट गया, यह प्रेम का लक्षण है। इसलिये प्रेम और भय एक दूसरे के विपरीत हैं। किरलियान की फोटोग्राफी से भी यही सिद्ध होता है कि प्रेम में हमारा आभामंडल विस्तीर्ण हो जाता है, भय में हमारा आभामंडल बिलकुल सिकुड़ जाता है। प्राणायाम के द्वारा हम अपने आभामंडल को, अपने सूक्ष्म शरीर को फैला सकते हैं, यही प्राणायाम

का महत्त्व है। इसमें रेचक पूरक श्वास बहुत महत्त्वपूर्ण है। कुम्भक का भी बड़ा गहरा इसमें उपयोग किया जा सकता है। पतंजलि अपने योग सूत्र में लिखते हैं कि एक चौथे प्रकार का प्राणायाम और है, उसका उन्होंने विस्तार से वर्णन नहीं किया। ओशो ने पतंजलि योग सूत्र प्रवचनमाला 'योगा दी अल्फा ऐण्ड दी ओमेगा' में चौथे प्राणायाम को समझाते हुए बताया है कि बुद्ध के अनापानसती योग को पतंजलि ने चौथा प्राणायाम कहा है। बुद्ध कहते हैं कि न तो रेचक पर जोर दो, न पूरक पर जोर दो, न कोई कुम्भक करो। वह जो प्राकृतिक श्वास का आना-जाना है, जो अपने आप चल ही रही है, तुम चुपचाप बस उसके दृश्य बन जाओ। धीरे-धीरे दृश्य से साक्षीभाव में चलो और साक्षी से समाधि की अवस्था में गति करो।

योग का जो प्राणायाम है वह है एक विशेष प्रकार की श्वास, एक खास प्रकार का पैटर्न श्वास का, कि इतनी बार श्वास लो, इतनी बार छोड़ो, कि बायीं तरफ से श्वास लो, कि दाहिनी तरफ से छोड़ो, अलग-अलग प्रकार के प्राणायाम योगियों ने खोजे। बुद्ध ने कहा है कि इन सब विधियों में पड़ने की कोई जरूरत नहीं। वह जो सहज स्वाभाविक श्वास अपने आप चल ही रही है, तुम तो उसके दृश्य बन जाओ। किसी विधि में न उलझो क्योंकि ऐसा न हो कि हम विधि में ही अटक जायें और साक्षीभाव को भूल ही जायें। यही हुआ योगियों के साथ। विधि तो उन्होंने ठीक-ठीक कर ली लेकिन जो मूल तत्व था साक्षीभाव, उसको भूल ही गये विधि के चक्कर में। तो बुद्ध ने कहा

कि विधि-विधान छोड़ो, सांस जैसी चल रही है उसे चलने दो, चुपचाप देखो। तुम देखने वाले बनो और देखते-देखते आत्मस्मरण से भरो कि कौन है देखने वाला। अपनी याद आ जाए। तो एक तीर तुम्हारा श्वास की तरफ, दूसरा स्वयं की ओर- डबल ऐरोड कॉन्शसनेस हो जाए। फिर धीरे-धीरे बाहर वाले तीर को भी समेट लेना। जब भीतर खूब होश सध जाए, आत्मस्मरण प्रगाढ़ होने लगे, फिर श्वास को भी भूल जाओ और चेतना को पूरा का पूरा अन्तर्मुखी कर लो। स्वयं के प्रति पूरा होश, अपने आप में संल्लीन हो जाओ। तब हम समाधि की अवस्था में पहुँच गये।

इस प्रकार हमने शुरुआत की श्वास से, साक्षीभाव में आए और साक्षी से फिर समाधि की अवस्था मे चले। फिर श्वास को भी भूल गये, शुद्ध आत्मस्मरण में डूब गये। तो अनापानसती योग पतंजलि के द्वारा कहा गया प्राणायाम का चौथा प्रकार समझें। बुद्ध ने जब स्वयं साधना की, उस समय उन्होंने आती जाती श्वास को अपनी नासिका पर केन्द्रित करके देखा था। स्वयं साधना काल के दौरान उन्होंने नाक पर एकाग्रता साधी थी। श्वास आ रही, नासापुटों को छू रही ठंडी हवा, श्वास बाहर जा रही, उसकी गरमाहट नाक पर महसूस हो रही, ऐसा महसूस करते-करते उन्होंने अनापानसती योग साधा था। जब बौद्ध धर्म भारत से चीन गया, चीन से जापान और अन्य एशिया के देशों में फैला, वहाँ पर इस विधि में परिवर्तन हो गया। बुद्ध की बात चीन पहुँचने के पूर्व ताओवादी संतों की परंपरा का बहुत प्रभाव चीन के लोगों पर पड़ चुका था। उन लोगों का जोर नाभि केन्द्र पर था। बुद्ध की विपस्सना और नाभि केन्द्र पर जोर ये दोनों चीजें आपस में जुड़ गईं। तो चीन, जापान, थाइलैंड, कोरिया में जो प्रकार विपस्सना का था वह था अपनी नाभि को उठते गिरते देखना। नाक पर जोर नहीं था, पेट पर जोर चला गया। विपस्सना विधि परिवर्तित हो गई और पहले से भी ज्यादा प्रीतिकर हो गई। नाक पर जब हम ध्यान लगाकर देखते हैं तो एक सूक्ष्म सा तनाव भीतर बना रहता है। यदि हम पेट पर ध्यान लगाएं, श्वास के साथ फूलते, पिचकते पेट को देखें, नाभि केन्द्र पर हमारी दृष्टि हो भीतर से, तब हम पाते हैं कि एक बड़ा गहरा रिलैक्सेशन, एक गहन विश्राम भीतर घट गया, जो कि नाक को देखते हुए कभी भी नहीं हो सकता। तो चीन और जापान में एक नया ही रूप विपस्सना का पैदा हुआ। लाओत्सु पर प्रवचन देते हुए 'ताओ उपनिषद्' नामक प्रवचनमाला के चौबीसवें

प्रवचन में ओशो ने 'तान्देन' की विधि समझाई है। यह प्रवचन बहुत महत्त्वपूर्ण है, हर साधक को सुनने और करने जैसा। तो मैं 'तान्देन' की विधि को हठयोग का ही एक प्रकार कहूँगा। मणिपुर चक्र को ही वे तान्देन कहते हैं। इसी को जापान में हारा केन्द्र भी कहते हैं। वे कहते हैं लम्बी गहरी श्वास और पेट का निचला हिस्सा, जो नाभि के भी दो इंच नीचे है जहाँ तक हमारी श्वास जाती है गहरी से गहरी, उस हिस्से पर नजर रखो। 'तान्देन' विधि में वे कहते हैं- बाहर छूटती हुई श्वास पर हल्का सा जोर दो। पूरक श्वास पर जोर मत दो, रेचक श्वास पर जरा सा जोर दो। बहुत हल्का सा, इतना हल्का कि बाहर से किसी को पता भी न चले कि आप कोई विशेष प्रकार की श्वास ले रहे हैं। सामान्य से बस पाँच-दस प्रतिशत ज्यादा जोर देना, तो नाभि से करीब दो इंच नीचे आपको एक हल्का सा झटका महसूस होगा- जाती हुई श्वास के अन्तिम हिस्से में हल्का सा झटका। यह 'तान्देन' की विधि है जो लाओत्सु ने अपने शिष्यों को सिखाई। भारतीय योग पद्धति से मैं इसे और भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण मानता हूँ, यह ज्यादा सूक्ष्म है। हम दिन भर कभी भी इसका अभ्यास कर सकते हैं। भारतीय योग पद्धति के लिये तो हमें विशेष समय निकालना होगा, किसी खास आसन में बैठ के खास ढंग से करनी होगी साधना। लाओत्सु की 'तान्देन' पद्धति हम चलते-फिरते, उठते-बैठते कभी भी कर सकते हैं, जब याद आ जाए तभी शुरू कर दी। हमारे किसी बाह्य कार्य में कोई हस्तक्षेप भी न होगा। हमारे दैनिक क्रिया-कलाप ज्यों के त्यों चलते रहेंगे और भीतर हम 'तान्देन' विधि करते-करते अपने साक्षीभाव में रमने लगेंगे। जापान में उन्होंने और भी विशेष प्रकार की श्वास की पद्धतियां ज्यादा विकसित कीं। सामान्यत: श्वास भीतर लेने में हमारा पेट फूलता है, श्वास छोड़ने में हमारा पेट पिचकता है, जापान में झेन फकीरों ने इस विधि को बिलकुल उल्टा कर दिया। जापान के झेन फकीरों ने ध्यान के साथ युद्ध कला को जोड़ा। तीर चलाना, तलवार चलाना और मल्ल युद्ध के विशेष प्रकार- जूडो कराटे इत्यादि उन्होंने विकसित किये। ध्यान के साथ- साक्षीभाव रखते हुए लड़ना। भारत में ऐसा प्रयोग कभी कोई किया नहीं गया, युद्ध के साथ ध्यान को कभी नहीं जोड़ा गया। जापान मे एक नया प्रयोग उन्होंने किया और उसके लिये जरूरी था कि हमारी प्राण शक्ति बहुत सघन हो तभी हम युद्ध कर पायेंगे। तो श्वास के कुछ प्रकार झेन परम्परा ने खोजे, वे युद्ध के काम के हैं। श्वास बाहर छोड़

के पेट को फुलाना- यह क्रिया हमारी प्राण ऊर्जा को अचानक कई गुना कर देगी, अद्‌भुत रूप से शक्ति का संचार शरीर में हो जायेगा कि व्यक्ति कुशल क्षत्रिय की भांति युद्ध में उतर सकेगा। तो ये खास खास प्रयोग हैं और चूँकि हम यहाँ कोई युद्ध कला नहीं सिखा रहे हैं, इसलिये मैं सिर्फ मेन्शन कर रहा हूँ कि ऐसा भी हठयोग का प्रकार विकसित हुआ है। फिलहाल हमारे लिये तो इसका कोई महत्त्व नहीं है लेकिन जापान में इसका खूब प्रयोग किया गया है।

प्राणायाम के साथ आसन आते हैं। आसन की परिभाषा पतंजलि ने कही है कि शरीर की वह सुखद अवस्था जिसमें हम आराम से देर तक स्थिर रह सकें। कई प्रकार के आसन योगियों ने खोजे, इनमें से थोड़े से हमारे लिये महत्त्वपूर्ण हैं। इन चौरासी आसनों में से बाकी सब ध्यान की दृष्टि से व्यर्थ हैं। वह हठी और जिद्‌दी हठयोगियों की खोज है। पतंजलि की परिभाषा में तो वो फिट ही नहीं आते। पतंजलि तो कह रहे हैं कि सुखद अवस्था हो शरीर की, जिसमें कोई कष्ट न हो। तो पद्‌मासन में बैठना, या सिद्धासन में बैठना, या सुखासन में बैठना, या शवासन में आराम से लेट जाना, या कुर्सी पर आराम से बैठ जाना, या दीवार से टिक के बैठ जाना- हम स्वयं अपना आसन खोज लें कि हमें किसमें आराम मिलता है। हमारे शरीर अलग-अलग हैं, हमारी बनावट थोड़ी भिन्न-भिन्न है। अब किसी को कमर

दर्द की बीमारी है वह बैठ नहीं सकता तो वह लेट के ध्यान करे। अगर वह जबरदस्ती हठपूर्वक, जिद्द करके बैठने की कोशिश करेगा तो उसका ध्यान लगेगा ही नहीं, उसकी चेतना बहिर्मुखी हो जायेगी। वह जो कमर में दर्द हो रहा है वहीं पर जा के चेतना अटक जायेगी, साक्षीभाव निर्मित ही नहीं हो पाएगा। नहीं, कोई जरूरत नहीं है जबरदस्ती आसन साधने की। जो तुम्हारे लिये सहज, स्वभाविक, सरल हो उसी को साधना। ओशो का एक वचन है–'द इजी इज राइट', जो सरल है वही सही है। खोजना तुम्हारे लिये क्या सही है, दूसरे की नकल करने की जरूरत नहीं है। अब हो सकता है कि बचपन से आप कभी पालथी मारकर बैठे ही नहीं। पाश्चात्य संस्कृति में कोई जन्मा है, सदा कुर्सी पर ही बैठा है, अचानक उससे कहो कि पद्मासन लगा के बैठो, तो वह बेचारा बड़ी मुश्किल मे फंस जायेगा। उसकी पूरी चेतना पैरों में ही लगी रहेगी। आत्मस्मरण हो ही नहीं पाएगा, पैर स्मरण ही चलता रहेगा। इसका तो कोई मतलब न हुआ, यह तो व्यर्थ की कवायद हुई।

कुर्सी पर बैठने के यदि तुम आदि हो और कुर्सी पर बैठकर आराम मिलता है तो तुम कुर्सी पर बैठना। कोई ऐसा थोड़ी कि बुद्ध के समान पद्मासन लगा कर बैठोगे तो ही ध्यान लगेगा। तुम्हारे लिये जो सहज है वही तुम्हारे लिये सही है। तुम्हें स्वयं प्रयोग कर-कर के खोजना होगा कि तुम्हारे लिये क्या सरल है। तो आसन के बारे में मैं विस्तार से कुछ नहीं कहूँगा क्योंकि हजारों प्रकार के आसन किताबों में वर्णित हैं। उन्हें पढ़ के सिर्फ अहंकार को चैलेन्ज मिलता है कि यह कठिन आसन है हम भी करके देखें। अब शीर्षासन कोई करने बैठ जाए, अपनी मुसीबत ही खड़ी कर लेगा वह। शीर्षासन कोई सहज आसन तो नहीं हो सकता, यह तो पतंजलि की परिभाषा में फिट भी नहीं बैठता।

शीर्षासन में तुम कैसे सुखपूर्वक स्थिर रहोगे? यह तो बड़ी कठिन प्रक्रिया हो गई। नहीं, कोई जरूरत नहीं शीर्षासन लगाने की। तुम तो सुखासन में, आरामदायी आसन में ध्यान को लगाना। आसन का उपयोग क्या है? ऐसी सुखद अवस्था जिसमें तुम शरीर को विस्मृत कर पाओ। शरीर में अगर कहीं कष्ट नहीं होगा, तुम्हारी चेतना अपने आप अन्तर्मुखी हो पाएगी। कहीं कष्ट होगा तो चेतना वहीं एकाग्र हो जायेगी। इसलिये सुखपूर्वक स्थिर आसन चुनना, वह ध्यान में उपयोगी होगा। इस परिभाषा के अनुसार अधिकांश हठयोगी जो कर रहे हैं वे सब सर्कस के खेल हैं, उसका योग से कुछ लेना देना नहीं है।

वे अहंकार की लीलाएं हैं, दूसरों के सामने सिद्ध करना कि मैं कोई ऐसा काम कर रहा हूँ जिसे और कोई नहीं कर सकता। ऐसी ऊटपटांग हरकत में जाने की कोई जरूरत नहीं। उन व्ययामों का हो सकता है शारीरिक स्वास्थ्य के लिये कुछ महत्त्व हो, लेकिन ध्यान की दृष्टि से उनका कोई महत्त्व नहीं है।

प्राणायाम और आसन के बाद तीसरा महत्त्वपूर्ण बिन्दु आता है 'बन्ध'। बन्ध कई प्रकार के कहे गये हैं जिसमें एक-दो प्रकार बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। मूलबन्ध की प्रक्रिया बहुत महत्वपूर्ण है। मूलबन्ध का अर्थ है हमारे जो नीचे के चक्र हैं- मूलाधार, स्वाधिष्ठान एवं मणिपुर, इन तीनों पर बन्ध लगाना। बन्ध का अर्थ है बांध- जैसे हम नदी पर बांध (डैम) बनाते हैं, बांध के पीछे विशाल जल भंडार एकत्रित हो जाता है। इस जल भंडार को हम नहर के द्वारा कहीं और ले जाकर उपयोग करते हैं- जैसे खेतों की सिंचाई अथवा विद्युत उत्पादन के लिए। ठीक ऐसे ही अपनी प्राण ऊर्जा पर भी हम बंध लगा सकते हैं। यदि हम श्वास बाहर फेंक कर पेट को, गुदाद्वार को तथा जननेन्द्री को सिकोड़ लें, नीचे के तीनों चक्रों को सिकोड़ लें और बाह्य कुम्भक की अवस्था में कुछ सेकन्ड को रुक जायें तो इसका नाम है मूलबंध। यह प्रक्रिया बड़ी उपयोगी है। यदि कोई व्यक्ति दिन भर में तीन सौ बार, चार सौ बार मूलबंध करता रहे, तो ऐसे व्यक्ति की जीवन ऊर्जा धीरे-धीरे नाभि पर इकट्ठी होने लगती है। फिर क्रमश: यह ऊर्ध्वगामी होने लगती है, अनाहद चक्र की ओर बढ़ने लगती है। जैसे-जैसे ऊर्जा का विशाल भंडार एकत्रित होने लगेगा, ऊर्जा ऊपर और ऊपर विशुद्ध और आज्ञाचक्र पर और अंतत: सहस्रार चक्र पर पहुंचने लगेगी। तब समाधि में डूबना बड़ा आसन हो जाता है। मूलबंध के द्वारा सहज रूप से ब्रह्मचर्य फलित हो जाता है। ब्रह्मचर्य की इतनी महिमा जो ग्रंथों में कही गई है वह निश्चित रूप से ठीक है। लेकिन ब्रह्मचर्य कैसा हो? जो अपने आप आये। अपने आप कैसे आये? मूलबंध की क्रिया द्वारा आ सकता है। इसमें हमने अपनी सेक्सुअलिटी से, अपनी कामवासना से कोई लड़ाई नहीं की, हमनें उसे दबाया भी नहीं, हमनें उसे मिटाने की कोशिश भी न की। सच पूछो तो हमने कामवासना के साथ कुछ भी न किया। हमने तो अपनी ऊर्जा को बांधा और उसे धीर-धीरे ऊर्ध्वगामी किया। बंधने के बाद वह ऊर्ध्वगामी स्वत: ही होने लगती है। तब हमारी ऊर्जा समाधि में केन्द्रित होने लगती है- काम से राम की ओर बहने लगती है। तो ऊर्जा का दिशा रूपांतरण हुआ, दमन नहीं

हुआ। सामान्यतः जो लोग ब्रह्मचर्य साधने की कोशिश करते हैं वे अपनी ऊर्जा को दबाते हैं। वह दबाई हुई वासना बड़ी खतरनाक हो जाती है, वह कभी भी विस्फोट करेगी। कब तक दबाओगे, कितना दबाओगे? उसका भंडार इकट्ठा होता जायेगा और उसको कोई नई दिशा तो तुमने दी नहीं। वह अचानक एक दिन बांध तोड़कर निकल जायेगी। नहीं, ब्रह्मचर्य के लिये उसे एक नई दिशा देनी होगी। यह वासना अनाहद चक्र तक पहुँचे, प्रेम में रूपांतरित हो, करुणा में रूपांतरित हो। यह ऊर्जा और ऊपर जाये विशुद्ध और आज्ञाचक्र तक पहुँचे, संकल्प की शक्ति बने। और ऊपर जाये बोध और विवेक बने, परम चैतन्य बने, तब हम खतरे के बाहर हैं। तो बंध का उपयोग ऊर्जा को इकट्ठा करना और उसे नई दिशा देना है। मूलबंध के ऊपर ओशो ने प्रवचन दिया है 'कहै कबीर दीवाना' के पांचवें प्रवचन में।

पांच
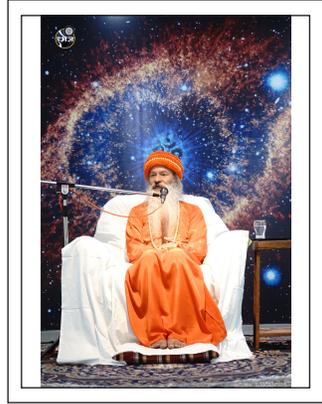
राजयोग द्वारा संकल्प साधना

एक छोटी सी कहानी से अपनी बात शुरू करूं। पुरानी कहानी है कि पुराने जमाने में लोग तीर्थ यात्रा को जाते थे, तो अक्सर वापस लौटते नहीं थे। यात्राएं बड़ी कठिन थीं। पैदल या घोड़े अथवा बैलगाड़ी में जाना होता था। सैंकड़ों, हजारों किलोमीटर दूर जाना होता था। अक्सर लोग वृद्धावस्था में जाते थे, अक्सर तो यही माना जाता था कि अब बस गये। बहुत कम लोग ही वापस लौटते थे। उस जमाने की कहानी है- एक बहुत अमीर आदमी यात्रा को जा रहा था। उसके महल में बहुत नौकर चाकर थे लेकिन परिवार का सदस्य कोई नहीं था। पत्नी की मृत्यु हो चुकी थी, बच्चे पैदा नहीं हुए थे, और कोई दूर का रिश्तेदार भी नहीं था। महल के बहुत से नौकर-चाकरों के साथ वह बस अकेला ही था। वह उनसे कह के गया कि जब तक मैं लौटता नहीं हूँ, तब तक इस-इस प्रकार से कार्य करना। मकान को कैसे संभालना, सुरक्षा करना, क्या-क्या व्यवस्था बनाके रखनी है इत्यादि। नौकरों ने उसकी बात सुनी, मालिक चला गया।

धीरे-धीरे नौकर भूल ही गये कि वे नौकर हैं। एक तो अब आशा भी नहीं थी कि मालिक लौटेगा। तीर्थ यात्रा से कब कौन लौटता है? बूढ़ा आदमी शायद ही वापिस लौटे? तीर्थ यात्रा अंतिम यात्रा ही हो सकती थी। चार-छह महीने बीतते-बीतते नौकर-चाकर भूल ही गये कि वे नौकर हैं। हर व्यक्ति अपने आप को मालिक समझने लगा। सब लोग एक दूसरे के साथ राजनीति, कूटनीति और मैन्यूपुलेशन करने लगे। सब एक दूसरे को आदेश देते थे कि यह करो, कि वह करो। मालिक तो लौटने वाला नहीं, बस ये ही मालिक बन बैठे थे। आपस में लड़ाई-झगड़ा चलता रहता। काम-काज का बड़ा नुकसान हो रहा, कोई कुछ करने को तैयार नहीं, कोई किसी की सुनने को राजी नहीं। बड़ी अराजकता छा गई। दो साल बाद एक दिन वह बूढ़ा मालिक लौट आया। जैसे ही उसने घर के भीतर देहरी पर पांव रखा, अचानक नौकर नौकर हो गये। वे अपनी स्थिति में आ गये। मालिक की मौजूदगी से अचानक सारी व्यवस्था सुचारु रूप से चलने लगी।

मालिक ने जो आदेश दिया फटाफट पूरा होने लगा। वह जो अराजकता थी, इंडिसीप्लीन वह सब समाप्त हो गया। डिसीप्लीन, एक ऑर्डर पैदा हुआ, फिर से घर में अनुशासन आया। ठीक ऐसे ही हमारे भीतर जो नीचे के पाँच चक्र हैं, उन चक्रों के जो कार्य हैं उनका आपस में कोई को-ऑर्डिनेटर नहीं है। वे सब अपने आप की मालकियत की घोषणा करते हैं क्योंकि असली

मालिक मौजूद नहीं है। वह जो हमारी कर्म करने की प्रवृत्ति है वह हमें एक तरफ खींच रही है, हमारी भावनाएं हमें कहीं और ले जाने को कहती हैं। बुद्धि कोई तीसरा रास्ता सुझा रही है और इन्द्रियां बता रही हैं कि हम सब पर हावी होंगे, हमारी बात माननी पड़ेगी। सब अपनी-अपनी दिशाओं में हमें खींच रहे हैं। हमारी हालत ऐसी है जैसे किसी बैलगाड़ी में पाँच दिशाओं में पाँच बैल जुते हों। कभी कोई बैल हमें एक तरफ खींच लेता है। फिर जो खींच लेता है वह थक जाता है, इतनी देर में जो दूसरों ने विश्राम कर लिया उनकी ताकत बढ़ जाती है। उनमें से कोई दूसरी दिशा मे खींच लेता है। बड़ी खींचातान मची रहती है। हमारी जिन्दगी बड़ी अराजक है। इस संदर्भ में समझना कि राजयोग क्या है। यह अराजकता तब समाप्त होती है जब हमारे भीतर की ऊर्जा आज्ञाचक्र पर पहुँचती है। वहाँ से राजयोग की शुरुआत है। हमारे भीतर एक डिसीप्लीन, एक ऑर्डर पैदा होता है। इसीलिये भृकुटि के मध्य में जो स्थान है उसका नाम आज्ञाचक्र रखा गया। आज्ञा यानी ऑर्डर, आज्ञा अर्थात् अनुशासन। अब ऊपर से जो कहा जायेगा, मालिक जो कहेगा, नीचे के चक्र वैसा ही काम करेंगे। उनके भीतर एक को-ऑर्डिनेटर पैदा हो गया- आपस में जोड़ने वाला, एक लिंक, एक सेतु- सबके भीतर समन्वय करने वाला तत्व उत्पन्न हुआ। इसके पहले सब अपने आप में स्वतंत्र थे।

पाँच प्रकार के मुख्य लोग हम बाँट सकते हैं। पहला- कर्मठ, दूसरा-

भोगी, तीसरा- साहसी, चौथा- भावुक, पाँचवां- विचारक, पाँचवें को हम बुद्धिजीवी भी कह सकते हैं। पूरी मनुष्य जाति को हम पाँच हिस्सों में बांट सकते हैं। इन पाँचों के भीतर समन्वय करने वाला कोई नहीं है। जो बुद्धिजीवी है वह बस बुद्धि ही बुद्धि की सुन रहा है, उसके अन्दर भाव की क्षमता नष्ट हो गई। पीछे मैं आपसे कह रहा था कि आइंस्टीन ने परमाणु बम बनाने की विधि खोजी। लेकिन उस व्यक्ति के भीतर यह भाव पैदा नहीं हुआ कि वह कितना विध्वंसक कार्य करने जा रहा है। आइंस्टीन अति प्रतिभाशाली, महाबुद्धिमान, बीसवीं सदी के जीनियस में से एक, लेकिन हृदय नहीं है। वह यह नहीं देख पा रहा है कि यह परमाणु बम क्या करेगा। उसे अपनी खोज में रस है, उसके अन्वेषण का कोई मुकाबला नहीं, लेकिन हृदय की क्षमता नहीं है। बुद्धि बहुत तेज और हृदय शून्य हो गया है। इसी प्रकार इसके विपरीत उदाहरण भी मिल सकते हैं- कोई व्यक्ति बहुत भावुक, सेन्टीमेन्टल, भावावेश में जीने वाला लेकिन कर्मठ नहीं, बुद्धिमान नहीं। वह जो कहा जाता है न कि प्रेम अंधा होता है, वह इन्हीं लोगों के लिये कहा जाता है। जो अति भावुक हैं, भावनाओं में बह के अपने जीवन को बरबाद कर लेते हैं। उनके जीवन में भी एक समन्वय नहीं है, कोई मालिक नहीं है जो कन्ट्रोल करे इन भावनाओं का। कुछ सामंजस्य नहीं बैठ पाता, एक ऑर्डर, एक राज पैदा नहीं हो पाता।

कुछ लोग कर्मठ हैं। वे कुछ न कुछ करते ही रहेंगे, चैन से नहीं बैठ सकते। लेकिन इनके कर्म कोई सुखद परिणाम लायें यह कतई जरूरी नहीं। याद रखना हिटलर बहुत कर्मठ था और सिकन्दर भी बहुत कर्मठ था। दुनिया के इतने आतंकवादी और उपद्रवी लोग हैं, खूब कर्मठ हैं, लेकिन इनकी कर्मठता स्वयं के लिये और सभी के लिये दुखदायी सिद्ध होती है।

एक बैल एक-एक दिशा मे खींच रहा है। जीवन की गाड़ी अपनी मंजिल तक यात्रा नहीं कर पा रही। जब हमारी ऊर्जा आज्ञाचक्र पर आती है, तब पहली बार हमारे भीतर आज्ञा का जन्म होता है कि कोई अनुशासन देने वाला मालिक आ गया। फिर नीचे के पांचों चक्र अपना-अपना फंक्शन ठीक से करने लगते हैं। फिर एक समन्वय उत्पन्न होता है, एक हारमनी पैदा होती है। जैसे एक ऑर्केस्ट्रा होता है- कोई सितार बजा रहा है, कोई तबला, कोई हारमोनियम, कोई सारंगी, कोई गीत गा रहा है, लेकिन सब एक धुन में लयबद्ध हैं। सामान्य मनुष्य की अवस्था ऐसी है कि तबलची कह रहा है कि यहां लाओ माइक पर सिर्फ मेरे तबले की आवाज सुनाई देगी, किसी और को न

बजाने दूंगा। सितार वाला कह रहा है कि हटाओ इस तबले को, मेरी सितार सब लोग सुनें बस। वह गायक माइक छीन रहा है कि मेरी आवाज सुनाई पड़े, तुम्हारी सितार में क्या रखा है। बड़ी खींचातानी मची है, बड़ा शोरगुल पैदा हो रहा है। इस शोरगुल का नाम अराजकता है। संगीत, हारमनी पैदा हो जाए। उसका नाम राज, ऑर्डर। सब चीजें सुव्यवस्थित हो जायें। सितार वाला अपनी जगह सितार बजाये, तबले वाले को जितनी आवाज करनी चाहिये उतनी ही आवाज करे और उस लय को सपोर्ट करे। गायक स्वर में गाये, उन्हीं स्वरों का इस्तेमाल करे जो इस धुन में फिट बैठते हैं, बेताल न हो जाये।

जब सब चीजें आपस में एक दूसरे के साथ समायोजित हो जाती हैं तब ऑर्केस्ट्रा पैदा होता है। जब आज्ञाचक्र पर हमारी ऊर्जा आती है, तब हमारा जीवन भी एक ऑर्केस्ट्रा बनता है। तब बड़ा मधुर संगीत उत्पन्न होता है। तब कर्म भी अपना रोल निभाता है, भाव भी, इन्द्रियां भी, प्राणशक्ति भी, विचार भी सब चीजें उपयोगी हो जाती हैं; कोई चीज कम या ज्यादा नहीं रह जाती। तो राजयोग का ऐसा गहरा अर्थ समझना– मालिक का उत्पन्न हो जाना, उसे हम राजा कह सकते हैं, सम्राट कह सकते हैं।

ये जो नीचे के पांच चक्र हैं इनमें एक द्वन्द्व की स्थिति है, उनके विकल्प समझना। मूलाधार चक्र से संबंधित है– कर्म। वहाँ दो विकल्प हैं– नैतिक कर्म और अनैतिक कर्म या कहें पाप और पुण्य। महात्मा गांधी भी कर्मठ व्यक्ति हैं और हिटलर भी कर्मठ व्यक्ति है। महात्मा गांधी नीतिवादी कर्मठ हैं, हिटलर अनैतिकवादी कर्मठ है; हैं दोनों कर्मठ। तो वहाँ का द्वन्द्व समझना नीति और अनीति का, पाप और पुण्य का। हम जो भी कर्म करते हैं वह अच्छी दिशा में भी जा सकता है और बुरी दिशा में भी जा सकता है। वह सृजनात्मक भी हो सकता है और विध्वंसात्मक भी हो सकता है। तो कर्म का द्वन्द्व साक्षी अतिक्रमण की अवस्था है। जब हम नीति, अनीति, पाप और पुण्य, अच्छे और बुरे दोनों कर्मों के साक्षी हो जाते हैं तब जानना कि हम ध्यान की दिशा में आगे बढ़े। नैतिक और धार्मिक व्यक्ति का फर्क याद रखना कि सिर्फ नैतिक व्यक्ति आध्यात्मिक नहीं हो सकता।

एक आदमी अच्छे काम करता है, मन्दिर बनवाता है, हम जो करते हैं, अच्छी दिशा में भी जा सकता है, बुरी दिशा में भी जा सकता है। वह सर्जनात्मक भी हो सकता है, विध्वंसात्मक भी हो सकता है। तो कर्म का द्वंद्व साक्षी अतिक्रमण की अवस्था है। जब हम नीति और अनीति, पाप और पुण्य,

अच्छे और बुरे कर्म दोनों के साक्षी हो जाते हैं, तब हम ध्यान की दिशा में आगे बढ़ें। तो सिर्फ नैतिक व्यक्ति आध्यात्मिक नहीं होता, याद रखना नैतिक और धार्मिक का फर्क। एक आदमी अच्छे काम करता है, मन्दिर बनवाता है, समाज सेवा करता है। ठीक है वह अच्छा आदमी है, शुभ है, साधु है, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि वह ऋषि है। ऋषि तो वही है जो दृष्टा हो गया यानी देखने वाला- साक्षी। यह व्यक्ति अहंकारवश ऐसा कार्य कर सकता है। कोई अहंकारवश बुरा कार्य भी कर सकता है। वह जो हत्या कर रहा है, वह भी अहंकारी है और जो किसी की जान बचा रहा है वह भी अहंकारी है। दोनों मूर्च्छित हैं। इसलिए नैतिक और अनैतिक कर्मों से महत्त्वपूर्ण है- साक्षी।

कर्मों का साक्षी जो अपनी अकर्ता चेतना में स्थित हो गया। स्वाधिष्ठान चक्र पर फिर द्वंद्व है, भोग और त्याग का। कुछ लोग जो इंद्री लोलुप हैं, इन्द्रियों के पीछे दीवाने हैं, जहाँ उनकी इन्द्रियां ले जाती हैं वे उसी दिशा में घसिट जाते हैं। फिर कुछ लोग हैं जो विरोधी हैं, वे अपनी इन्द्रियों के खिलाफ हो जाते हैं। इन्द्रियों की नहीं मानते। जीभ कह रही है स्वादिष्ट भोजन को, वे अस्वादव्रत ले लेंगे। बिना स्वाद का खाना खायेंगे, बिना नमक डाले खाना खायेंगे। महात्मा गाँधी नीम की चटनी खाते थे खाने में, सब कड़वा हो जाए, स्वाद न आए। कोई है सौन्दर्य का दीवाना और कोई है कुरूपता का दीवाना। दोनों की दीवानगी एक सी है। शास्त्रों में लिखा है कि परमहंस वह है जहाँ मलमूत्र पड़ा है, वहाँ बैठके वह भोजन कर सके। जिस थाली में कुत्ता खाना खा रहा है, उस थाली में से वह भी खा सके। यह कुरूपता के दीवाने हो गए। एक पागलपन है कि सोने-चाँदी की थालियाँ हों, अति स्वादिष्ट भोजन हो। दूसरा पागलपन है कि हम गन्दगी पैदा करेंगे, बेहुदी जगह में रहेंगे। गर्मी पड़े सूरज की और हम धूनी जलाकर बैठेंगे, और गर्मी पैदा करेंगे।

सामान्यत: हमारा मन कह रहा था कि एयरकंडीशंड हाउस में रहो। यह जो त्यागी कह रहा है कि नहीं जेठ की गर्मी में हम धूनी रमा कर बैठेंगे। यह भोगी और त्यागी, यह द्वंद्व है स्वाधिष्ठान चक्र का। साक्षी बनो। न तो भोग में उलझना न त्याग में उलझना। उलझना ही मत, तुम तो साक्षी चैतन्य में रमना जो इन सबका ज्ञाता है, जो इन सबको जानता है। जब इंद्रियां कोई सुखद अनुभूति लाती हैं, तब भी वह उसे जानता है, जब इन्द्रियां कोई दुखद सूचना लाती हैं तब भी वह उसे जानता है। अपने उस ज्ञाता स्वभाव में रमना। मणिपुर चक्र का द्वंद्व है- कायरता और साहस, भय और दुस्साहस। कुछ लोग हैं अति

दुस्साहसी। बड़ा जोखिम उठा सकते हैं, रिस्क ले सकते हैं, उनकी प्राण ऊर्जा बड़ी छलांगें भर रही है और कुछ लोग ठीक इसके विपरीत, भयभीत। भय और दुस्साहस, यह द्वंद्व है मणिपुर चक्र का। ध्यानी आदमी कौन है? जो इन दोनों के पार अपनी ऊर्जा का साक्षी हो जाता है। जो किसी द्वंद्व में नहीं उलझता। ऐसा मत सोचना कि जो एवरेस्ट पर चढ़ गए, तेनज़िंग और हिलेरी, बड़े दुस्साहस का काम किया है। उनके पहले हजारों लोग हिमालय पर चढ़ने में अपनी जान गवां चुके थे। निश्चित रूप से तेनज़िंग और हिलेरी बड़े साहसी रहे होंगे। दुस्साहसी रहे होंगे। पर इससे कोई आध्यात्मिक उपलब्धि नहीं हो जाती। भय और साहस, दोनों के पार प्राण ऊर्जा के दृष्टा बनना। अपनी जीवन शक्ति, अपनी वाइटैलिटी के साक्षी बनना तब अध्यात्म में गति हुई।

फिर चौथे चक्र अनाहत पर द्वंद्व है- दुर्भावनाओं और सद्‌भावनाओं का। करुणा और घृणा का, प्रेम का और क्रोध का, कठोरता और दया का। याद रखना, क्रोध भी एक भावना है, प्रेम भी एक भावना है, करुणा भी एक भाव है, निर्दयता भी एक भाव है। दुर्भावना और सद्‌भावना दोनों के पार तुम भावातीत हो जाना। तुम तो दोनों के साक्षी हो जाना। महर्षि महेश योगी अपनी ध्यान पद्धति को कहते हैं भावातीत ध्यान। वह जो ट्रांसेनडेंटल प्वाइंट है भाव का, वहाँ न तुम दुर्भावना ग्रस्त रह जाते न ही तुम सद्‌भावना ग्रस्त रह जाते। तुम तो सबके पार उठ जाते। पाँचवा चक्र विशुद्ध; वहाँ पर द्वंद्व है विश्वास और विचार का। वही मन अंधविश्वासी हो सकता है। वही मन वैज्ञानिक विचार वाला हो सकता है। वह जो रूढ़ीवादी, परम्परावादी, अंधविश्वासी आदमी है और वह जो अपने आपको बड़ा विचारशील और वैज्ञानिक बुद्धि का मानता है, इन दोनों के पार तीसरा बिन्दु है अपने मन का साक्षी होना। वह ज्ञानयोग का मार्ग है। अंधविश्वास है कि तर्कचक्र विचार है, इससे कोई भेद नहीं पड़ता, दोनों मन के ही खेल हैं। इन दोनों के पार मनातीत अवस्था है। जापान के झेन फकीर जिसे कहते हैं- द स्टेट ऑफ नो माइंड। तो ये पांच चक्रों के पांच द्वंद्व मैंने आपसे कहे और द्वंद्व के पार की अवस्था साक्षी से उत्पन्न होती है यह कहा।

अब हम आते हैं छठवें बिन्दु पर आज्ञाचक्र पर। यहाँ का द्वंद्व है संकल्प और विकल्प (च्वायस एंड च्वायसलेसनेस)। संकल्प का सामान्य अर्थ जो हम करते हैं, उससे थोड़ा भिन्न अर्थ मैं करना चाहूँगा, और गहरा अर्थ। सामान्य अर्थ है हमारा कि कोई निर्णय करना, उस निर्णय पर अडिग रहना। इसको हम कहते हैं संकल्पवान होना। यहाँ पर मैं इससे और गहरा अर्थ करना चाहूँगा।

संकल्प से अर्थ है- विकल्प रहित होना। विकल्प का अर्थ है हमारे पास कई च्वायस हैं, मैं यह करूँ कि वह करूँ, ऐसा कि वैसा, इस रास्ते पर चलूँ कि उस रास्ते पर चलूँ मन डावांडोल हो रहा है। यह हमारी विकल्पपूर्ण स्थिति है, संशयमय डोलती हुई स्थिति। संकल्प का गहरा अर्थ है विकल्प रहित अवस्था (च्वायसलेस अवेयरनेस), चुनाव रहित जागरुकता। अब हम चुनाव न करें। उदाहरण के लिए जैसे हमारी बाहर की आंख ठीक हो, हमें इस ओशो मन्दिर के बाहर जाना हो, हम उठ के खड़े होते हैं और चुपचाप दरवाजे से बाहर निकल जाते हैं; क्या हमारे मन में कोई संशय आता है, कोई विकल्प आते हैं कि आज दरवाजे से निकलूँ या खिड़की में से कूद जाऊँ या क्या एक बार दीवार में से भी निकलने की कोशिश कर लूँ? क्या पता आज निकल ही जाऊँ दीवार में से। नहीं, ऐसे कोई भी मन में संशय नहीं आते, बस उठते हैं और दरवाजे से ही निकलते हैं। कोई दूसरा विकल्प कोई अल्टरनेटिव आता ही नहीं। जो व्यक्ति आंख वाला है, उसके सामने विकल्प नहीं होते। क्या आपके साथ कभी ऐसा मन होता है कि आज दाल-चावल खाऊं या थोड़ी रेत-मिट्टी खाके देख लूँ? ऐसा कोई विकल्प आता ही नहीं। खाना वही खाते हो जो खाने योग्य है। आपके सामने एक लड्डू रखा है और साथ में एक पत्थर रखा है तो आप कहते हो कि जरा सोचने-विचारने तो दो कि क्या खाऊं? लड्डू खाऊं कि पत्थर खाऊं, थोड़ा पांच मिनट सोचने तो दो। अगर कोई आदमी ऐसा कहे तो हम कहेंगे कि पागल हो क्या? नहीं, ऐसा कोई विकल्प हमारे भीतर नहीं आता।

जिस व्यक्ति की यह तीसरी आँख खुल गई, शिवनेत्र खुल गया, वह स्पष्ट दृष्टि वाला हो जाता है। उसके सामने फिर चुनाव करने का सवाल ही पैदा नहीं होता। जब हमें चुनाव करना पड़ रहा है, जानना अभी हम पूर्ण संकल्प वाले हुए नहीं, हम विकल्पों में डोल रहे हैं। एक आदमी कसम खाता है कि मैं क्रोध नहीं करूँगा। इसका मतलब क्या है? इसका मतलब है कि इसमें क्रोध करने की आकांक्षा है। यह अपने ही खिलाफ व्रत ले रहा है कि मैं गुस्सा नहीं करूँगा। इसके अन्दर क्रोध मौजूद है। अभी इसका तीसरा नेत्र खुला नहीं। इसे स्वयं दिखाई नहीं पड़ा कि क्रोध बुरा है। दूसरों ने कहा है, किसी से सुन लिया है, किताबों में पढ़ लिया है। लेकिन इसको खुद अभी समझ में आया नहीं। जो चीज हमें स्वयं समझ में आ जाती है, हमारे मन में कभी फिर प्रश्न ही पैदा नहीं होता उसका उल्टा करने का। क्या आपके मन में कभी ऐसा प्रश्न

आता है कि आग में हाथ डालूँ कि न डालूँ? ऐसा तो कभी नहीं होता। आप भली-भांति जानते हो आग में हाथ डालने से जल जायेगा, तकलीफ होगी। क्या कभी ऐसा विकल्प पैदा होता है कि थोड़ा-सा चला जाऊँ एक बार आग में, हर्ज क्या है? थोड़ा देख तो लें। यद्यपि किताबों में तो लिखा है, गुरुओं ने समझाया था कि आग में मत जलना बेटा। लेकिन फिर भी एक बार थोड़ा-सा हाथ तो डाल के देख लें, आधा मिनट के लिए ही सही। नहीं ऐसा आपके मन में कभी नहीं आता, क्यों? क्योंकि आप भली-भांति जानते हो कि आग कष्टदायी है।

कभी ऐसा मन में आता है कि मैं कसम खाता हूँ अच्छा आज के बाद अब कभी पोटैशियम साइनाइड नहीं खाऊँगा। आपको पता है कि पोटैशियम साइनाइड को चखते ही मर जाओगे। कभी किसी को आपने ऐसी कसम खाते देखा है? लेकिन लोग कसम खाते मिल जायेंगे कि अब मैं बीड़ी-सिगरेट नहीं पिऊँगा, पान पराग नहीं खाऊँगा। क्यों? अभी इनको पता नहीं, अभी भीतर तो मालिक पैदा नहीं हुआ है, जिसकी आज्ञा से ऑर्डर पैदा हो जाए। अभी इनके भीतर बड़ा द्वंद्व है। इनकी इंद्रियाँ कह रही हैं- सिगरेट पिओ, इनकी बुद्धि कह रही है मत पिओ। खींचातानी, एक बैल इस तरफ खींच रहा है, एक बैल उस तरफ खींच रहा है। इनकी बड़ी दुर्गति होने वाली है। यह खा ले कसम कि सिगरेट नहीं पियेंगे, तो कुछ होने वाला नहीं। वे इंद्रियां फिर एक बार हावी हो जायेंगी। वे बुद्धि के ऊपर विजय प्राप्त कर लेंगी। लिखा रहे सिगरेट के पैकेट पर कितना ही कि स्वास्थ्य के लिए हानिकारक। तुम्हारी बुद्धि को एक तरफ हटा कर रख दिया जायेगा, सिगरेट खोल ली जायेगी और फिर पी जायेगी। तुम बाद में फिर पछताते रहना कि अरे सिगरेट क्यों पी? यह तुम्हारी चलने वाली नहीं, तुम्हारे अन्दर कोई राज नहीं है, कोई मालिक नहीं है। जिसकी जो मर्जी वह वैसा कर लेता है।

विकल्प तभी पैदा होते हैं, जब हमारे भीतर अंतर्दृष्टि न हो। जिस क्षण तुम्हें स्पष्ट हो जायेगा कि सिगरेट ठीक नहीं है, उस दिन तुम्हें सोचने का सवाल ही पैदा नहीं होगा कि सिगरेट नहीं पीना है। कोई कसम खाने की जरूरत नहीं पड़ेगी, सिगरेट नहीं पी जायेगी, बस बात खत्म। संकल्प का अर्थ विकल्प रहित होना। हमारी सोच की ऐसी अवस्था, जहाँ हम चुनाव रहित हो गए। अब हमसे वही होता है जो होना चाहिए। इसके विपरीत का ख्याल नहीं आता। अब हम कसम नहीं खाते कि क्रोध की अग्नि में हाथ नहीं डालेंगे। बस समझ में

आ गया कि क्रोध अग्नि है, बस बात खत्म। अब दोबारा कभी क्रोध होगा ही नहीं। कोई व्रत लेने की जरूरत नहीं, कोई कसम खाने की जरूरत नहीं। समझ में आ गया क्रोध अग्नि है। जलाती है, नुकसान पहुँचाती है, मामला खत्म, हमेशा के लिए खत्म। तो सामान्यत: जिसे लोग संकल्प कहते हैं, अपने निर्णय पर अडिग होना वह उसका गौण अर्थ है। संकल्प का गहन अर्थ है महत्त्वपूर्ण विकल्प रहित अवस्था, संशय रहित अवस्था।

अंधा आदमी कसम खाता होगा कि अब मैं इस कमरे से बाहर निकलूंगा, दरवाजे से ही निकलूँगा, दीवार से नहीं टकराऊँगा, टटोलूँगा, संभलूँगा, पूछूँगा कहाँ है दरवाजा? किस रास्ते जाऊँ? कसम खाता हूँ इस बार बिल्कुल नहीं टकराऊँगा। अब सिर नहीं फोड़ूँगा दीवार से। अंधा आदमी ही ऐसा कर सकता है, आँख वाला आदमी नहीं करेगा। आँख वाला तो बस उठता है और दरवाजे से ही निकलता है। कुछ ख्याल आता ही नहीं इसके विपरीत। अंधे को आएगा, क्योंकि अंधे को दिखता नहीं। तो याद रखना कि जब तक हमें संकल्प लेने पड़ते हैं, कसमें खानी पड़ती हैं, व्रत और नियम और अनुशासन लादने पड़ते हैं अपने ऊपर, तब तक हम अंधे हैं। आंतरिक रूप से अंधे हैं। इसलिए आज्ञाचक्र जिस व्यक्ति का जाग गया, हम उसे ही प्रभुचक्षु कहते हैं। अब उसके भीतर अंतर्दृष्टि पैदा हो गई। अब इसके जीवन में वही होता है, जो होना चाहिए। विपरीत का कोई सवाल नहीं उठता। इसलिए इसको च्वायसलेस अवेयरनेस कहा है। विकल्प रहित जागरुकता।

एक और अर्थ में यह शब्द बड़ा उपयोगी है। भावुक व्यक्ति ने तय किया था, मैं भाव के प्रति साक्षी होऊँगा। विचारक बुद्धि के आदमी ने सोचा था कि मैं अपने विचारों का द्रष्टा बनूँगा। जो व्यक्ति आज्ञाचक्र पर आ गया, अब वह इन पाँचों में से भी चुनाव नहीं करता। जीवन में सहज रूप से, सामान्य रूप से परिस्थितियों के मुताबिक जैसा जरूरी होगा, वैसा मैं जीऊँगा। हाँ साक्षी बन के जीऊँगा। इसलिए नीचे के पाँचों योगों का तो एक-एक स्टार्टिंग प्वाइंट है। यहाँ से तो शुरूआत होती है, अंत में साक्षी और समाधि में पहुँचते हैं, लेकिन राजयोग का कोई स्पेसिफिक प्वाइंट नहीं है। राजयोग कह रहा है, जब जैसी जीवन की आवश्यकतानुसार स्थिति होगी वैसा ही मैं जीऊँगा। कभी जरूरी होगा कर्म करना, मुझे कर्म से कोई परहेज नहीं। मैं उसी में साक्षी भाव को साधूंगा। कभी सुस्वादु भोजन कर रहा हूँ, मैं स्वाद के प्रति जागृत रहूँगा। कौन है मेरे भीतर जो इस स्वादिष्ट भोजन को जान रहा। मैं अपनी इंद्रियों का साक्षी

हो जाऊँगा। कभी भाव में हृदय डोल रहा है, प्रेम में, कि करुणा में कि अहोभाव में कि भक्तिभाव में, तब उसी को मार्ग बना लूँगा, साक्षी में डूबने के लिए। कभी विचारों में चित्त डूबा है, इन्हीं विचारों का द्रष्टा बनके मैं साक्षी बन जाऊँगा और अंततः निर्विचार चैतन्य में डुबकी लगा जाऊँगा। इस अर्थ में भी वह च्वायसलेस अवेयरनेस में है।

वह किसी एक पगडंडी को नहीं चुन रहा। इसलिए भी हम इसको राजयोग कहते हैं। राजमार्ग के अर्थ में, हाइवे को हम कहते हैं न राजमार्ग, चौड़ा रास्ता। बल्कि जो पाँच मार्ग थे, वे छोटी-छोटी पगडंडियां हैं, पतली-पतली राहें हैं। राजमार्ग का अर्थ है चौड़ा रास्ता। यहाँ पाँचों पगडंडियां आपस में आकर मिल जाती हैं। अब हम इसमें कोई भेदभाव नहीं करते। हम कोई चुनाव नहीं करते। सहज रूप से जो भी होगा जिस क्षण में, हम उस क्षण उसी में बह जायेंगे। उसी में साक्षी हो जायेंगे। वहीं से अपनी अंतर्यात्रा कर लेंगे। हमारी कोई जिद नहीं है खास। राजयोग यह नहीं कहता कि मैं कर्मयोगी हूँ, कि मैं चक्र हूँ। बाकी के पाँचों योगों में बड़ा द्वंद्व है। किसी ज्ञानयोगी से पूछा कि भक्त के बारे में आपके क्या विचार हैं? वह कहेगा कि सब पागलपन की बातें हैं। यह नाचना, यह गाना, यह झूमना, यह प्रार्थना, यह भक्ति, यह मूर्तिपूजा, ये सब बचकानी बातें हैं। ज्ञानयोगी की दृष्टि में भक्त पागल जैसा नजर आयेगा। भक्त से पूछो कर्मयोगी के बारे में क्या ख्याल है? वह कहेगा विक्षिप्त है। यह आदमी

चैन से बैठ नहीं सकता? अरे! भगवान के भक्तिभाव में डूबो, क्या कर्मठता में लगे हुए हो? करने वाला वह, उसकी मर्जी के बिना पत्ता नहीं हिलता। तुम इतने अहंकारी हुए जा रहे हो कि तुम्हीं सब कुछ करोगे। भक्त को कभी पसन्द नहीं आएगा कर्मयोगी। भक्त को कभी ज्ञानयोगी की बात जचेगी नहीं, क्या विचारों में खोए रहते हो, किताबें पढ़ते रहते हो। कबीर कहेंगे-

पोथी पढ़-पढ़ जग मुआ, पंडित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय।।

भक्त का अपना स्टंट प्वाइंट है। वह कहेगा- प्रेम ही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। कहाँ पोथियों में उलझे हो, उतारो सिर से बोझ ज्ञानियों। पाँचों योगी आपस में एक-दूसरे से बिल्कुल राजी नहीं होंगे। तांत्रिक की जीवन दृष्टि अन्य चार योगियों को बिल्कुल समझ में नहीं आएगी। वे कहेंगे- ये भोगी अध्यात्म के नाम पर भी योग में रत हैं, ऐसे कहीं कोई साधना हुई है। संसार में जी रहा है और कह रहा है कि मैं धार्मिक हूँ। यह कोई साधना-वाधना नहीं है। अपने आपको यह भुला रहा है। समय गंवा रहा है। तर्क के जाल खड़े कर लिए कि मैं तो भोग को साधना बना रहा हूँ। ऐसे कहीं साधना नहीं होती। पाँचों योग एक-दूसरे के विपरीत हैं। कोई किसी से राजी नहीं हो सकता। एक-दूसरे की नजर में दूसरा नीचे है। मेरा मार्ग महत्त्वपूण है। मेरी पगडंडी सबसे अच्छी है, बाकी चार पगडंडियां तो कहीं जाती ही नहीं हैं। बस मेरी पगडंडी ही एकमात्र है जो परमात्मा तक जाती है। क्योंकि मैं उसी पर चला हूँ तो मैं उसी के बारे में जानता हूँ, बाकी की चार मुझे समझ में ही नहीं आतीं। ये कैसे पहुँचेंगे उस रास्ते तक? लेकिन याद रखना, एवरेस्ट पर चढ़ना हो भारत की तरफ से तो उत्तर की तरफ से मुंह करके चढ़ना। चीन की तरफ से चढ़ना हो एवरेस्ट पर, तो दक्षिण की ओर हमारा मुंह होगा। बिल्कुल विपरीत दिशा होगी। रास्ते के दृश्य अलग होंगे। मार्ग बिल्कुल भिन्न होगा। लेकिन भारत की तरफ से भी चढ़ने वाला एवरेस्ट पर पहुँच जाता है और चीन की तरफ से भी चढ़ने वाला पहुँच जाता है। यद्यपि दोनों के मार्ग बिल्कुल अलग-अलग दिशाओं में हैं। अगर रास्ते में कहीं उनकी मुलाकात हो जाए, तो वे यही कहेंगे एक-दूसरे से कि तुम भटक गए। रास्ता तो मेरा है, जो एवरेस्ट तक जाता है। तुम तो बिल्कुल उल्टी तरफ जा रहे हो, तुम कभी न पहुँच सकोगे। नीचे के पाँच योगों में चुनाव है। पाँचों पगडंडियां पहुँचती हैं। लेकिन उन्हें आपस में नहीं पता और इसमें जितना विवाद और शास्त्रार्थ और मतभेद चलता है, संप्रदाय बनते हैं, वे

पाँच योगों में बनते हैं। हठयोगी मानता है कि बस हठयोग ही असली है। कोई भी समस्या हो बस अनुलोम-विलोम कर लेना, कपाल भाति कर लेना, सब हल हो जायेगा।

हठयोगी को योग ही सर्वश्रेष्ठ नजर आता है। उसकी दृष्टि में बाकी सब बकवास है। राजयोग पहली बार इन पांचों का समन्वय है। इसलिए भी इसका नाम राजयोग है। अब हमें विपरीतताएं नजर नहीं आती। हमको समझ में आ गया कि हमारी जीवन उर्जा हमारी चेतना निरंतर इन पांच चक्रों में से किसी एक में प्रवाहित होती है। कहीं एक जगह फिक्स थोड़े ही हैं। ऐसा थोड़े ही कि कर्मठ व्यक्ति कभी भावुक नहीं होता, जिन्दगी में। कम सही लेकिन कभी न कभी तो भावुक होता है। उसके भी इमोश्नल मूवमेंट्स होते हैं। ऐसा थोड़ी है कि जो भक्त हैं वे कभी बुद्धि का उपयोग ही नहीं करते। वह भी करता है, माना कि कम, ज्यादातर वे भाव में जीते हैं। लेकिन इसका मतलब यह नहीं

है कि बुद्धि उसकी नष्ट ही हो गई है। वह भी बुद्धि का उपयोग करता है। जो बुद्धिमान है, जिसको हम कहते हैं बुद्धिजीवि। वह कोई बुद्धि खाकर थोड़े ही जीवित रहता है। वह भी भोजन करता है, स्वाद लेता है। भोग तो उसे भी करना पड़ता है। कितना ही बुद्धिजीवी हो वह यह थोड़े ही कहेगा कि खाना-वाना नहीं खाते, हम तो बस किताबें ही खायेंगे। फिर वह दिमागी दीमक

या चूहा बन जायेगा। आदमी न रहेगा। कितना ही बुद्धिजीवी हो, शरीर के तल पर उसे भी आना होता है। इंद्रियों के तल पर भी आना होता है और कम से कम श्वांस तो लेनी ही पड़ती है। वह ऐसा थोड़ी कहेगा कि हम तो बुद्धिजीवी हैं, हम कोई हठयोगी हैं, जो अनुलोम-विलोम करते रहें। हमने तो श्वास लेना ही छोड़ दिया। हम तो बुद्धिजीवी, बुद्धि के बल जीते हैं। ठीक है उसके जीवन में बुद्धि प्रमुख होगी, पर श्वांस तो चलेगी ही चलेगी। इंद्रियां तो अपना काम करेंगी ही करेंगी।

नीचे के पांच प्रकार के जो व्यक्तित्व हैं (फाइव टाइप्स ऑफ पर्सनैलिटी) इनमें एक बात प्रमुख है, बाकी की चार बातें गौण हैं; या कभी-कभी मिल जायेगा कि पाँच में से दो बातें प्रमुख हैं किसी के जीवन में। कोई हो सकता है बहुत भावुक भी हो और योगी प्रवृत्ति भी हो। बाकी की तीन बातें उसके जीवन में गौण हों। बुद्धि और कर्म, बाकी की चीजें उसके लिए हो सकता है गौण हों। तो इन पाँच के विविध संयोग हो सकते हैं। कोई एक या दो बातें प्रमुख हो सकती हैं। राजयोगी जो है उसका व्यक्तित्व पूरी तरह संतुलित है। अब उनमें कोई चीज प्रमुख या कोई चीज गौण नहीं रही। उसके पांचों नौकर अपना-अपना काम कर रहे हैं बराबरी से। जिसको जो ड्यूटी दी गई, वह अपना कर्तव्य निभा रहा है। उसका शरीर कर्म करता है, उसकी इंद्रियां संवेदनशील हैं, उसकी प्राण-शक्ति संयमित है, संतुलित है, उसका हृदय, उसकी बुद्धि सब संतुलित हो गए। संत शब्द का अर्थ संतुलित।

सच पूछो तो राजयोगी ही असली संत है। सब कुछ वेल बैलेंस्ड, संतुलन में है। जैसा होना चाहिए, वैसा है। और ऐसा व्यक्ति कोई चुनाव नहीं करता। जब क्षण आयेगा भोग का, तब भोग के द्वारा साक्षी को प्राप्त कर लेंगे। जब क्षण आयेगा विचार का, विचार के द्वारा साक्षी में डूब जायेंगे। जब कुछ शारीरिक क्रियाओं का अवसर आयेगा, क्रियाओं द्वारा अकर्ता चेतना में पहुँच जायेंगे। अब हमारा कुछ चुनाव नहीं है। इस राजयोग की कोई विशेष साधना नहीं हो सकती। अन्य सबकी तो अपनी-अपनी स्पेशल (विशिष्ट) साधनायें हैं। राजयोगी की कोई विशेष साधना नहीं है। उसने अपने सामान्य जीवन को ही साधना बना लिया। वह तो हर तरफ से ही साक्षी भाव में चला जाता है, कहीं से भी। हां, राजयोग की इस अवस्था तक पहुँचने के पूर्व कुछ साधनायें जरूरी हैं। एक बार हमारी ऊर्जा आज्ञाचक्र पर आ गई, फिर कोई हमें विशिष्ट साधना नहीं साधनी पड़ेगी। लेकिन ऊर्जा को आज्ञाचक्र पर लाने के लिए तो

साधना करनी पड़ेगी। तो भूमिका स्वरूप राजयोग की साधनायें आज्ञाचक्र की साधनायें हैं। ओशो ने आज्ञाचक्र की बहुत सारी विधियां प्रयोग करने के लिए कही हैं। कुछ मुख्य विधियां मैं आपको नोट कराता हूँ।

त्राटक की विधि-

त्राटक के विविध रूप हो सकते हैं। त्राटक का अर्थ है आँखों की पुतलियों को स्थिर करके अपलक देखना। उगते हुए सूरज पर या डूबते हुए सूरज पर त्राटक किया जा सकता है। उगने के दस मिनट के भीतर-भीतर और डूबने के दस मिनट पहले शुरू करें। ज्यादा तेज सूरज पर त्राटक करना आँखों को नुकसान पहुँचाता है। सूरज जब क्षितिज पर है, केवल तभी त्राटक करें। मोमबत्ती की लौ, दीपक की लौ या विद्युत के बल्ब पर भी त्राटक किया जा सकता है। यह ज्यादा आसान है। इसमें हम सूर्योदय, सूर्यास्त के आधीन नहीं। जब चाहें अपने घर में विशेषकर रात के समय बहुत उपयोगी होगा। सारी बत्तियाँ बुझा दें, एक दीपक जल रहा हो या बल्ब पर अपनी आंखों को फोकस करें। यदि सौ वाट का बल्ब आप लेते हैं तो करीब दस फुट दूर बैठिये। इससे आँखों को कोई हानि नहीं होगी। त्राटक का एक प्रयोग गुरु के चेहरे पर किया जाता है। ओशो जब स्वयं ध्यान शिविर लेते थे, सन् 1974 के पहले तक, तब तक उनके साधना शिविर में रोज रात्रि में त्राटक का प्रयोग होता था जिसमें सभी साधक ओशो को देखते थे। ओशो मंच पर खड़े होते थे और ऊर्जा जागरण का एक प्रयोग साथ में चलता था। सभी साधक अपलक ओशो को देखते रहते थे। प्रकाश ओशो के ऊपर फोकस रहता था। साधक अंधेरे में खड़े होते थे। त्राटक, यह प्रयोग बहुत ही शक्तिशाली प्रयोग है। आप अपने घर में ओशो की तस्वीर रखकर उस पर भी त्राटक कर सकते हैं। ऐसी तस्वीरें चुने जिसमें ओशो की आँखें खुली हों, सामने को देख रहे हों। ओशो के आज्ञाचक्र पर अपने ध्यान को केंद्रित कर दें।

त्राटक का एक अन्य प्रयोग आइने में अपनी ही शक्ल पर अपलक दृष्टि रखना है। रात के समय दर्पण के बगल में या तो मोमबत्ती या हलकी रोशनी जला लें। मोमबत्ती ऐसी जगह रखी हो कि सीधी अपनी आँख को दिखाई न पड़े। मोमबत्ती की रोशनी आपके चेहरे पर पड़े, आपका चेहरा दर्पण में दिखाई पड़े, अपने प्रतिबिम्ब में अपने ही आज्ञाचक्र पर नजर को गड़ा दें। त्राटक के अलावा दूसरी महत्त्वपूर्ण विधि जो ओशो ने बताई है, वह है ऊर्जा को जगाया जाना, फिर बैठकर नाभि को केन्द्र मानते हुए शरीर को गोल-गोल घुमाया जाता है जैसे आप चक्की पीस रहे हों। उसके बाद लेटकर छत की तरफ देखते हुए आँखों को गोल-गोल घुमाया जाता है, जैसे आप किसी बड़ी घड़ी का काँटा देख रहे हों। वतुर्लाकार आंखें घूमेंगी। मण्डल शब्द का अर्थ होता है वर्तुल, सरकुलर, इसलिए इसका नाम मण्डल ध्यान।

जॉगिंग के द्वारा ऊर्जा जाग जाएगी, तब पेट को केन्द्र मानकर गोल-गोल शरीर को घुमायेंगे तो ऊर्जा नाभि केन्द्रित हो जाएगी। फिर जब आँखों को गोल-गोल घुमायेंगे तो नाभि से चलकर वह ऊर्जा आज्ञाचक्र पर आ जायेगी। फिर आँख बन्द करके आज्ञाचक्र पर फोकस करें।

एक अन्य विधि ओशो ने दी है आज्ञाचक्र के लिए, उसका नाम है गौरी-शंकर ध्यान। गौरी शंकर ध्यान में नीले अथवा बैंगनी रंग के विद्युत प्रकाश को हम देखते हैं जो कि करीब 500 बार प्रति मिनट की रफ्तार से जल बुझ रहा हो। इस प्रकार की डिवाइस बाजार में उपलब्ध होती है। बल्ब तेजी से जलता-बुझता है, तो अंदाज से उसकी स्पीड हमें पाँच सौ प्रति मिनट रखनी चाहिए। हृदय की धड़कन से सात गुनी ज्यादा। हमारा हृदय करीब 72 बार प्रति मिनट धड़कता है। उसका सात गुना हुआ। करीब पाँच सौ बार प्रति मिनट। बिना दृष्टि को झपकाए बिना पुतलियों को हिलाए, इस जलते-बुझते नीले रंग के या बैंगनी रंग के बल्ब को देखा जाता है। यह गौरी-शंकर ध्यान है। इसके साथ कुंभक का प्रयोग ओशो ने जोड़ा है और लातिहान का प्रयोग जोड़ा है। उसकी पूरी विधि कभी मैं आपको बाद में करवाऊँगा।

तीसरे नेत्र पर ऊर्जा लाने की बहुत सरल तरकीब ओशो ने कही है शिवनेत्र ध्यान। कल रात को हमने यहाँ किया था, दो मिनट अपलक बल्ब को देखना, उसके बाद आँख बन्द करके भीतर बल्ब के प्रतिबिम्ब को देखना और फिर धीरे-धीरे देखते-देखते कौन है द्रष्टा उस पर पहुँच जाना। आँख बन्द करने के दो-ढाई मिनट पश्चात् प्रकाश का बिम्ब भी खो जायेगा। लेकिन फिर भी आप

तो रह गए, भीतर देखने वाले, यद्यपि देखने को अब कुछ भी न बचा। तब हमारी चेतना स्वयं के ऊपर लौट आती है। वह शिवनेत्र ध्यान का प्रयोग। ओशो जब स्वयं सक्रिय ध्यान का प्रयोग कराते थे, तब चौथे चरण में अंगूठे के द्वारा आज्ञाचक्र पर रगड़ने की विधि करवाते थे। करीब एक मिनट तक दोनों भृकुटियों के मध्य में अंगूठे से दबाव डालते हुए रगड़ने से सारी ऊर्जा आज्ञाचक्र पर केन्द्रित हो जाती है।

ओशो ने जब स्वयं ध्यान करवाना बन्द किया और संगीत कैसेट के द्वारा ध्यान शुरू करवाया, तब उन्होंने इस विधि को रिप्लेस कर दिया सडन स्टॉप मेथर्ड से। वह भी आज्ञाचक्र को जगाने की विधि है। पीछे मैंने आपसे कहा कि निर्णय का केन्द्र आज्ञाचक्र है। जब भी आप कोई निर्णय लेते हैं, डिसिसिव होते हैं, तब आपकी ऊर्जा आज्ञाचक्र पर पहुँच जाती है। सामान्यत: आपने कभी गौर किया यदि आप कोई चिंता-फिक्र में पड़े हैं, क्या करें क्या न करें? मन में कुछ विकल्प डोल रहे हैं, तब चिन्ता करते समय आप आज्ञाचक्र पर बल डालते हैं। अनजाने में ही माथे पर बल पड़ जाते हैं। आपने कभी सोचा नहीं ऐसा क्यों करते हैं? आप गौर करना जब भी आप चिन्तित होते हैं, आज्ञाचक्र पर कि निर्णय करो, कि जब भी जीवन में डिसीजन मोमेंट आते हैं तब आज्ञाचक्र पर जोर पड़ जाता है। या हम इसका उल्टा कर सकते हैं। यदि आज्ञाचक्र को जगा लें तो हमारी जो डिसीजन लेने की कैपेसिटी है, वह जाग्रत हो जाती है। जो ओशो ने सक्रिय ध्यान में आज्ञाचक्र रगड़ने की जगह सडन स्टॉप मेथर्ड कर दी। अचानक संगीत रुकता है और स्टॉप की आवाज के साथ हम मूर्तिवत रुक जाते हैं, जहाँ हैं, जैसे हैं। अगर हाथ ऊपर उठा रह गया फिर वह ऊपर ही रह जाए। यदि गर्दन तिरछी थी तो तिरछी ही रह जाए। स्टॉप सुनते ही बिल्कुल स्टोन स्टैचू हो जाना है। पत्थर की मूर्ति जैसे फ्रोजन, यह एक बड़ा निर्णय है। इस तरह गर्दन तिरछी और हाथ ऊपर उठाए हुए एक विचित्र अवस्था में आप कभी कहीं खड़े नहीं हुए। अब हिलना-डुलना भी नहीं है, जरा भी नहीं। यह निर्णय आपकी ऊर्जा को आज्ञाचक्र पर ले आएगा। तो अंगूठे से आज्ञाचक्र पर रगड़ना एक स्थूल उपाय था। शारीरिक उपाय और सडन स्टॉप का मेथर्ड सूक्ष्म उपाय है, मानसिक उपाय है।

बीसवीं सदी में सोवियत रूस में जॉर्ज गुरजिएफ हुआ। उसने सडन स्टॉप एक्सरसाइज के बहुत उपाय खोजे। उसने संकल्प की बड़ी साधना करवाई अपने शिष्यों को। वह अचानक कहता था रुक जाओ। पूरे आश्रम में जो जहाँ

है, उसकी आवाज सुनते ही तुरन्त रुक जाते थे। फिर हिलना-डुलना भी नहीं, चाहे जो हो जाए। गिर जाओ तो गिर जाओ। पैर टूट जाए तो टूट जाए, तुम्हारा संकल्प न टूटे। गुरजिएफ ने संकल्प की बड़ी साधना करवाई। वह राजयोग के मार्ग का प्रस्तोता था। तो सडन स्टॉप आपके अन्दर एक निर्णय पैदा करता है। अब हिलना-डुलना नहीं और इसके साथ ही आपकी ऊर्जा तुरन्त आज्ञाचक्र पर पहुँच जाती है।

महावीर वाणी पर प्रवचन देते हुए और गीता दर्शन पर प्रवचन देते हुए ओशो ने नासाग्र ध्यान की दृष्टि की विधि समझाई है। नासाग्र दृष्टि की विधि अर्थात् अधखुली आँख से अपनी नाक के अगले हिस्से को देखें। पच्चीस या तीस डिग्री ऐंगल पर आपकी आँख खुली हो या और भी कम, सिर्फ नाक का अग्रभाग दिखाई दे। इससे भी ऊर्जा आज्ञाचक्र पर पहुँच जाती है। कृष्ण ने और महावीर ने इस विधि का प्रयोग गीता और महावीर वाणी में समझाया है। अतीत के धर्मों ने नासाग्र दृष्टि को बहुत महत्त्व दिया है। लेकिन इसमें कुछ हानि भी होती है, वह भी समझ लें। यदि कोई व्यक्ति लंबे समय तक नासाग्र दृष्टि रखे, उसकी आँखें तिरछी हो जाती हैं। स्क्विंट पैदा हो जाता है। आँख भैंगी हो सकती है। तो इसका एक दूसरा उपाय है जो ज्यादा सरल होगा वह यह कि आप अधखुली आँख रखके करीब 45 डिग्री ऐंगल पर सामने जमीन पर छह फुट दूर किसी बिन्दु को देखें। एक छोटा सा सिक्का रख दें या कोई निशान बना दें तो और अच्छा होगा। कम से कम छह फुट दूर। इससे आँखों पर बहुत ज्यादा जोर नहीं पड़ेगा। वह जो आँख तिरछी होने का खतरा है, वह पैदा नहीं होगा। जब हम छह फुट या उससे ज्यादा दूर देखते हैं, हमारी दोनों आँखें पैरेलल होती हैं।

आज्ञाचक्र पर चंदन का टीका लगाना एक महत्त्वपूर्ण प्रयोग है। इस संबंध में ओशो ने बहुत विस्तार से समझाया है। 'गहरे पानी पैठ' के तीसरे प्रवचन में तिलक-टीके के सम्बन्ध में इसका पूरा विज्ञान समझाया है, कैसे आज्ञाचक्र को जगाना? ये कुछ प्रमुख विधियाँ हैं आज्ञाचक्र की। और भी छोटी-छोटी बहुत-सी विधियाँ ओशो ने बताई हैं, संकल्प को जगाने की। कुंभक के साथ संकल्प को जगाने की विधि बताई है। ध्यान सूत्र प्रवचन नं. 1 में ओशो कहते हैं- रात को सोने के पहले लम्बी गहरी साँस लो और साँस को भीतर रोक लो। जब तक रोक सको रोके रहो, अपनी तरफ से बाहर जाने ही मत देना। जब बिल्कुल मजबूरी हो जाए और साँस भीतर न आ जाए, तुम तो अपनी तरफ

से रोके ही रहना। जब साँस भीतर आ जाए फिर भीतर रोक लेना। इस प्रकार कम से कम सात बार इस प्रयोग को करो। और साँस रोके हुए उस समय तुम अपने निर्णय को दोहराओ भीतर। समझो तुमने कोई भी निर्णय लिया है कि तुम्हें क्या करना है। समझो ध्यान में डूबना है, यह तुम्हारा निर्णय है। साँस रोककर उस समय दोहराओ कि ध्यान में डूबूँगा। मैं साक्षी बनूँगा, मैं समाधिस्थ होकर रहूँगा। इस बात को भीतर ही भीतर दोहराते रहो, दोहराते रहो, साँस रुकी है और तुम भीतर एक ही बात कह रहे हो कि मुझे ध्यान करना है। मुझे ध्यान करना है, मुझे ध्यान करना है। मैं समाधिस्थ होकर रहूँगा। रोएं-रोएं में खबर फैल गई। अब आपका कोई विरोधी न रहा आपके भीतर। आपका पूरा मन जानता है, आपका शरीर जानता है, आपकी प्राणशक्ति जानती है, आपकी इंद्रियां जानती हैं; सबको पता लग गया कि मुझे ध्यान समाधि में डूबना है और आपके भीतर जो अंतर्विरोध था, अंतर्द्वंद्व था, वह समाप्त हुआ। अब आप जब

ध्यान करने बैठोगे, तो सबका सहयोग मिलेगा क्योंकि सबको पता है। अर्थात् विकल्पों को तोड़ती है। वह जो खंड-खंड व्यक्ति था, जो विकल्पों में डोलने वाला था, अब एक अखंड चेतना पैदा हुई, जिसमें कोई स्वविरोधी स्वर नहीं है।

बस एक आवाज है, एक आज्ञा, एक ऑर्डर। तब जीवन में अराजकता समाप्त होती है और राज उत्पन्न होता है। तो प्यारे मित्रों ये कुछ प्रमुख विधियां मैंने कहीं, जो ओशो ने वर्णित की हैं आज्ञाचक्र को जगाने के लिए। जब आप निरति समाधि करने आएंगे, तीसरे तल का कार्यक्रम, उस समय विस्तार से हम उनका प्रयोग करेंगे। उन छोटी-छोटी विधियों का प्रयोग करेंगे। तब आज्ञाचक्र जागता है, हम राजयोगी बन पाते हैं। हमारे भीतर अराजकता समाप्त होती है। तो च्वायसलेस अवेयरनेस की बात जो कृष्णमूर्ति कहा करते थे, वह च्वायसलेस अवेयरनेस की स्थिति राजयोग में ही बन सकती है। अब हम नीचे के पांचों योगों में भी च्वायस नहीं करेंगे। जब जिस क्षण जो सहज रूप से हो रहा है, उसी में से हम साक्षी-भाव का सूत्र ढूंढ़ लेंगे। और धीरे से शुद्ध बोध में खिसक जाएंगे। आज के सत्र को यहीं समाप्त करते हैं।

छः
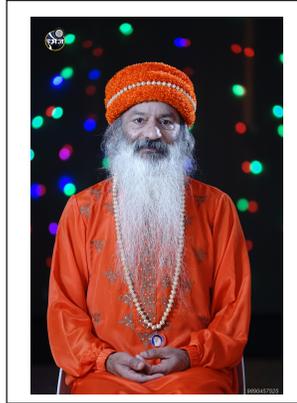
ध्यान, संगीत एवं ऊर्जा

प्रश्न- १ : ध्यान की जीवन में क्या आवश्यकता है?

उत्तर : आवश्यकता तो कोई भी नहीं है! ध्यान, समाधि ये जीवन की आवश्यकताएं नहीं हैं। विलासिताएं हैं, लग्जरीज हैं। आवश्यकता अलग चीज है। जैसे भोजन में रोटी, दाल, चावल खाना आवश्यकता है, उसके बिना हम न जी सकेंगे। परन्तु रसगुल्ला खाना कोई आवश्यकता नहीं। उसके बिना हम जी सकेंगे। यह लग्जरी की बात है। आवश्यकता नहीं है। चॉकलेट कोई आवश्कता नहीं है, लग्जरी है। ठीक इसी प्रकार धर्म भी जीवन की आवश्यकता नहीं है। धर्म जीवन की लग्जरी है। तो आप पूछते हैं ध्यान की जीवन में क्या आवश्यकता है? मैं आप से कहना चाहता हूं कि ध्यान की कोई भी आवश्यकता नहीं। आखिर छह अरब लोग बिना ध्यान के जी रहे हैं। इतना ही नहीं अरबों-खरबों पशु-पक्षी, पौधे, मछलियां सब बिना ध्यान के जी ही रहे हैं। अगर यह जीवन की बुनियादी आवश्यकता होती तो इसके बिना जीवन नहीं चल सकता था। हां, सांस लेना आवश्यकता है, भोजन खाना, पानी पीना जीवन की आवश्यकता है। इनके बिना जीवन न चल सकेगा। ध्यान करना, समधि में डूबना, परमात्मा को पाना, मैं कौन हूं का उत्तर खोजना, ये कोई जीवन की आवश्यकतायें नहीं हैं। इसलिए जब किसी समाज में बुनियादी आवश्यकताएं पूरी हो जाती हैं तब उस समाज में धर्म की आवश्यकता पैदा होने लगती है। यह सवाल महत्त्वपूर्ण हो जाते है कि मैं कौन हूं। तब अचानक ये प्रश्न बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं कि परम सत्य क्या है? परमात्मा कौन है? आनन्द को कैसे जानें? कोई भूखा व्यक्ति जिसको अभी रोटी भी खाने को नहीं मिली है वह नहीं पूछता कि आनन्द क्या है? वह तो कहता है कि कैसे रोटी मिले और भूख मिटे। भूख कैसे मिटे? यह उसका सवाल है। मैं कौन हूं? यह उसका सवाल नहीं है। किसी भिखारी को जाकर उपदेश मत देने लगना कि आओ हम तुम्हें बताते हैं कि तुम कौन हो। कि सुनो रवीन्द्रनाथ टैगोर का यह प्यारा गीत। वह अपना माथा फोड़ लेगा कि मैं भूखा हूं और ये चले अपना गीत सुनाने। क्या मैं गीत को खाऊंगा पीऊंगा कि क्या करूंगा? नहीं, गीत उसकी बुनियादी आवश्यकता नहीं है। जिसको रहने को घर-बार नहीं है, जो सड़क पर है तुम उसे कहो कि देखो कितनी सुन्दर पेटिंग किसी चित्रकार ने बनायी है, पूर्णिमा की रात चित्रित की है। वह आदमी आप पर नाराज़ हो

जाएगा। ये सब लग्जरी की बातें हैं। जब पेट भरा हो, जब रहने के लिए घर हो, जब जीवन सब सुख-सुविधाओं से सम्पन्न हो, तब संगीत में रस आता है, चित्रकला में रस आता है। तब अभिनय में और नृत्य में रुचि उत्पन्न होती है। तब जीवन की अन्य चीजों की तरफ नज़र जाती है। एक भूखे, प्यासे, बेरोजगार व्यक्ति को हम कहें कि लो सुनो यह प्यारा संगीत। तो हम उसके साथ अन्याय कर रहे हैं। अभी उसे रोटी की जरूरत है, नौकरी की जरूरत
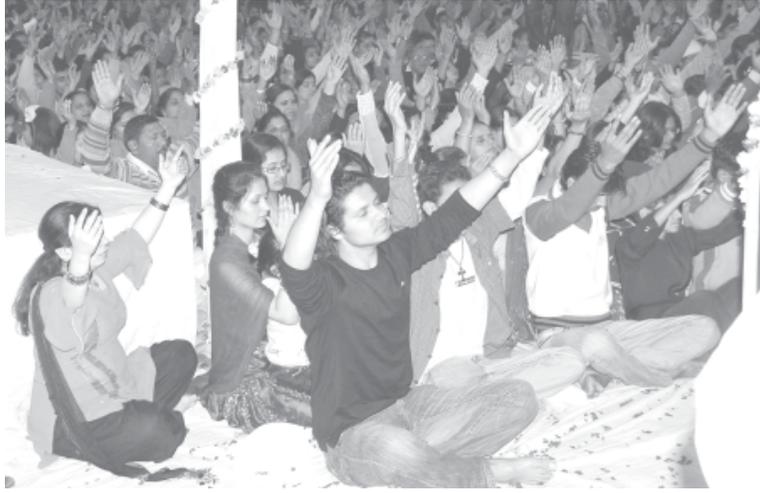
है, उसे संगीत की जरूरत नहीं है। अभी संगीत उसे न आएगा। ये सब लग्जरी की बाते हैं।

तो तीन तरह की आवश्यकताएं हैं। पहला शरीरिक जरूरतें, दूसरा मानसिक जरूरतें, फिर एक आत्मा की जरूरतें। शारीरिक जरूरतें तो हम सब जानते हैं, भोजन, कपड़ा, सुरक्षा की जरूरत है, स्वास्थ्य की औषधि की जरूरत है। जब ये सब पूरी हो जाती हैं तो हम दूसरी सीढ़ी पर पहुंचते हैं-मानसिक जरूरतें। जहां संगीत सुनना अच्छा लगता है, चित्रकला में रस आने लगता है, नृत्य और अभिनय में रुचि पैदा होने लगती है- ये मन की जरूरतें हैं। शरीर को इनकी कोई आवश्यकता नहीं है जानवरों के लिए ये चीजें कोई मायने नहीं रखतीं। एक कहावत है न भैंस के आगे बीन बजाए, भैंस खड़ी पगलाए। भैंस को क्या लेना-देना तुम्हारी बीन से। रविशंकर सितार बजाते हों, भैंसें क्या करेंगी? ज्यादा

से ज्यादा गोबर कर देंगी। गुलाम अली साहब कितनी ही सुन्दर गज़ल सुना रहे हों, एक बकरे को बांध दें और कहें कि सुनो यह गज़ल। वह बीच-बीच में अपनी मैं-मैं करता रहेगा। लगेगा यह भी कोई आलाप ले रहा है। नहीं, बकरे को कोई आवश्यकता नहीं है गजल की। सभी मनुष्यों को भी कोई आवश्यकता नहीं है गज़ल की, केवल उन्हें है जिनकी सभी शरीरिक आवश्यकताएं पूरी हो गयी हैं। फिर एक और आवश्यकता है उनके लिए जिनकी सभी शारीरिक और मानसिक आवश्यकताएं पूरी हो गयी हैं, जो सब भांति स्वस्थ व प्रसन्न हैं। जिन्होंने सुन्दरता का भी रस ले लिया, कला का भी रस ले लिया, संगीत का भी रस ले लिया, उनके जीवन में फिर कुछ सवाल पैदा होते हैं- मैं कौन हूं? यह जीवन क्या है? जीवन का मूल स्रोत क्या है? जीवन का परम लक्ष्य क्या है? मैं जीवित क्यों हूं? ये तो बड़े गहरे प्रश्न हैं। ये आवश्यकताएं नहीं हैं। इन्हें हम आध्यात्मिक बातें कह सकते हैं, आत्मा के तल की बातें। गरीब आदमी के लिए इन बातों का कोई अर्थ नहीं। तो जब कोई समाज गरीब होता है तो उसके आध्यत्मिक होने की संभावना कम हो जाती है, उसके समाजवादी और साम्यवादी होने की संभावना बढ़ जाती है। छीना-झपटी में रस होता है, राजनीति में रस होता है, ध्यान में रस नहीं होता। जब कोई समाज उन्नत होता है, सब भांति प्रगतिशील होता है, तब धर्म का उदय होता है। दार्शनिक प्रश्न अचानक बड़े महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं। उनके उत्तरों की खोज शुरू हो जाती है। तो जरूरतों का एक क्रम है। सामान्यत: जब हम कहते हैं जरूरत, तो हमारा मतलब शरीरिक जरूरत से होता है। तो उस अर्थ में तो ध्यान की कोई जरूरत नहीं है। परन्तु यदि हम जरूरतों को तीन भागों

में बांटे, तो आध्यात्मिक जरूरत भी एक जरूरत है। आज से ढाई हजार साल पहले जब भारत सोने की चिड़िया था, दुनिया का सबसे सम्पन्न देश था तो भारत ने धर्म के शिखर छुए। यहां बुद्ध और महावीर जैसे सैकड़ों लोग पैदा हुए। वह समय था जब भारत ने धर्म के महाशिखरों को छुआ। फिर धीरे-धीरे सोने की चिड़िया लुटती पिटती गयी।

हर देश का उत्थान और पतन होता है। जैसे हमारे व्यक्तित्व में जवानी आती है फिर बुढ़ापा आता है, ऐसे ही देश भी जवान होते हैं और फिर बूढ़े हो जाते हैं, सभ्यताओं पर यौवन आता है फिर वृद्ध हो जाती हैं। आज हमारा देश एक तरह की वृद्धावस्था में है। हम बड़ी दीन-हीन अवस्था में हैं। सारी दुनिया के सामने भिखमंगों जैसी स्थिति है। आज यह सवाल उठता है कि ज्ञान की क्या जरूरत है? निश्चित रूप से उन अर्थों में तो कोई जरूरत नहीं है। यह तो बड़ी गहरी बात है। तो गरीब समाज धार्मिक नहीं हो पाता या गरीब समाज मैं धर्म फैलता भी है तो वह झूठा धर्म होता है, पूजा और प्रार्थना वाला धर्म, स्तुति और भोज वाला धर्म। गरीब आदमी मन्दिर भी जाता है तो वहां कुछ मांगने जाता है। वहां भी भीख मांगना। प्रार्थना का अर्थ ही होता है मांगना। मांगने वाले को हम कहते हैं प्रार्थी। तो मन्दिरों, मस्जिदों में जो प्रार्थना करने जाते हैं वे मांगें करने ही जाते हैं कि हे प्रभु! हमें यह दे दे, कि वह दे दे, कि पत्नी बीमार है ठीक हो जाए, कि बेटे की नौकरी नहीं लगी कि बेटी की शादी हो जाए। यह तो प्रार्थना नहीं है। इसे तुम धार्मिक प्रार्थना मत समझना। यह तो किसी लाचार व्यक्ति की बड़ी ही मजबूर स्थिति से निकली हुई मांग है कि बेचारा कुछ कर नहीं पा रहा। लाचार है, मजबूर है कि आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है। यह प्रार्थना कोई प्रार्थना नहीं है। यह धर्म कोई धर्म नहीं है। जब कोई समाज संपन्न होता है, स्वस्थ, प्रसन्न सब भांति प्रफुल्लित होता है तब जाकर आध्यात्मिक प्रश्न खड़े होते हैं। हां, इसका अपवाद हो सकता है। गरीब आदमी धार्मिक हो सकता है। बशर्ते उसकी प्रतिभा अत्यंत प्रगाढ़ हो। गरीब समाज तो धार्मिक नहीं हो सकता। हां अगर वह व्यक्ति अत्यंत प्रतिभाशाली है, प्रखर बुद्धि है, विवेक है, वह अपवाद है कोई कबीर जुलाहा, गोरा कुम्हार, कोई रैदास चमार, बुद्ध, महावीर, राम और कृष्ण जैसी ऊंचाइंया छू सकता है- यह कोई आश्यर्च नहीं है कि भारत में जितने भी अवतार हुए

चाहे राम, कृष्ण, या बुद्ध या महावीर, सब राजाओं के बेटे थे। जरूर संपन्नता और धार्मिकता का कोई संबंध है लेकिन अपवाद भी हुए हैं। परन्तु उनकी संपन्नता दूसरे प्रकार की है। माना कबीर, गोरा, रैदास बाहर से सम्पन्न नहीं हैं परन्तु उनकी सम्पन्नता भीतरी है। अति मेधावी हैं। उसी मेधा के कारण वे बिना राज-पाट के भी यह देख पाए कि अगर यह सब मिल भी जाए तो भी कुछ मिलने वाला नहीं। इसके लिए बड़ी मेधा चाहिए। हमारे पास तो सब है फिर भी यह दिखायी नहीं देता और न होते हुए भी देख लेना कि इन सब में कुछ नहीं है, बड़ी प्रतिभा का लक्षण है। गरीब रहकर भी जिसे पता चल जाए कि महलों में भी कुछ मिलने वाला नहीं, कोई शांति मिलने वाली नहीं, झोपड़े में रहकर भी जिसे यह पता चल रहा है, निश्चित ही वह अत्यंत प्रतिभाशाली है। बुद्ध और महावीर को अगर पता चल गया तो कोई खास बात नहीं है। क्योंकि महल था, उसी में जीए थे, भलीभांति पता था कि इसमें कुछ मिलने वाला नहीं है। बुद्ध और महावीर यदि ज्ञान को उपलब्ध हो जाते हैं तो कोई खास बात नहीं है। लेकिन कबीर जब हो जाते हैं, दादू दयाल जब हो जाते हैं, दरिया साहब जब हो जाते हैं तो निश्चित यह आश्चर्य की बात है। इनके पास कुछ नहीं था फिर भी ये देख पाए कि सब मिल जाए तो भी आनन्द नहीं आएगा, शांति नहीं आएगी। तो जब आप पूछते हैं कि शांति की क्या आवश्यकता है? तो मैं कहूंगा कि उन अर्थों में तो कोई आवश्यकता नहीं है, इतने लोग, पशु-पक्षी, पौधे ऐसे ही जी रहे हैं। अगर आप मेरे तरीके से तीन खंडों में बांटे- शारीरिक, मानसिक और आत्मिक आवश्यकता तब यह भी एक आवश्यकता है। बाकी की दो पूरी हो जाने पर तीसरी आवश्यकता पैदा होती है।

प्रश्न-२ : मैं ध्यान करते-करते थक गया हूं। बार-बार प्रयत्न करने पर और भी ज्यादा आनन्द-रहित महसूस करता हूं?

उत्तर : निश्चित रूप से समझने में कुछ भूल-चूक हो रही है। आप जिसे ध्यान कह रहे हैं वह ध्यान नहीं। मैं जिसे ध्यान कह रहा हूं वह हमारी चेतना का स्वभाव है। परम चैतन्यता। वह कोई क्रिया नहीं कोई कर्म-काण्ड नहीं। आज सुबह ओशो आलोक जी ने आपको समझाया था उस जापान के झेन फकीर बोकोजू की कहानी कह के जिसने सम्राट को कहा कि उस बीच के

कक्ष में हम कुछ नहीं करते क्योंकि ध्यान कोई क्रिया नहीं है। ध्यान किया नहीं जा सकता, ध्यान में हुआ जा सकता है। वह हमारा स्वभाव है। कल मैंने कहा था धर्म हमारा स्वभाव है। जैसे अग्नि का स्वभाव है गरम होना, जलाना। ऐसे ही हमारा स्वभाव है चैतन्य होना, जागरूक होना। यह कोई कृत्य नहीं है जो हम कर रहे हैं। हां, अग्नि अगर कोई कृत्य कर रही होती गरम करने का तो जरूर थक गयी होती और कहती कि भई हम थक गए। कम से कम एक तो छुट्टी दो हफ्ते में। कब तक हम जलाते रहेंगे, आखिर कब तक। कल एक सज्जन ने कहा था न कि- नया सफर शुरू करूं भी तो भी कैसे, अभी तो पहले सफर की थकान बाकी है। नहीं, समझने में कोई भूल-चूक हो रही है। ध्यान कोई क्रिया-काण्ड नहीं है। ध्यान निष्क्रिय जागरुकता का नाम है।

ओशो की परिभाषा सुनना। ओशो कहते है "Meditation is a state

of unoccupied mind" मन की अव्यस्त दशा का नाम ध्यान है। अर्थात् जब हम कुछ भी नहीं कर रहे, बस हैं, जागरूक, इस दशा का नाम ध्यान है। फिर आप पूछेंगे कि फिर ध्यान के नाम पर ये क्रियाएं क्यों करवा रहे हैं? संजीवनी ध्यान, ब्रह्मनाद ध्यान। याद रखना विधि ध्यान नहीं है। कोई भी विधि ध्यान नहीं है। हां, विधि के द्वारा हम उस निष्क्रिय अवस्था में पहुंच सकते हैं, वह भी अगर हम ध्यान से समझेंगे तो। यदि हम केवल विधि ही करते रहे और ध्यान को ठीक से नहीं समझे तो हम उस अवस्था को नहीं पहुंच पाएंगे। हम अपनी क्रिया में ही संलग्न रहेंगे। ध्यान कोई क्रिया नहीं। और यदि हमने ध्यान को भी क्रिया की तरह किया तो हम थक जाएंगे। ध्यान को अगर

सहज स्वभाव की तरह समझा तो आप पाएंगे कि ध्यान तो कभी भी किया जा सकता है। आप मुझे सुन रहे हैं, आप दो तरीके से सुन सकते हैं। एक तो मूर्च्छित अवस्था में- कि सुन भी रहे हैं और मन के विचार भी चल रहे हैं, विचार भी क्रिया है, मानसिक क्रिया है। तो यदि आप विचार करते हुए मुझे सुन रहे हैं तो आप ध्यानपूर्वक नहीं सुन रहे। ध्यानपूर्वक सुनने का अर्थ है आप भीतर से भी निष्क्रिय और शिथिल, शांत हो गए। आपके मन ने विचार की क्रिया भी छोड़ दी। बस शांत बैठे हैं, ध्वनि की तरंगे कान से आकर टकराती हैं और सुनाई पड़ता है। सुनने की कोई कोशिश भी नहीं है। एकाग्रता भी नहीं। Meditation is not concentration, remember! ध्यान एकाग्रता नहीं है। यदि आपने एकाग्रता से मुझे सुना तो आप थक जाएंगे। एकाग्रता से मत सुनना। सहज, शांत और निष्क्रिय होकर सुनना। तब आप पाओगे कि थकने का कोई कारण ही नहीं। आपने कुछ किया ही नहीं। अकसर लोग ध्यान के नाम पर एकाग्रता साधते हैं। फिर एक दिन वे थक जाएंगे, ऊब जाएंगे, उदास हो जाएंगे। चले थे आनन्द की खोज में, एक दूसरे गढ्ढे में गिर जाएंगे। समझ की भूल के कारण। पहले ही जिन्दगी में इतनी आपाधापी, व्यस्तता थी, तुमने एक और क्रिया शुरू कर दी, ध्यान की क्रिया। सारी क्रियाएं वहीं की वहीं बरकरार। तुमने एक और क्रिया-काण्ड जोड़ दिया। यह तो थकाने वाला सिद्ध होगा। यहां जो हम आपको क्रियाएं करवा रहे हैं वे सिर्फ उस निष्क्रिय जागरुकता की झलक देने के लिए। एक बार उसकी झलक मिल जाए तो फिर ये क्रियाएं छोड़ देना। फिर तो सीधे ही निष्क्रिय जागरुकता में प्रवेश करना। तो ध्यान की क्रियाओं को ऐसे समझना जैसे- जब हम इस पार हैं तो नाव में बैठे हैं, पतवार चलाते हैं और जब उस पार पहुंच गए तो नाव से छुटकारा- नाव से बाहर आ जाना। एक बार इस पार आ गए तो फिर नाव को पकड़ कर मत बैठ जाना कि आह इतनी प्यारी नाव! इसे धन्यवाद, अब इस को न छोड़ेंगे। कई लोग मेरे पास आते हैं मिलने। कोई कहता है मैं 10 साल से ध्यान कर रहा हूं, कोई कहता है मैं 15 साल से विपस्सना साध रहा हूं, कोई 25 साल से कुण्डलिनी ध्यान कर रहा है। तुम पागल हो गए हो क्या? तुमसे कहा किसने इतने साल करने को। कुछ समय पर्याप्त था। ओशो ने जहां कहीं भी कहा ध्यान करने के लिए तो उन्होंने कहा कि अगर पूरी त्वरा से, पूरी

intensity से करो तो तीन दिन और धीमे-धीमे, कुनकुने करो तो तीन महीने। उन्होंने कब कहा कि तीन महीने से ज्यादा करना। तुम 25 साल से कर रहे हो। तुमने बात ही नहीं सुनी। किसने कहा 15 साल विपस्सना करने को? वह तो जागरूक होने की झलक लेने को श्वांस-प्रश्वांस को देखना था। जैसे ही जागरुकता समझ आ गयी सांस को भूलो। सहज, स्वाभाविक जागरुकता में रहो। तो विधि नाव की तरह है। उसमें सवार भी होना और पार होकर उससे उतर भी जाना। कोई बैठे ही नहीं रहना और न नाव को सिर पर ढोना कि इस नाव ने इस पार पहुंचाया अब तो इसे न छोड़ेंगे।

प्रश्न- ३ : मुझे संगीत से बहुत प्रेम है जैसे ओशो से प्रेम है। अब मैं संगीत सुनता हूं तो तल्लीन हो जाता हूं। क्या यह मेरा डूबना हानिकारक तो न होगा?

उत्तर : जरा भी नहीं। उपयोगी रहेगा। क्योंकि हमारे भीतर भी एक संगीत गूंज रहा है हमारी चेतना में। जब तुम खूब जागरूक हो जाओगे, बिल्कुल निष्क्रिय और निर्विचार, शांत और मौन, तब अचानक तुम्हें भीतर एक संगीत सुनाई पड़ेगा। तो बाहर के संगीत को सुनकर अगर तुम तल्लीन हो रहे हो तो चलो अभी बाहर के संगीत में तल्लीनता आयी। एक दिन भीतर के संगीत को भी पकड़ लोगे। यहां जो मित्र छह दिन का कार्यक्रम करने आए हैं वे उस परम संगीत को पहचानेंगे। उस अंतर्संगीत में डूबेंगे। पांचवें दिन वे उस संगीत के लोक में प्रवेश करेंगे। तो संगीत में डूबना उपयोगी है। आप देखते होंगे कि यहां दिन भर विभिन्न सत्रों में संगीत बजता है। ओशो ने संगीत को बहुत महत्त्व दिया। उन्होंने हर ध्यान विधि में संगीत को जोड़ा। यह अकारण नहीं है। इसका बहुत गहरा कारण है। बाहर के संगीत में डूबते-डूबते हम उस भीतर के संगीत को पा सकते हैं। संतों ने उस संगीत को ही कहा है 'ओंकार'। गुरु नानक देव जी कहते हैं- एक ओंकार सतनाम। उस संगीत में डूबना है, मौन के संगीत में, शून्य के संगीत में। ध्यान उसकी भूमिका है। प्यारे मित्रों, इन चार दिनों में एक भूमिका निर्मित हो रही है। ताकि पांचवें दिन आप उस महासंगीत में, दिव्य संगीत में डूब सकें। वहां से समाधि की शुरुआत है।

ध्यान और समाधि में यही अंतर है। ध्यान का अर्थ है- एक निष्क्रिय शून्य, शांत जागरुकता। और समाधि का अर्थ है- उस शांति में अब संगीत सुनाई

पड़ने लगा। उस शून्यता में अब शून्यता न रही, एक भराव पैदा हो गया। ध्वनि की तरंगों से हुई है वह शून्यता। तो यहां से समाधि की शुरुआत होती है। तो छ: दिनों के इस क्रार्यक्रम में चार दिन ध्यान के हैं, पांचवें दिन संगीत की यात्रा शुरू होगी, छठवें दिन हम सब परमात्मा की उस ध्वनि को सुन पाएंगे, उसमें डूब पाएंगे। तो आप पूछते हैं कि बाहर के संगीत में डूबना हानिकारक तो नहीं? जरा भी नहीं। बस इतना ही ध्यान रखना कि वहां अटक मत जाना। माना यह संगीत प्यारा है, पर वह जो परमात्मा का दिव्य संगीत है, वह इससे करोड़ों-करोड़ों गुना ज्यादा प्यारा है। तो बाहर के संगीत में अटक कर मत रह जाना। उसे एक Stepping Stone, एक सीढ़ी की तरह लेना। और आगे बहुत कुछ होने को है। चले-चलो उस दिशा में।

प्रश्न- ४ : मैं स्वंय को जानना चाहता हूं। स्वयं में स्थित होना चाहता हूं। अपने अन्दर की आवाज को सुनना चाहता हूं। मेरी सहायता करें। मैं अनिश्चय और द्वन्द्व में जीता हूं। शायद मैं अपना प्रश्न ठीक से लिख भी नहीं पा रहा हूं?

उत्तर : आपकी बात समझ में आयी। यह अनिश्चय, द्वन्द्व और अनिर्णय की स्थिति बड़ी खतरनाक है। अनिर्णय का अर्थ है कि मैं चौराहे पर से बाएं जाऊं, कि दाएं जाऊं, सामने वाले रास्ते पर जाऊं, पीछे पलट जाऊं कि खड़ा रहूं। यह संशय की दशा हमारी आत्मा को नष्ट करने वाली है। भगवान श्री कृष्ण ने गीता में कहा है कि 'संशयात्मा विनष्यति' संशय वाली आत्मा का विनाश हो जाता है। यही कृष्ण अर्जुन को कहते हैं कि न आग आत्मा को जला सकती है, न पानी ''नैनं छिदन्ति शस्त्राणि, महं दहक पावक''। उसी आत्मा का संशय नाश कर देता है। आग जला नहीं सकती, पानी गला नहीं सकता लेकिन यह संशय तुम्हारा नाश कर देगा। इससे कैसे उबरेंगे?

इस बारे में हम परसों पूरा घण्टा ''सम्यक् संकल्प'' के सत्र में बात करेंगे। कि हमारे भीतर एक Integration कैसे पैदा हो। हमारे भीतर जो खण्ड-खण्ड हैं वह एक अखण्ड शक्ति कैसे बने। एक will power एक संकल्प शक्ति कैसे पैदा हो। संशय का अर्थ है खण्ड-खण्ड टूटना, बिखरना। एक पुराने गीत की पंक्ति है-

'इस दिल के टुकड़े हजार हुए, कोई इधर गिरा, कोई उधर गिरा।'

वैसी हालत है प्रश्नकर्त्ता की। हजारों इच्छाएं हैं, हजारों तमन्नाएं हैं। कोई

पूरब खींच रही है, कोई पश्चिम, कोई उत्तर, कोई दक्षिण, कोई आगे कोई पीछे। और समझ में नहीं आ रहा कहां जाएं क्या करें? ऐसे तो हम विनष्ट हो जाएंगे। यह तो ऐसा हुआ जैसे हमने बैलगाड़ी में चारों तरफ बैल जोत दिए हों। सब अपनी-अपनी तरफ खींच रहे हैं। यह बैलगाड़ी कहीं भी यात्रा नहीं कर पाएगी। यहीं खड़ी-खड़ी टूट जाएगी। जिन्दगी में हमें एक सुनिश्चित दिशा चाहिए। एक दिशा में बैल जुते हों तो बैलगाड़ी यात्रा कर पाएगी। इसी शक्ति का नाम है संकल्प, will power, अखण्डता। एक दिशा एक निर्णय और उस निर्णय के पीछे पूरी Commitment, अपना पूरा जी जान लगा देना उस निर्णय के पीछे। तो इस संबंध में हम परसों बात करेंगे। अभी मैं इस प्रश्न को यहीं छोड़ देता हूं।

प्रश्न- ५ : मुल्ला नसरुद्दीन काल्पनिक है या कोई वास्तविक पात्र है? कृपया समझाएं।

उत्तर : ओशो ने नसरुद्दीन को रूप दिया वह तो काल्पनिक है परन्तु वास्तव में मुल्ला नसरुद्दीन हुआ है। बगदाद में उसकी जन्मस्थली है, वहीं उसकी कब्र भी है। वह एक सूफी फकीर था उसका सिखाने का ढंग बिल्कुल अलग था। वह अपने ही ऊपर मजाक करके दूसरों को शिक्षा देता था ताकि किसी को बुरा न लगे। जैसे कबीर करते हैं न अपने ऊपर मजाक-

'कहै कबीर दीवाना,
सारी दुनिया भयी सयानी, मैं ही इक बौराना।

मजाक कर रहे हैं, व्यंग्य कर रहे हैं। सीधे-सीधे नहीं कह रहे हैं। आप लोग बहुत सयाने हैं इक मैं ही बौरा गया हूं। मैं ही पगला गया हूं। मुल्ला नसरुद्दीन की भी आदत ऐसे ही समझाने की थी। अपने ऊपर, खुद का ही मजाक उड़ाकर। एक दिन नसरुद्दीन अपने गधे पर भागा जा रहा था। उन दिनों गधे और घोड़े ही मुख्य वाहन हुआ करते थे। वह भागा जा रहा था और चिल्ला रहा था रास्ता छोड़ो, मैं बहुत जल्दी में हूं। लोग रास्ता देते जा रहे थे कि पता नहीं क्या संकट की स्थिति आ गयी! एक आदमी ने चिल्लाकर पूछा कि मुल्ला कौन सी मुसीबत आ गयी? मुल्ला बोला- क्या बताऊं आज सुबह से ही मेरा प्यारा गधा नहीं मिल रहा, पता नहीं कहां खो गया! उस आदमी ने कहा- भले मानस तुम उसी गधे पर तो सवार हो। मुल्ला ने नीचे देखा और धन्यवाद दिया कि तुमने अच्छा बता दिया, वरना न जाने कितने मील चक्कर लगाने पड़ते!

यह मुल्ला व्यंग्य कर रहा है। वह कह रहा है कि तुम जिस आनंद, जिस परमात्मा को ढूंढ़ रहे हो, "मैं कौन हूं" पूछ रहे हो, पागल! तुम वही तो हो। किसे खोज रहे हो? उपनिषद् के ऋषि इसी बात को बड़े गंभीर दार्शनिक अंदाज में कहेंगे- अहं ब्रह्मास्मि, तत्वमसि श्वेतकेतु, तुम भी वही ब्रह्म हो। नसरुद्दीन जरा मजाक के लहजे में कह रहा है कि तुम जिस परमात्मा को ढूंढ़ रहे हो, तुम वही तो हो। मेरा गधा तो फिर भी मुझसे दूर है। मैं उसे भूल भी सकता हूं। जैसे चश्मा लगाने वाले लोगों के साथ प्राय: होता है न कि चश्मा लगाए हैं और चश्मा ढूंढ़ रहे हैं। और उसी चश्मे के माध्यम से ढूंढ रहे हैं। तो नसरुद्दीन मजाक कर रहा है कि तुम जिसे ढूंढ़ रहे हो वह तुम्हीं हो। उसका अन्दाज बड़ा निराला है।

एक बार अपने मित्र से मिलने शहर गया था। चलते समय मित्र ने भेंट में मांस दिया और एक कुकिंग बुक भी दी, पाक-कला पुस्तक, जिसमें विधि लिखी थी कि स्वादिष्ट व्यंजन कैसे बनाएं। मुल्ला खुशी-खुशी अपने गांव वापस जा रहा है कि पत्नी को दूंगा घर जाकर। एक हाथ में किताब रखे हुए और एक हाथ में मांस रखे हुए मस्ती से गांव की ओर लौट रहा है। अचानक 2-3 चीलों ने ऊपर से देखा। वे चीलें इकट्ठी आईं और झपट्टा मारकर मांस उठा ले गयीं। मुल्ला ने आश्चर्य से ऊपर की ओर देखा और कहा- मूर्खों, अरी

भूखी चीलों, असली महत्त्वपूर्ण किताब तो मेरे पास है। नासमझों, विधि तो इसमें लिखी है!

नसरुद्दीन मजाक कर रहा है पण्डितों की, मौलवियों की, ध्यान-विधियों की, कर्मकाण्डों की। वह कह रहा है कि विधि तो हमारे पास है। मांस का क्या करोगे? कोई चील इतनी मूर्ख नहीं जितना आदमी। शास्त्रों में, किताबों में हमारा बड़ा रस है। इन किताबों के पीछे क्या-क्या हुआ है जानते हो? बड़े-बड़े युद्ध हुए हैं। किसी ने कुछ कटुक वचन कह दिए किसी धर्मशास्त्र के खिलाफ और धर्मयुद्ध शुरू हो गया। बड़ा खून-खराबा हुआ है किताबों के पीछे... हजारों जिंदा आदमी मर जाएं तो कोई बात नहीं, हम अपनी भी जान गंवाने को तैयार हो जाते हैं। नसरुद्दीन मजाक कर रहा है... किताब का महत्व! वास्तविकता से अधिक हमारा दार्शनिकता में रस है। पीछे एक मित्र ने पूछा था कि 'लोग मन्दिरों में परमात्मा को ढूंढ़ रहे हैं। मूर्तियां बनाकर लड़ रहे हैं कि इस मूर्ति में भगवान है, मेरी मूर्ति सुन्दर है। वास्तविक भगवान कौन है?' कितने युद्ध हुए मूर्तियों के पीछे, सिद्धांतों के पीछे।

मुल्ला नसरुद्दीन का तरीका ऐसा था, वह स्वयं पर व्यंग्य करके सिखाता था। वह एक वास्तविक व्यक्ति था, एक सूफी फकीर था। परमगुरु ओशो ने उसी के उदाहरण देकर और नए-नए किस्से जोड़े। ओशो ने जो चरित्र बनाया, मुख्यत: वह उनकी कल्पनाशक्ति का नमूना है; परन्तु उसमें कुछ वास्तविक घटनाएं भी शामिल हैं। अभी मैंने जो चुटकुले सुनाए वे वास्तविक घटनाओं वाले हैं। नसरुद्दीन पर कई किताबें लिखी गयी हैं। एक रशियन लेखक की किताब का अनुवाद कृष्ण कुमार ने हिन्दी-उर्दू में किया है; उसका नाम है 'दास्ताने नसरुद्दीन'। बड़ी अच्छी किताब है। उसमें किस्सा है कि नसरुद्दीन एक नाव में जा रहा था। उसने मल्लाह से पूछा कि 'भई, कुछ पढ़े-लिखे हो?' मांझी ने कहा, मैं तो अनपढ़ गंवार हूं। मेरा बाप भी नाव चलाता था। मैं भी यही करता हूं। मुल्ला बोला, तेरी चार आना जिन्दगी बेकार गयी, गैर पढ़े-लिखे व्यक्ति का जीवन भी कोई जीवन है। फिर पूछा, क्यूं रे, गुणा-भाग, जोड़ना-घटाना कुछ तो हिसाब-किताब करना आता होगा? मांझी कहने लगा मुझे तो कोई गणित नहीं आता। बस 10 तक उंगलियों पर गिन लेता हूं। आगे गिनती भी नहीं आती। मुल्ला ने कहा तब तो तुम्हारी आठ आना जिन्दगी बेकार

गयी। कुछ आता ही नहीं तुम्हें। मुल्ला ने समय काटने के लिए और उसे अपमानित करने के लिए पूछा, कुछ जनरल नॉलेज तो होगी? इस समय देश का राजा कौन है? बताओ। मांझी बोला मुझे तो नहीं पता। मुझे क्या लेना-देना कौन राजा है? कौन प्रधानमंत्री है? मुझे क्या लेना देना! नसरुद्दीन ने कहा- तुम्हारी बारह आना जिन्दगी बेकार गयी। फिर थोड़ी देर बाद नदी में तूफान आया। नाव डोलने लगी... अब डूबी कि तब डूबी। मांझी बोला- मुल्ला साहब, तैरना आता है कि नहीं? मुल्ला ने कहा कि भई, हम शास्त्रीय व्यक्ति हैं, किताबों में ही व्यस्त रहे। तैरना सीखने का तो अवसर ही नहीं आया। ज्ञान में रस था हमें तो, बस! मांझी ने कहा कि मैं तो तैरकर जाता हूं। अब आपकी सोलह आना जिन्दगी बेकार गयी।

नसरुद्दीन का सिखाने का तरीका थोड़ा अनोखा था। एक बार उसके पास एक व्यक्ति आया। बोला कि आप तो पहुंचे हुए फकीर हैं, कृपा कर कुछ मंत्र-वंत्र हमें भी दें। कोई सिद्धि, कोई शक्ति हमें भी प्राप्त हो। नसरुद्दीन ने बहुत समझाया कि मुझे कोई सिद्धि नहीं आती। लेकिन आदमी का दिमाग ऐसा है कि जितना मना करो वह उतना ही सोचता है कि जरूर आती होगी तभी मना कर रहे हैं, बता नहीं रहे। उसने खूब चमचागिरी, खुशमाद की। नसरुद्दीन तंग आ गया, रोज-रोज की मिन्नतों से। एक दिन बोला, आओ, आज तुम्हें बता ही देते हैं। लिखो, यह छोटा सा मंत्र है। उसे लिखवा दिया। कहा कि इस मंत्र का 100 बार उच्चारण कर लेना, तुम्हें सिद्धि प्राप्त हो जाएगी। तुम जो चाहोगे वही होने लगेगा। वह आदमी तो लेकर चलने लगा। मुल्ला ने कहा, अरे नालायक रुक, भागता कहां है? कम से कम शुक्रिया तो अदा कर, और पूरी बात तो सुन जा। रात को 12 बजे स्नान करके, नए कपड़े पहनकर इस मंत्र का उच्चारण करना और ऐसा करते समय बन्दर का ख्याल तेरे मन में नहीं आना चाहिए। उस आदमी ने कहा बन्दर का ख्याल तो मुझे कभी नहीं आया। क्यों आएगा? माना कि डार्विन ने बताया कि हम बन्दर की औलाद हैं मगर मुझे अपने पूर्वजों से कोई खास लगाव नहीं है। आप चिन्ता न करें।

12 बजे का इन्तजार होने लगा। रात ठीक वक्त पर रगड़-रगड़ कर स्नान किया और नए कपड़े पहने, जैसा कि नसरुद्दीन ने कहा था। और फिर अंधेरे में, अकेले कमरे में जाकर उच्चारण शुरू किया। जैसे ही उसने 2-3 बार

उच्चारण किया उसे लगा कि बन्दर की आवाज आ रही है कहीं से। उसने लालटेन जलाई और खिड़की से झांक कर देखा। बाहर तो कोई बन्दर नहीं था। उसने सोचा, लगता है वहम हो गया। लेकिन शर्त तो टूट गयी। सोचा, कोई अशुद्धि रह गयी शायद। जाकर फिर साबुन रगड़ा। आकर कमरे में बैठा। इस बार तो लगा कि कमरे में ही बन्दर है। उसे समझ में न आए कि बन्दर का ख्याल मुझे क्यों आ रहा है। जरूर पिछले जन्म के किसी दुष्कर्म का कोई फल है। पहले तो कभी ख्याल नहीं आया। जरूर कुछ पाप किए होंगे। चलो एक बार फिर नहा लेते हैं! अब तो लगा जैसे बाथरूम में भी बंदर मौजूद हैं। बेचारा रात भर परेशान रहा। सुबह नसरुद्दीन के पास गया। आंखें लाल, सूजी हुईं। नसरुद्दीन ने पूछा– क्यों, पूरा हो गया मंत्र? बोला–शायद पिछले जन्म का कोई कर्मफल है। मैं पापी आत्मा हूं। आपने तो कृपा करके बता दिया परन्तु मैं मंत्र पूरा नहीं कर पाया। बन्दर का ख्याल आ जाता है। नसरुद्दीन ने कहा मैंने तो तुम्हें 'कंडीशन' बता दी। अब, कैसे पूरी करनी शर्त यह तुम जानो। मेरा पिंड छोड़ो।

मुल्ला बताना चाह रहा है कि तुम जिस–जिस चीज का निषेध करोगे वही–वही तुम पर हमला करेगी। जिस विचार को निकालना चाहोगे उसी में फंस जाओगे। निषेध आमंत्रण है। किसी चीज को रोको अगर तो फिर वह तुम्हें बहुत आकर्षित करेगी।

जरा कल्पना करें कि आप रोज एक सड़क पर से गुजरते हैं, एक दिन उस सड़क पर एक मकान के आगे बैनर लगा है कि खिड़की के भीतर झांकना मना है, सख्त मना है। आप सोचिए आपके मन के भीतर क्या होगा? जरा कल्पना करें। मन होगा कि जरा देखें भीतर आखिर ऐसा भी क्या है कि देखना सख्त मना है! आपने देखा जिस–जिस दीवार पर लिखा रहता है कि यहां पेशाब करना मना है तो उस सूचना को पढ़कर जिसको नहीं भी लगी थी, तो लग आती है। पढ़कर याद आ जाता है। और लगता है कि यहां लिखा है इसका मतलब लोग यहां करते ही होंगे। वैसे भले–चंगे जा रहे थे, लघुशंका नहीं लगी थी। अचानक लगता है कि बड़ा प्रेशर बन गया है। निषेध आकर्षण बन जाता है।

बैनर पढ़कर बड़ा आकर्षण बन जाएगा। यदि आप सज्जन आदमी हुए तो

सीधी नजर करके निकल जाएंगे। दुर्जन आदमी हुए तो परदा उठाकर देखेंगे। बेचारे सज्जन आदमी को रात को सपना आएगा। दमित वासना हो गयी कि उस खिड़की में आखिर हो क्या रहा था? सपना आएगा कि फिर उस सड़क से निकल रहे हैं और धड़ल्ले से परदा उठाकर देख लिया। इस सपने से बचना असम्भव है। आएगा ही आएगा। बुर्के में छुपी हुई स्त्री जितना आकर्षित करती है और सपने में डोलती है, उतना बगैर घूंघट वाली स्त्री आकर्षित नहीं करती; और पश्चिम में जहां कपड़े निरंतर कम होते जा रहे हैं स्त्री का आकर्षण भी कम होता जा रहा है। बुर्के में स्त्री आकर्षित करती थी, सपनों में डोलती थी। यह स्त्रियों का ढंग था आकर्षित करने का, याद रखना। घूंघट में छुपा चेहरा बड़ा आकर्षक लगता है। जहां घूंघट खुला वहां बात समाप्त हो गयी। तो मुल्ला यह बंदर वाली बात कहकर शिक्षा दे रहा है कि जिस भी विचार को तुम हटाओगे, वही तुम्हें तंग करेगा।

उसका उपदेश का तरीका बड़ा अनोखा था। उसकी कब्र भी बड़ी मजेदार है। सामने से जब जाते हैं तो दो बड़े मजबूत खंभे हैं और एक बहुत बड़ा दरवाजा लगा हुआ है। उस पर छः बड़े-बड़े मजबूत ताले लगे हुए हैं। ऐसा बड़ा द्वार है जैसे लाल किले का दरवाजा। मजबूत खंभे, विशालकाय दरवाजा, और उस पर छः मजबूत ताले... और शेष तीन तरफ से कब्र खुली हुई है। दीवार तक नहीं है! नसरुद्दीन ने मरते-मरते भी मजाक कर दी। कि तुम जीवन में कितनी ही सुरक्षा कर लो, वह ऐसे ही है कि एक तरफ से आड़ और बाकी सब तरफ से असुरक्षित। पागलों, जीवन में कहीं सुरक्षा हो सकती है क्या? मौत आ ही जाती है। हमारा सुरक्षा का इंतजाम बस ऐसा ही है... नसरुद्दीन की कब्र जैसा। तो उसने मरते-मरते भी मजाक कर दी। तो नसरुद्दीन वास्तव में एक सूफी संत हुआ है और ओशो ने उसी की प्रचलित कहानियों को और नए रंग देकर, नई कथाएं जोड़कर, विस्तारपूर्वक बड़ी गूढ़ बातें समझाई हैं। 'महावीर वाणी' किताब के सातवें प्रवचन से दो मजेदार प्रसंग सुनाता हूं आपको-

(1) **संयम की विधायक दृष्टि- भूलों से सीखना।**

आदमी भूलें भी नयी-नयी नहीं करता है, पुरानी ही करता है। जड़ता का इससे बड़ा और क्या प्रमाण होगा? अगर आप जिंदगी में लौटकर देखें तो एक दर्जन भूल से ज्यादा भूलें आप न गिना पाएंगे। हां, उन्हीं-उन्हीं को कई बार किया। ऐसा लगता है कि अनुभव से हम कुछ सीखते ही नहीं। और जो

अनुभव से नहीं सीखता वह संयम में नहीं जा सकेगा। संयम में जाने का अर्थ ही यह है कि अनुभव ने बताया कि असंयम गलत था; कि अनुभव ने बताया कि असंयम दुख था; कि अनुभव ने बताया कि असंयम सिर्फ पीड़ा थी और नरक था। लेकिन हम तो अनुभव से सीखते ही नहीं। अच्छा हो कि मैं मुल्ला की बात आपसे कहूं।

साठ वर्ष का हो गया है मुल्ला। कॉफी हाउस में मित्रों के पास बैठकर गपशप कर रहा है एक सांझ। गपशप का रुख अनेक बातों से घूमता इस बात पर आ गया कि एक बूढ़े मित्र ने पूछा– सभी बूढ़े हैं, साठ साल का नसरुद्दीन है, उसके मित्र हैं– एक बूढ़े ने पूछा कि नसरुद्दीन, तुम्हारी जिंदगी में कोई ऐसा मौका आया, तुम्हें ख्याल आता है कि जब तुम बड़ी परेशानी में पड़ गए थे– बहुत ऑकवर्ड मोमेंट? नसरुद्दीन ने कहा– सभी की जिंदगी में आता है। लेकिन तुम अपनी जिंदगी का कहो तो हम भी कहें।

तो सभी बूढ़ों ने अपनी-अपनी जिंदगी के वे क्षण बताए जब वे बड़ी मुश्किल में पड़ गए थे, जहां कुछ निकलने का रास्ता न रहा। कभी किसी ने कोई चोरी की और रंगे हाथों पकड़ा गया। कभी कोई झूठ बोला और झूठ नग्नता से प्रगट हो गया और कोई उपाय न रहा, उसको बचाने का।

नसरुद्दीन ने कहा कि मुझे भी याद है। घर की नौकरानी स्नान कर रही थी और मैं ताली के छेद से उसको देख रहा था। मेरी मां ने मुझे पकड़ लिया। उस वक्त मेरी बुरी हालत हुई।

बाकी बूढ़े हंसे। आंखें मिचकाईं, उन्होंने कहा– नहीं, इसमें कोई इतने परेशान मत होओ सभी की जिंदगी में, बचपन में ऐसे मौके आ जाते हैं।"

नसरुद्दीन ने कहा– व्हाट आर यू सेइंग, दिस इज अबाउट यस्टरडे! क्या कह रहे हो, बचपन! यह कल की ही बात है।"
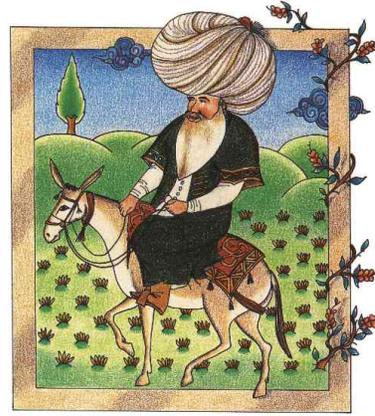
बचपन और बुढ़ापे में चालाकी भले बढ़ जाती हो, भूलें नहीं बदलतीं। वही भूलें हैं। हां, बूढ़ा जरा होशियार हो जाता है और पकड़ में कम आता है, यह दूसरी बात है। लेकिन इससे बच्चा कम होशियार है, पकड़ में जल्दी आ जाता है। अभी उसके पास चालाकी के उपाय ज्यादा नहीं हैं। या यह भी हो सकता है कि बच्चे को पकड़ने वाले लोग हैं, बूढ़े को पकड़ने वाले लोग नहीं हैं। बाकी कहीं अनुभव में कुछ भेद पड़ता हो, ऐसा दिखाई नहीं पड़ता।

नसरुद्दीन मरा। स्वर्ग के द्वार पर पहुंचा। सौ वर्ष के ऊपर होकर मरा। काफी जीया। कथा है कि सेंट पीटर ने, जो स्वर्ग के दरवाजे पर पहरा देते हैं, उन्होंने नसरुद्दीन से पूछा– काफी दिन रहे, बहुत दिन रहे, लंबा समय रहे, कौन-कौन से पाप किए पृथ्वी पर?

नसरुद्दीन ने कहा– पाप! किए ही नहीं।

सेंट पीटर ने समझा कि शायद पाप बहुत जनरलाइज्ड बात है, ख्याल में न आती हो। बूढ़ा आदमी है। कहा– चोरी की कभी?

नसरुद्दीन ने कहा– नहीं।

कभी झूठ बोले?

नहीं।कभी शराब पी?

नसरुद्दीन ने कहा– नहीं।

कभी स्त्रियों के पीछे पागल होकर भटके?

नसरुद्दीन ने कहा– नहीं।

सेंट पीटर बहुत चौंका। उसने कहा– देन व्हाट यू हैव बीन डूइंग देयर फॉर सो लौंग ए टाइम? सौ साल तक तुम कर क्या रहे थे वहां? कैसे गुजारे इतने दिन?

नसरुद्दीन ने कहा– अब तुमने मुझे पकड़ा। यह तो झंझट का सवाल है। यह मुश्किल का सवाल है। लेकिन इसका जवाब मैं तुमसे एक सवाल पूछकर देना चाहता हूं। व्हाट हैव यू बीन डूइंग हियर?" तुम क्या कर रहे हो यहां? हम तो सिर्फ सौ साल से.... तुम्हारा तो सुनते हैं अनंतकाल से तुम यहां हो?

पाप न हो तो आदमी को लगता ही नहीं कि जियें कैसे? असंयम न हो तो आदमी को लगता ही नहीं कि जियें कैसे। अब महावीर जैसे लोग हमारी समझ के बाहर पड़ते हैं, इसका कारण है। इसका कारण एक्जिस्टेंशियल है। इंटेलेक्चुअल नहीं। उसका कारण बौद्धिक नहीं है कि वह हमारी समझ में नहीं

आता। बुद्धि में बिलकुल समझ में आता है। फर्क हमारे जीने के ढंग का है। हमारी समझ में यह नहीं आता कि संयम, तो फिर जियेंगे क्या? न कोई स्वाद में रस रह जाएगा, न कोई संगीत में रस रह जाएगा, न कोई रूप आकर्षित करेगा, न भोजन पुकारेगा, न वस्त्र बुलाएंगे, महत्त्वाकांक्षा न रह जाएगी। तो फिर हम जियेंगे कैसे?

मेरे पास लोग आते हैं, वे कहते हैं कि अगर महत्त्वाकांक्षा न रही, अगर बड़ा मकान बनाने का ख्याल मिट गया, अगर और सुंदर होने का ख्याल मिट गया, तो जियेंगे कैसे? अगर और धन पाने का ख्याल मिट गया, तो जियेंगे कैसे? हमें लगता ही यह है कि पाप ही जीवन की विधि है, असंयम ही जीवन का ढंग है। इसलिए हम सुन लेते हैं कि संयम की बात अच्छी है, लेकिन वह कहीं हमें छू नहीं पाती। हमारे अनुभव से उसका कोई मेल नहीं है। और वह हमारा सवाल ठीक ही है क्योंकि जब भी हमें संयम का ख्याल उठता है तो लगता है, निषेध– यह छोड़ो, वह छोड़ो। यही तो हमारा जीवन है। सब छोड़ दें! तो फिर जीवन कहां है! यह निषेधात्मक होने की वजह से हमारी तकलीफ है। मैं नहीं कहता कि यह छोड़ो, यह छोड़ो; मैं कहता हूं, यह भी पाया जा सकता है, यह भी पाया जा सकता है। इसे पा लो। हां, इस पाने में कुछ छूट जाएगा, निश्चित। लेकिन तब खाली जगह नहीं छूटेगी। तब भीतर एक नया फुलफिलमेंट, एक नया भराव होगा।

(२) रूपांतरण की शुरुआत- शक्तिशाली इंद्रिय से

जनगणना हो रही है और नसरुद्दीन के घर अधिकारी गए हुए हैं उससे पूछने, उसके घर के बाबत। अकेला बैठा है, उदास। तो अधिकारी ने पूछा कि कुछ अपने परिवार का ब्यौरा दो, जनगणना लिखने आया हूं। तो नसरुद्दीन ने कहा कि मेरे पिता जेलखाने में बंद हैं। अपराध की मत पूछो, क्योंकि बड़ी लंबी संख्या है। मेरी पत्नी किसी के साथ भाग गयी है। किसके साथ भाग गयी है, इसका हिसाब लगाना बेकार है। क्योंकि किसी के भी साथ भाग सकती थी। मेरी बड़ी लड़की पागलखाने में है। दिमाग का इलाज चल रहा है। यह मत पूछो कि कौन सी बीमारी है, यह पूछो कि कौन सी बीमारी नहीं है?

थोड़ा बेचैन होने लगा अधिकारी, बड़ी मुसीबत का मामला है, कहां, कैसे भागें, किस तरह सहानुभूति इसको बताएं और निकलें यहां से? तभी नसरुद्दीन

ने कहा— और मेरा छोटा लड़का बनारस हिन्दू युनिवर्सिटी में है। तो अधिकारी को जरा प्रसन्नता हुई। उसने कहा— बहुत अच्छा। प्रतिभाशाली मालूम पड़ता है! क्या अध्ययन कर रहा है?

नसरुद्दीन ने कहा— गलत मत समझो। हमारे घर में कोई अध्ययन करेगा? हमारे घर में कोई प्रतिभा पैदा होगी? न तो प्रतिभाशाली है, न अध्ययन कर रहा है। बनारस विश्वविद्यालय के लोग उसका अध्ययन कर रहे हैं। दे आर स्टडीइंग हिम। नसरुद्दीन ने कहा— हमारे घर के बाबत कुछ तो समझो, जो पूरा ढांचा है उसमें— और रही मेरी बात, सो तुम न पूछो तो अच्छा है। लेकिन जब तक वह यह कह रहा था तब तक तो अधिकारी भाग चुका था।

ढांचे में चीजों का अस्तित्व होता है। अभी मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि अगर आपके घर में एक आदमी पागल होता है, तो किसी न किसी रूप में आपके पूरे परिवार में ढांचा होगा, इसलिए है। नया मनोविज्ञान कहता है— एक पागल की चिकित्सा नहीं की जा सकती है जब तक उसके परिवार की चिकित्सा न की जाए। परिवार की चिकित्सा, फैमिली थेरेपी नयी विकसित हो रही है। जो और कुछ सोचते हैं वे कहते हैं कि परिवार से भी क्या फर्क पड़ेगा? क्योंकि परिवार, और परिवारों के ढांचे में जीता है। तो जब तक पूरी सोसाइटी की चिकित्सा न हो जाए, जब तक पूरे समाज की चिकित्सा न हो जाए, तब तक एक पागल को ठीक करना मुश्किल है। वे ग्रुप थेरेपी की बात करते हैं। वे कहते हैं— पूरा ग्रुप, वह जो समूह है पूरा, वह समूह के ढांचे में एक आदमी पागल होता है। चीजें संयुक्त हैं।

इसे हम ऐसा भी समझें कि अगर आपके भीतर एक इंद्री में ठीक दिशा शुरू हो जाए तो आपकी सारी इंद्रियों का पुराना ढांचा एक जगह टूटना शुरू हो जाता है। आपकी एक वृत्ति संयम की तरफ जाने लगे तो आपकी बाकी वृत्तियां असंयम की तरफ जाने में असमर्थ हो जाती हैं। मुश्किल पड़ जाती है। जरा-सा, इंचभर का फर्क और सारा का सारा जो रूप है— सारा का सारा रूप बदलना शुरू हो जाता है। कहीं से भी शुरू करें, कुछ भी, एक बिंदु मात्र आपके भीतर संयम का प्रगट होने लगे तो आपके असंयम का अंधेरा गिरने लगेगा। और ध्यान रहे, श्रेष्ठतर सदा शक्तिशाली है। तो मैं मानता हूं कि अगर एक व्यक्ति एक घर में ठीक हो जाए तो वह उस घर को पूरा ठीक कर सकता

है क्योंकि श्रेष्ठतर शक्तिशाली है। अगर एक व्यक्ति एक समूह में ठीक हो जाए तो पूरे समूह के ठीक होने के संचारण उसके आसपास से होने लगते हैं क्योंकि श्रेष्ठ शक्तिशाली है। अगर आपके भीतर एक विचार भी ठीक हो जाए, एक वृत्ति भी ठीक हो जाए तो आपकी सारी वृत्तियों का ढांचा टूटने और बदलने लगता है। बिखरने लगता है। फिर आप वही नहीं हो सकते जो आप थे। इसलिए पूरे संयम की चेष्टा में मत पड़ना। पूरा संयम संभव नहीं है। आज संभव नहीं है, इसी वक्त संभव नहीं है। लेकिन किसी एक वृत्ति को तो आप इसी वक्त, आज और अभी रूपांतरित कर सकते हैं। और ध्यान रखना, उस एक का बदलना आपकी और बदलाहट के लिए दिशा बन जाएगी। और आपकी जिंदगी में प्रकाश की एक किरण उतर आए, तो अंधेरा कितना ही पुराना हो, कोई भय का कारण नहीं है। प्रकाश की एक किरण अनंत गुने अंधेरे से भी ज्यादा शक्तिशाली है। संयम का एक छोटा-सा सूत्र, असंयम की जिंदगियां– अनंत जिंदगियों को मिट्टी में गिरा देता है।

लेकिन वह एक सूत्र शुरू हो, और शुरू अगर करना हो तो विधायक दृष्टि रखना, शुरू अगर करना हो तो उसी इंद्री से काम शुरू करना जो सबसे ज्यादा शक्तिशाली हो। शुरू अगर करना हो तो मार्ग मत तोड़ना। उसी मार्ग से पीछे लौटना है जिससे हम बाहर गए हैं। शुरू अगर करना हो तो अंधानुकरण मत करना कि किस घर में पैदा हुए हैं। अपने व्यक्तित्व की समझ को ध्यान में लेना। और फिर जहां भी मार्ग मिले, वहां से चले जाना। महावीर जहां पहुंचते हैं, वहीं मुहम्मद पहुंच जाते हैं। जहां बुद्ध पहुंचते, वहीं कृष्ण पहुंच जाते हैं। जहां लाओत्से पहुंचता है, वहीं क्राइस्ट पहुंच जाते हैं।

नहीं मालूम, आपको किस जगह से द्वार मिलेगा। आप पहुंचने की फिक्र करना, द्वार की जिद मत करना कि मैं इसी दरवाजे से प्रवेश करूंगा। हो सकता है वह दरवाजा आपके लिए दीवार सिद्ध हो, लेकिन हम सब इस जिद में हैं कि अगर जाएंगे तो जननेन्द्री के मार्ग से जाएंगे, कि जाएंगे तो हम तो विष्णु को मानने वाले हैं, हम तो राम को मानने वाले हैं तो हम राम के मार्ग से जाएंगे आप किसको मानने वाले हैं, यह उस दिन सिद्ध होगा जिस दिन आप पहुंचेंगें, उसके पहले सिद्ध नहीं होगा। आप किस द्वार से निकलेंगे, यह उसी दिन सिद्ध होगा जिस दिन आप निकल चुके होंगे, उसके पहले सिद्ध नहीं होता है। यह

पागलपन है और इससे पूरी पृथ्वी पागल हुई है। धर्म के नाम पर जो पागलपन खड़ा हुआ है वह इसलिए कि आपको मंजिल का कोई भी ध्यान नहीं है। साधनों का अति आग्रह है कि बस यही। इस पर थोड़ा ढीला होंगे, मुक्त होंगे तो आप बहुत शीघ्र संयम की विधायक दृष्टि पर, न केवल समझने में बल्कि जीने में समर्थ हो सकते हैं।

प्रश्न- ६ : मरने के बाद इंसान की आत्मा इन्सान के ही शरीर में जाएगी या किसी जीव-जन्तु की योनि में जा सकती है?

उत्तर : इस पर निर्भर करता है कि मरते समय आपके मन में क्या आकांक्षा और इच्छा है। कल मैंने कहा था न कि हमारी आकांक्षा ही आगे चलकर हमें नया रूप और नया आकार देती है। एक न एक दिन वह साकार हो जाती है। सामान्यत: तो इच्छाएं ऐसी होती हैं जो मनुष्य योनि में ही पूरी हो सकती हैं। अब किसी को बहुत धन कमाना है, फैक्ट्री लगाना है तो भैंस होकर तो यह नहीं हो पाएगा। तो हमारी वासना क्या है, उस पर निर्भर करेगा कि अगला जन्म कैसा होगा। तो कहा जा सकता है कि हजार में से 999 तो मनुष्य योनि में ही जाएंगे, परन्तु अपवाद हो सकता है। एकाध कोई ऐसा हो सकता है जिसे लगे कि यह भी कोई जिन्दगी थी। क्यों जीएं? अभी किसी ने पूछा था न कि ध्यान क्यों करें? कुछ लोग पूछते हैं- क्यों जीएं? ठीक है, मर जाओ। कुछ पूछते हैं- क्यों सांस लें? निश्चित रूप से ऐसे लोग जो जीवन से ऊब गए, विषादग्रस्त हो गए, सोचते हैं कि पंछी होते तो अच्छा था, मुक्त आकाश में होते। कहां फंस गए। ऐसे लोग मर कर पंछी बन जाएंगे। किसी को लग सकता है कि इससे तो जानवर ही अच्छे थे। न नौकरी करनी पड़ती थी, न बॉस की चमचागिरी करनी पड़ती थी, न लेने-देने का झंझट, न मां बाप की जिम्मेदारी। अब संभवत: यह आदमी मर कर जानवर हो जाएगा। जो आदमी पशुओं की भांति जीया, झगड़ा झंझट किया, अक्रूरता, कठोरता में जिन्दगी गयी, हो सकता है अगले जन्म में यह आदमी खूंखार जानवर हो जाए क्योंकि इस जन्म में भी इसकी वासना तो यही थी- खूंखार होने की। मनुष्य रहकर तो खूंखार हो न पा रहा था। कमजोर दांत, कमजोर नाखून। तो सिंह होकर उसकी वासना पूरी हो सकती है। मजबूत दांत, मजबूत पंजा। कई लोग अपने नाम के आगे सिंह लगाते हैं, वह शायद इसी इच्छा के कारण। लोग लायन्स
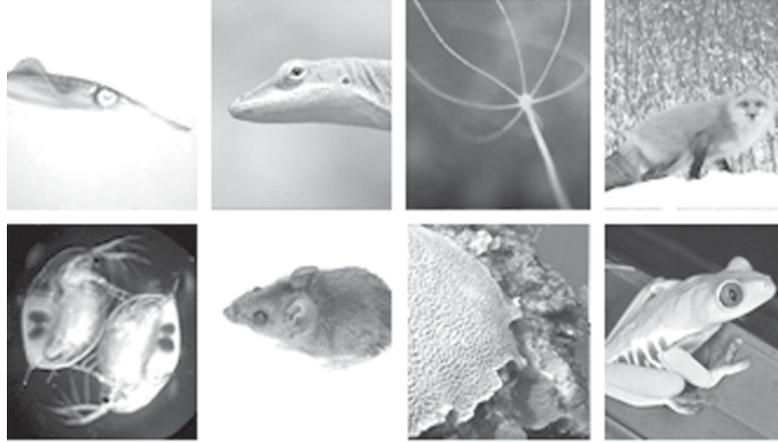
क्लब के मेम्बर बन जाते हैं और लायन कहलाने लगते हैं। परमात्मा ने तुम्हें इन्सान बनाया था तुम लायन बनना चाहते हो। हद हो गयी। अंतिम क्षण में हमारी क्या वासना है उसी के अनुसार हमारा अगला जन्म होता है। तो सामान्यत: नियम तो यही है कि मनुष्यों की वासना मनुष्य जन्म ही मिलता है। लेकिन कभी-कभार अपवाद भी होते हैं। एक महिला ने लिखा है कि मुझे कई तरह की बीमारियां हैं, डिप्रेशन है और कई समस्यांए हैं। इन्होंने लंबा चौड़ा लेटर लिखा है। मैं आप से निवेदन करना चाहूंगा कि आप योग्य चिकित्सक से इलाज कराएं। किसी मनोचिकित्सक से मिलें डिप्रेशन के लिए। ध्यान इसका इलाज नहीं है। यह आप अच्छी तरह समझ लें। किसी भी शारीरिक या मानसिक रोग का इलाज ध्यान नहीं है। नहीं तो रामकृष्ण परमहंस जैसे महाध्यानी कैंसर से न मरे होते, महर्षि रमण को कैंसर न हुआ होता। स्वामी विवेकानंद तैंतीस साल की उमर में डाइबिटीज से न मरते। ध्यान का डाइबिटीज से क्या लेना देना। नहीं, खूब अच्छी तरह याद रखें। ये तीन-तीन हिस्से जो मैंने बताए हैं- शरीर, मन और आत्मा। हर हिस्से की अलग जरूरतें हैं। अब अगर आप कहें कि मैं भोजन नहीं करूंगा, केवल ध्यान करूंगा तो काम चल जाएगा क्या? ऐसा नहीं होगा। शरीर का काम तो भोजन से ही चलेगा। मानसिक रोग हो, डिप्रेशन हो गया। यह तो किसी मनोचिकित्सक से इलाज कराने से ठीक होगा। ध्यान से ठीक नहीं होगा। इसके कुछ कारण हैं। दिमाग

में कुछ रसायन कम हो गए, कुछ रासायनिक द्रव्यों की कमी हो गयी, ध्यान उन्हें पूरा न कर पाएगा। इसके लिए दवाइयां लेनी पड़ेंगी। कुछ लोग इस भूल-चूक में ध्यान करने चले आते हैं कि ध्यान से उनकी सभी शारीरिक व मानसिक परेशानियां दूर हो जाएंगी। मैं निवेदन करना चाहता हूं कि ऐसा नहीं हो सकता। ऐसा प्रचार करने वाले साधु संत भी खूब हैं। वे झूठे आश्वासन देते हैं। तभी उनके पास हजारों की भीड़ लग जाएगी।

परन्तु मैं वही कहना चाहता हूं जो सत्य है, प्रामाणिक रूप से सत्य है। चाहे फिर मेरे पास कोई भीड़ इक्ट्ठा नहीं होगी। ध्यान आत्मा के तल की बात है। वह चेतना का स्नान है। आत्मा की शुद्धि है। तो जिस बहन ने प्रश्न पूछा है जिन्हें यें समस्याएं हैं वे किसी योग्य चिकित्सक से इलाज करवाएं। ध्यान इसका इलाज नहीं है। हां जब वे पूरी तरह स्वस्थ हो जाएंगी, प्रसन्न होंगी तब जरूर उनके मन में ध्यान की जिज्ञासा उत्पन्न होगी, तब मैं आपकी मदद कर सकूंगा। शरीर और मन के तल की जरूरतें आप स्वयं ही पूरी करो। कोई साधु, संत इन जरूरतों को पूरा नहीं कर सकता। और अगर कोई कहता है कि मेरे आशीर्वाद से, पूजा प्रार्थना से, योगाभ्यास से यह हो जाएगा, कि मंत्र ले लो, ताबीज ले लो, यह आदमी झूठ बोला रहा है। इसको भीड़ इक्ट्ठी करने में रस है। यह एक प्रकार की राजनीति कर रहा है धर्म के नाम पर।

ऐसे लोगों से सावधान। क्योंकि उसमें समय बहुत खराब होता है। क्योंकि कई साल लग जाएंगे तुम्हें समझने में कि तुम्हारी बीमारी ठीक नहीं हो रही। और फिर तुम किसी और संत महात्मा के चक्कर में फंस जाओगे जाकर। नहीं मैं आपको झकझोरना चाहता हूं, जगाना चाहता हूं। नहीं, ये शरीर और मन के तल की चीजें हैं इन्हें उन्हीं तलों पर ठीक करना होगा। ध्यान आत्मा के तल की बात है। जब ये दोनों तल सुन्दर हो जाएं तब उस परम आनंद की तरफ अग्रसर होना। एक सज्जन ने पूछा है कि 20 साल से डिप्रेशन का शिकार हूं। मैं आपसे भी कहना चाहूंगा कि ध्यान में नहीं, किसी योग्य चिकित्सक से इसका इलाज करवायें।

सात

हास्य एवं ऊर्जा

हंसते समय अनायास गंभीरता टूट जाती है और ऊर्जा की एक लहर तन-मन में दौड़ जाती है। हास्य स्वास्थ्यदायी है, यह बात अब भलीभांति सिद्ध हो चुकी है। जगह-जगह लाफिंग क्लब बन गए हैं, जहां नियत समय पर सभी सदस्य एकत्रित होकर हंसते हैं, लोटपोट होते हैं और रोगों से मुक्त होते हैं। परमगुरु ओशो अपने प्रवचनों में मुल्ला नसरुद्दीन के लतीफे सुनाकर साधकों को निर्विचार दशा में ले जाने का प्रयोग करते रहे हैं। सुनिए यह व्यंग्य कविता और जोर-जोर से हंसकर ऊर्जा जगाइए-

नया वर्ष मुबारक हो, जब चंदूलाल बोला,
तो मुल्ला नसरुद्दीन ने गुस्से से मुंह खोला-
मुबारक की वजह बताओ, नए का अर्थ समझाओ।
जो देखो वही शुभकामनाएं दिये जाता है,
किंतु नए वर्ष में नया क्या होगा-
इस प्रश्न का उत्तर मुझे कोई भी नहीं बताता है।
मैं पूछता हूं कि साल में वही बारह महीने होंगे न?
राजनीति में अपराधी और कमीने होंगे न?
साल में तीन सौ पैंसठ दिन होंगे, और सप्ताह में सात।
तो समझाओ मुझे चंदूलाल कि नई क्या होगी बात?
दिन में सिर्फ चौबीस घंटे होंगे, जैन तीर्थंकरों जैसे,
घंटे साठ मिनट के होंगे, सख्त परंपराओं जैसे।
ट्रेनें पटरी पर दौड़ेंगी, कारें सड़कों पर,
उपद्रवों का दोष लगेगा फिर लड़कों पर।
क्या कुत्ते भौंकना बंद करेंगे या नेता भाषण देना?
सेठ मुनाफा छोड़ेंगे या अफसर रिश्वत लेना?
कवि करेंगे कविता, लेखक कथा लिखेंगे,
टी.वी. पर न्यूजरीडर प्रतिदिन व्यथा पढ़ेंगे-
कि रेल दुर्घटना में कितने मरे, नाव में कितने डूबे,
आतंकवादियों के कहां तक पूरे हुए मंसूबे।
कौन घोटाला किया, कौन कमीशन खाया,
कौन समर्थन वापस ले फिर सरकार गिराया?
बाढ़, अकाल, सूखा, बीमारी, भुखमरी फैलेगी।
फिर भी हम बेशर्मों की जनसंख्या जरूर बढ़ेगी।

क्या इसके अतिरिक्त और कुछ होगा अगले वर्ष,
किस बात की मुबारक, किस चीज का है हर्ष?
मुल्ला ने कहा-मेरे यार, नहीं होने वाला सुधार।
गिरती हुई नैतिकता का रोना उपदेशक रोएंगे,
हमेशा की तरह ऊबे हुए श्रोतागण सोएंगे।
वक्ता बकेंगे, लेखक लिखेंगे, आलोचक हंसेंगे।
सदा से सहने वाले लोग, आगे भी सहेंगे।
रोज फंसेंगे कीट पतंगे मकड़ी के जाल में
तो बताओ नया क्या होगा नए साल में?
पाकिस्तानी नेता फिर धमकी देंगे,
हिन्दुस्तानी नेता कड़ी चेतावनी देंगे।
दोस्ती के झूठे हाथ बढ़ाए जाएंगे,
पर किसी समझौते पर न पहुंच पाएंगे।
बस यूं ही चर्चा चलेगी, और जनता का खर्चा करेगी।
50 सालों से चल रही बातचीत ही दोहराएंगे।
नये साल में कौन सा नया गुल खिलाएंगे?"
नसरुद्दीन ने पूछा-क्या दिन में तारे निकलेंगे?
चंदूलाल जी, क्या चंदा-सूरज पूरब में डूबेंगे?
अरे मछलियां आकाश में रहेंगी, पक्षी पानी में ।
झगड़े चलते ही रहेंगे, बहु और सास में,
सबऑर्डिनेट और बॉस में, हर वर्ग में हर क्लास में।
मई में गर्मी पड़ेगी, दिसंबर होगा ठंडा,
फिर पाखंडी साबित होगा कोई साधु, त्यागी, पंडा।
सदा की भांति मंहगाई बढ़ती चली जाएगी-
यहां तक कि आम जनता आम भी न खा पाएगी।
नए वर्ष में भी अगर यही सब होना है
तो किस बात की मुबारक किसलिए खुश होना है?
गत वर्ष का रोना, इस वर्ष भी रोना है।
वर्षा हो कि सूखा, नहीं चैन से सोना है।
वर्षा हुई तो बाढ़ से मरेंगे, सूखे में अकाल से
वही कथा व्यथा की, क्या फर्क पड़ेगा साल से!
भाईजान, कुत्ते की पूंछ कभी सीधी नहीं होगी,
अपने मियां से खुश कोई बीवी नहीं होगी।

पति-पत्नी के बीच चलेगी खींचा-तानी,
बाप-बेटे बोलेंगे तीखी-कड़वी वाणी
भाई-भाई लड़ेंगें, महाभारत वही पुरानी,
नए वर्ष की रामायण में फिर वही रामकहानी।
पात्रों के नाम बदल जाते हैं, नाटक वही रहता है,
इसीलिए यह मुबारकबाद इतना मुझे खटकता है।"
चंदूलाल ने कहा- माफ करो नसरुद्दीन,
सचमुच बीत चुका है सन दो हजार तीन।
इक्कीसवीं सदी का चौथा साल ओशो के नाम है,
देखना, ओशोधारा का फैलता कितना काम है।
अब सैकड़ों बुद्ध होंगे, गूंजेगा अनहद नाद।
खत्म सारे युद्ध होंगे, मिटेगा आतंकवाद।
प्रेम, ध्यान और समाधि की हवा बहेगी।
हर गांव-नगर संबोधि की ज्योति जलेगी।
इतिहास दोहराता रहा आज तक खुद को, ऐसा न हो सकेगा अब आगे।
नहीं सुन पाए कबीर-महावीर-बुद्ध को, इसीलिए हम सोते रहे, न जागे।
किंतु महत प्रयास कर, बड़ी आशा में, ओशो ने कृपा कर, सरल भाषा में
समझा दी धर्म की रहस्यमयी बात, खत्म हुई हमारी आध्यात्मिक रात।
अब भोर की बेला है, खुशियों का मेला है।
जब से क्षण-क्षण जीना सीखा, कण-कण नया-नवेला है।
आनंद में डूबा है तन-मन, बना है उत्सव मेरा जीवन
बची न अपनी कोई वासना, केवल जगत के लिए प्रार्थना!
नए वर्ष के बहाने, इसीलिए यह मंगल भावना-
कि हो साकार ओशो का सपना, बस एक ही शुभकामना।"
हंसकर बोला मुल्ला-अब हुआ बात का खुल्लम-खुल्ला।
तुम्हें भी मुबारक हो भाई चंदूलाल,
धार्मिकता की नई दृष्टि वाला नया साल।"
ऐसा कहकर वे मिले,
दोनों एक-दूसरे के गले।

– **स्वामी शैलेन्द्र सरस्वती**

दशहरा-दीवाली की मंगलकामनाएं

स्वामी शैलेन्द्र सरस्वती जी के एक पुराने परिचित, लायंस क्लब के अध्यक्ष श्री परशुराम ने दशहरा-दीवाली की मंगलकामनाएं, एक कविता के रूप में इस प्रकार भेजीं –

प्रिय मित्र, **स्वामी शैलेन्द्र सरस्वती**
कलयुग में अब मानवता आदर्श नहीं रही
आओ, हिंसा रूपी रावण को जलाएं
लक्ष्मी पूजन कर धन-धान्य बढ़ाएं।
दीप प्रज्जवलित कर प्रेम-सौहार्द फैलाएं,
समाज सेवा के लिए कदम उठाएं।

पुनः राम-राज्य लाएं।
ज्योति-पर्व पर
लायन्य क्लब की ओर से शुभकामनाएं।

– लायन परशुराम सिंह

शैलेन्द्र जी ने उन्हें पत्रोत्तर लिखा –

प्रिय मित्र नमस्कार।
तुम्हारा काव्यात्मक पत्र मिला।
पर क्या बतलाऊं यार,
सुंदर-सुंदर शब्द पढ़कर भी
मेरा हृदय-कुसुम नहीं खिला।
क्योंकि तुमने लिखा कि–
अब मानवता आदर्श नहीं रही है।
इतिहास साक्षी है कि सदा-सदा से

जिसकी लाठी उसकी भैंस रही है।
आम आदमी तो बेचारा
मुसीबतों का मारा
हमेशा से संकटों में घिरा रहा।
और धनवानों, बलवानों, तथाकथिक ज्ञानवानों का
यानी सम्राटों, अमीरों एवं पंडित-पुरोहितों का
छोटा सा वर्ग मजा करता रहा,
शोषितों की छाती पर चढ़ा रहा।
न जाने कौन सा 'राज' है–
कि राजनीति को हम 'नीति' कहते रहे;
जबकि 'राज' करने वाले सदैव
'अनीति' से प्रीति करते रहे।
धर्म के नाम पर धर्मयुद्ध हुए, जिहाद हुए;
अनगिनत लोग मरते हुए।
देश के देश बरबाद हुए।
यदि युद्ध धार्मिक हो सकता है
तो फिर अधर्म भला क्या होगा?
सामूहिक हत्याओं से बड़ा
पापकर्म और क्या होगा?
मगर बुरी बातों पर अच्छे लेबल
चिपकाने के हम आदी रहे हैं,
तभी तो काली करतूतों वाले
पहनते उज्जवल खादी रहे हैं।
हम बाह्य आवरण देखते हैं
अंतर्सत्य छुपाते हैं।
आचरण को पूजते हैं,
पाखंडी बनते बनाते हैं।
हमें परहेज है-
सच देखने, सुनने व बोलने से;
झूठ के परदे उठाकर
वास्तविकता खोलने से।
हम मधुर बोलना-सुनना चाहते हैं,
सत्य की कटुता से बचना चाहते हैं;

कपोल-कल्पनाओं में रहना चाहते हैं।
संभवत: तुम्हें मेरी बात बुरी लग जाए
प्राय: सच सुनकर अपने भी हो
जाते हैं पराए।
मगर क्या करूं...
किसी न किसी को तो बुरा बनना
ही पड़ेगा;
गलत को गलत कहना ही पड़ेगा।
क्योंकि असत्य के आधार पर
समाज-सेवा नहीं हो सकती है।
मित्र, बिलकुल व्यर्थ लक्ष्मी की भक्ति है।
निरर्थक हैं ये क्रिया-कांड, धर्म-कर्म
मनुष्य होकर उलूक-वाहिनी की स्तुति में
हमें आनी चाहिए शर्म,
क्योंकि समृद्धि तो केवल विज्ञान
से जन्म सकती है।
अर्थहीन देवी-देवताओं की भक्ति है।
अगर लक्ष्मी पूजन से धन-धान्य उत्पन्न होता;
तो आज पश्चिम नहीं, पूरब संपन्न होता।
काश, पुतले जलाने से रावण मिट जाते
तो हमारे गणमान्य नेतागण
राक्षसों से ज्यादा पतित न हो पाते।
जलाने-मिटाने में तो स्वयं हिंसा है
रावण को जलाना क्या अहिंसा है?
इसीलिए तो बारम्बार जलाने पर भी
बुराई रूपी रावण नहीं मिटता,
क्योंकि अशुभ से अशुभ नहीं कटता।
यदि दीप प्रज्जवलित करने से
प्रेम और सौहार्द फैलते होते,
तो फिर हम क्यूं
घृणा-द्वेष-आतंक का इतना रोना रोते?
हजारों वर्षों से तो दीए जला रहे हैं
जहां देश के आधे नागरिकों के पास

खाने को तेल नसीब नहीं है,
वहां घी जलाकर खुशियां मना रहे हैं।
न जाने कब हम अपनी मूढ़ताओं से जागेंगे,
और दशहरे-दीवाली के
ये बचकाने खेल त्यागेंगे।
जिस दिन गुड्डे-गुड़ियों की भांति
इन देवी-देवताओं की मूर्तियों से
खेलना बंद करेंगे,
उस दिन हम विवेक का परिचय देंगे;
और बुद्धिजीवी होने का प्रारंभ करेंगे।

यदि हम जरा भी अक्लमंद होते,
तो स्वयं को 'मानस' की जगह
'लायन' कहलाने में, गर्व महसूस न करते।
सिंह जी, कोई भी जानवर...
सिंह की बात छोड़िये, श्वान तक
खुद को मनुष्य नहीं कहता है,
पता नहीं फिर क्यूं
यह तथाकथित, प्रतिभाशाली प्राणी
पशु बनने पर तुला रहता है।
हे लायन परशुराम सिंह जी,
क्या अपने नाम का अर्थ जानते हैं आप?
आगे अंग्रेजी में, पीछे हिंदी में
दोनों तरफ से खतरनाक।
और मध्य में परशुराम अर्थात्
ईश्वर के अवतार...
महाहिंसक, क्रोधी, क्रूर और बदनाम
सदा फरसा लिए घूमते थे हत्याएं करने को
इसी कारण कहलाते थे फरसे वाले राम।
उन्होंने धरती पर से छत्तीस बार
क्षत्रियों का नामो-निशां मिटा दिया
हिटलर, स्टेलिन, मुसोलिनी, माओ,
इन चारों से अधिक नरसंहार किया।

क्या वह वाकई सतयुग था? जरा सोचो...
अपने पौराणिक धर्मग्रंथों में तो खोजो...
अंधविश्वासों के चश्में उतार के देखो
पूर्वाग्रह छोड़ो, मान्यताओं को खरोंचो।
फिर आज के समय को कलयुग न कह पाओगे,
शूद्र के कान में पिघला शीशा डलवाने वाले को
मर्यादा पुरुषोत्तम कहने में शर्माओगे।
आज यदि कोई सज्जन अपनी पत्नी
की अग्नि परीक्षा लेंगे,
तो पुलिस वाले उन्हें सीखंचों के पीछे
बंद करवा देंगे।
मित्र, नाराज मत होना;
तथ्यों को तथ्यों की भांति देखना।
हम पहले की तुलना में ज्यादा
सभ्य-सुसंस्कृत हो रहे हैं।
डार्विन के अनुसार
बंदरपन से आदमियत की ओर क्रमशः
विकसित हो रहे हैं।
अब हम जिसे सज्जन भी नहीं कह सकते
कभी उसे पुरुषोत्तम कहते थे।
जरा कल्पना करो कि जब सर्वश्रेष्ठ
आदर्श पुरुष ऐसे थे,
तो उस युग के सामान्य और निकृष्ट
लोग कैसे थे?

समाज सेवा के लिए बाद में कदम उठाना,
पहले चिंतन मनन कर लेना कि
समाज को कैसा बनाना?
अतीत से राम-राम कहकर विदा लेना
कि पुनः राम राज्य लाना?
यदि फल में खराबी है,
तो जमाना बीज को ही दोषी कहता है।

फिर बतलाओ सतयुग से कलयुग
कैसे जन्म सकता है?

अगर आम की मीठी गुठली बोई थी
तो कड़वा नीम कैसे पनप सकता है?
दोस्त, मात्र शुभकामनाओं से कभी
शुभ नहीं घटा है,
अंग्रेजी में कहावत है कि...
नरक का रास्ता रोको, सोचो समझो
शीघ्रता न करो;
भविष्योन्मुख बनो, अतीत का मोह छोड़ो।
क्योंकि अवश्य ही कोई बुनियादी भूल
होती रही है,
तभी तो इतने सेवकों के बावजूद भी
समाज को सेवा की जरूरत पड़ रही है।
जैसे-जैसे दवा दी जा रही है
बीमारी बढ़ रही है।

जो भी समाज को सुधारने जाते हैं;
थोड़े दिनों में वे खुद इतने बिगड़ जाते हैं
कि फिर समाज को उन्हें सुधारने के प्रयत्न
करने पड़ जाते हैं।
हे सेल्फ अपॉइंटेड सेवक जी
समाज सुधार का ठेका हमको किसने
दिया है?
अगर हम 'पर' से नजरें हटाकर
'स्व' को भर सुधार लें
तो समझना, हमने अपना जीवन
सफल कर लिया है।

-स्वामी शैलेन्द्र सरस्वती

ऊर्जा का उफान है हंसी

-ओशो

जर्मनी के प्रसिद्ध विचारकों में से एक विचारक, काउंट किसर्लिंग ने लिखा है कि स्वास्थ्य अधार्मिक है। बीमारी धार्मिक है।

बीमार व्यक्ति उदास होता है, चाह विहीन होता है–इसलिए नहीं कि वह चाह विहीन हो गया बल्कि इस कारण कि वह कमजोर है। स्वस्थ व्यक्ति हंसेगा, मजा करना चाहेगा, मौज-मस्ती करेगा–वह दुखी नहीं हो सकता। इसलिए धार्मिक लोग कई तरीकों से तुम्हें रुग्ण करने की कोशिश करते हैं- उपवास करो, शरीर का दमन करो, अपने को दुखी करो। तुम हंस कैसे सकते हो? हंसी स्वास्थ्य में से आएगी; यह ऊर्जा का उफान है।

इसीलिए बच्चे हंस सकते हैं और उनकी हंसी संपूर्ण होती है। उनका पूरा शरीर सम्मिलित है–जब वे हंसते हैं, तुम देख सकते हो उनकी

एड़ी से चोटी तक हंसती है। पूरा शरीर, प्रत्येक कोशिका, पूरे शरीर का रेशा-रेशा, हंसता और स्पंदित होता है। वे पूरे स्वस्थ हैं, जीवन शक्ति से भरे हुए; सब कुछ उफान पर।

दुखी बच्चा मतलब रुग्ण बच्चा, और हंसता हुआ बूढ़ा अभी भी जवान है। मृत्यु भी उसे बूढ़ा नहीं कर सकती। उसकी ऊर्जा अभी भी बह और उफन रही है, वह हमेशा उफान पर है, हंसी ऊर्जा का उफान है। झेन आश्रमों में वे हंस रहे हैं। सिर्फ झेन में हंसी प्रार्थना है। क्योंकि महाकाश्यप ने इसकी शुरुआत की। पच्चीस सदियों पूर्व, एक सुबह, ऐसी ही सुबह, महाकाश्यप ने नया ढंग चलाया, पूरी तरह से नया, धार्मिक दिमाग से अपरिचित–वह हंसा। वह हंसा पूरी बेवकूफी से, पूरी नासमझी से। और बुद्ध ने उसकी निंदा नहीं की; उन्होंने उसको अपने पास बुलाया, उसे फूल दिया और उपस्थित समुदाय से बात की। जब भीड़ ने हंसी सुनी तो उन्होंने सोचा, यह आदमी पागल हो गया है। यह आदमी बुद्ध के प्रति सम्मान से नहीं भरा है, क्योंकि तुम बुद्ध के सामने कैसे हंस सकते हो? जब बुद्ध मौन बैठे हों, तुम कैसे हंस सकते हो? वह आदमी सम्मान नहीं दे रहा है।

मन यह कहेगा कि यह अपमान है। मन का अपना ढंग है, परंतु हृदय उसको नहीं जानता; हृदय का अपना ढंग है, परन्तु मन ने उसको कभी नहीं सुना है। हृदय हंस भी सकता है और सम्मान से भरा भी हो सकता है; मन हंस नहीं सकता, वह सिर्फ दुखी हो सकता है और सम्मान से भरा हुआ भी। परंतु यह किस तरह का सम्मान है जो हंस नहीं सकता? एक पूरा ही नया ढंग आया महाकाश्यप की हंसी के साथ, और आने वाली सदियों में हंसी चलती रही। सिर्फ झेन गुरु, झेन शिष्य हंसते हैं।

पूरी दुनिया में सभी धर्म रुग्ण हो गये क्योंकि उदासी का बहुत प्रभाव हो गया। मंदिर और चर्च कब्रगाह जैसे लगते हैं। वे उत्सव से भरे नहीं लगते, वे उत्सव की समझ नहीं देते। यदि तुम चर्च में जाते हो तुम क्या देखते हो? जीवन नहीं, परंतु मृत्यु। सूली पर टंगे जीसस वहां की उदासी को परिपूर्ण कर देते हैं। तुम चर्च में हंस सकते हो, चर्च में नाच सकते हो, चर्च में

गा सकते हो? हां, गाना है वहां परंतु वह उदास है। और लोग बैठे हैं, लंबे चेहरे लिए हुए। कोई आश्चर्य नहीं कि कोई चर्च में जाना पसंद नहीं नहीं करता—यह सिर्फ सामाजिक औपचारिकता है जिसे पूरा करना होता है। कोई आश्चर्य नहीं कि चर्च की तरफ कोई आकर्षित नहीं होता—यह औपचारिकता है। धर्म रविवार की चीज बन कर रह गया है। एक घंटे के लिए तुम उदास बने रहने को बर्दाश्त कर सकते हो।

महाकाश्यप बुद्ध के सामने हंसा, और तब से, संत, साधु, संन्यासी, गुरु ऐसी बात कर रहे हैं जिसकी धार्मिक दिमाग—तथाकथित धार्मिक दिमाग कल्पना भी नहीं कर सकते।

—ओशो, ए बर्ड ऑन द विंग

लो, जी भरकर हँसो!

—स्वामी शैलेन्द्र सरस्वती

पुरातन वचनों पर नवीनतम पॉलिश—

- जहां चाह, वहां आह!
- हम दो हमारे दस!
- यदि आपके पास कोई सुझाव है तो कृपया मुझे मत दीजिए।
- इतना न पढ़ो साकी, कि कुछ न रहे बाकी।
- कभी-कभी मेरे दिल में ख्याल आता है और कभी-कभी नहीं भी आता।
- अच्छा हुआ जो तुम बेवफा निकले, क्योंकि आजकल वफादार
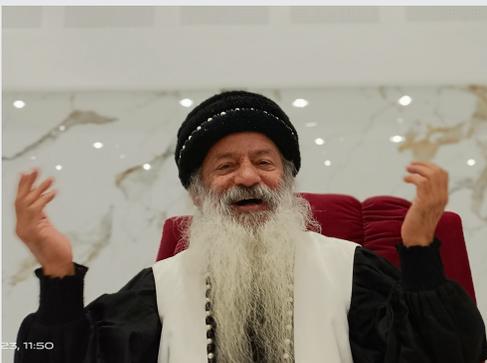
तो बस कुत्ते ही होते हैं।

▸ दो कदम तुम चलो, दो कदम हम भी चलें, बीच में आटो-रिक्शा कर लेंगे।

▸ आप आए बहार आई, जहां बैठे दरार आई।

⮝ ⮝ ⮝

के.जी. स्कूल में एक बच्चा उलटा अखबार पढ़ रहा था। उसके दोस्त ने पूछा, रामू, अखबार में क्या खबर है?

वह बोला- 'ऐसा लगता है कि भारी दुर्घटना हो गई' शायद किसी योगी की कार उलट गई है। क्योंकि जो लोग भीड़ लगाकर खड़े हैं, वे सब शीर्षासन कर रहे हैं।'

⮝ ⮝ ⮝

दो-दो अर्थ के कारण हुए अनर्थ-

खाते के दो अर्थ-

हमारे नेता इस देश में बहुत (रिश्वत) खाते हैं,
तभी तो उनके स्विस बैंक में (अकाउन्ट्स) खाते हैं।

सजा के दो अर्थ-

दुल्हन शादी के लिए सजा दी गई,
दूल्हे को जिंदगी भर की सजा दी गई।

मत के दो अर्थ-

चुनाव के पहले नेताजी कहते थे जनता से कि हमें मत दो,
जीतने के बाद सचिव से कहते हैं जनता को समय मत दो।

होली के दो अर्थ-

लड़की ने एक बार पड़ोस के लड़के के संग खेली होली;
फिर जिंदगी भर के लिए उसी लड़के की हो ली।

जिम्मेदारी के दो अर्थ-

मालिक-हमने विज्ञापन में छापा था कि इस नौकरी के लिए एक बहुत ही जिम्मेदार आदमी की जरूरत है।

मुल्ला- सर, मुझसे ज्यादा जिम्मेदार आदमी कोई नहीं मिलेगा। मैं एक दर्जन से अधिक जगह काम कर चुका हूं। जहां कहीं कुछ गलत हुआ हमेशा मुझे ही जिम्मेदार ठहराया गया।

⮝ ⮝ ⮝

दो बजे रात को फालतू मित्र का फोन आता है- अरे यार सो गए थे क्या, मैंने डिस्टर्ब तो नहीं किया न!

मुल्ला कहता है- नहीं, नहीं, यार मैं तो हिसाब लगा रहा था कि चांद से अगर कोई छलांग लगाए तो धरती तक पहुंचने में कितनी देर लगेगी?

नाई के यहां से बाल कटाकर घर लौटते वक्त फालतू मित्र मिल जाता है- अरे यार, बाल कटा लिए क्या?

मुल्ला कहता है- नहीं, नहीं, यार तेज हवा में उड़ गए हैं।

गोल्डन रूल

वन हू हैज गोल्ड, ही विल मेक दि रूल्स। स्वर्ण नियम-जिसके पास स्वर्ण है वही नियम बनाता है।

▶ जो सड़क सफलता की मंजिल तक जाती है, वह सदा से निर्माणाधीन है- रोड टू सक्सेस इज ऑल्वेज अंडर कंस्ट्रक्शन।

▶ और यह भी स्मरण रखिए-जो सड़क सफलता की दिशा में जाती है, वह पागलखाने पर जाकर समाप्त होती है।

▶ चूंकि प्रकाश की गति ध्वनि से बहुत त्यादा तेज है, इसी कारण

आंख से देखते ही, पहली नजर में प्यार हो जाने के काफी वक्त बाद उस व्यक्ति की बातें सुनकर पता चलता है कि भूल हो गई।

▶ देखिए, मुझसे विवाद मत करिए। मूर्ख इंसान से बहस करना मूर्खता का ही लक्षण माना जाता है।

▶ विशेषज्ञ का मतलब है ऐसा व्यक्ति, जो अपना विषय समझाने की कोशिश में किसी को भी कंफ्यूज कर सकता है।

▶ स्पिरिट कैन प्रिजर्व मेनी थिंग्स एक्सेप्ट स्पिरिट। एल्कोहल में अनेक चीजें सुरक्षित रखी जा सकती हैं, सिर्फ चेतना को छोड़कर।

▶ याद रखिए कि आप एक अनूठे, अद्‌भुत, बेजोड़, अतुलनीय और असाधारण व्यक्ति हैं; शेष साढ़े छः अरब आम लोगों की तरह।

▶ जहां सुमति है, वहां सम्पत्ति है। और हर सम्पत्ति के पीछे छिपी खड़ी विपत्ति है।

▶ धनवान होने पर ही पता चलता है कि आपके कितने चाहने वाले, हितैषी और रिश्तेदार इस संसार में अब तक छिपे पड़े थे।
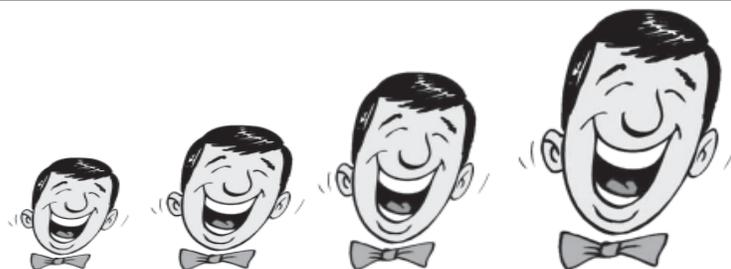
आठ
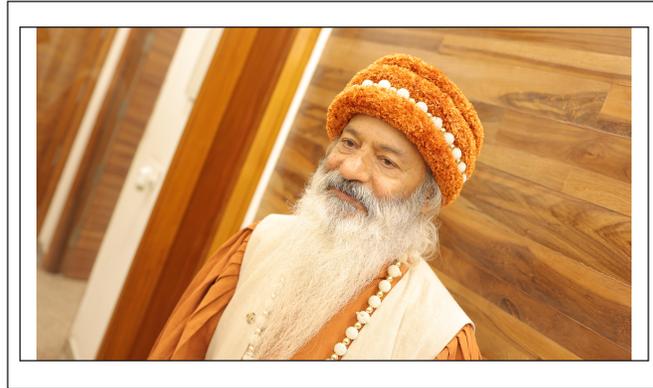
मन के खेलों के पार

प्रश्न- १ : मन के सम्बन्ध में विस्तार से समझाएं?

उत्तर : मनोविज्ञान मन के सम्बन्ध में विस्तार से जानकारी प्राप्त करता है, वह मनोविज्ञान का विषय है। अध्यात्म का विषय मन के बारे में नहीं, मन के पार जाने के बारे में जानना है। इन दोनों बातों को ठीक से समझना- मन, मनोविज्ञान का, साइकोलॉजी का विषय है; अध्यात्म मन के पार जो चेतना है, जो आत्मा है, उसे जानने का उपाय है। इन दोनों में जमीन आसमान का भेद है। पिछले सौ सवा सौ सालों में पश्चिम में खूब मनोविज्ञान विकसित हुआ। निश्चित रूप से मन के विषय में बहुत सी जानकारियां मिलीं। लेकिन उससे कोई आनन्द की अनुभूति फलित नहीं हुई। मन की बीमारियां समझ में आईं, मन के रोग पकड़ में आए परन्तु कोई निदान नहीं हो सका। कल ही दो मित्रों के प्रश्न थे, एक महिला पिछले पांच छह साल से डिप्रेशन में है और एक मित्र पिछले बीस साल से डिप्रेशन से बीमार हैं। तो यह तो समझ में आ गया कि यह बीमारी है। किन कारणों से है? कुछ-कुछ समझ में आया, ठीक-ठीक, पूरा-पूरा पता नहीं चला। लेकिन दूर करने का तो कोई उपाय नहीं पकड़ मे आया, वरना इन मित्रों को बीस साल से डिप्रेशन को झेलने की जरूरत नहीं थी। पश्चिम में जहां मनोविज्ञान इतना विकसित हो गया, उसके साथ ही साथ पागलपन की दर बढ़ती जा रही है, आत्महत्या की दर बढ़ती जा रही है, लोग और भी ज्यादा विक्षिप्त होते जा रहे हैं। पागलखानों में अन्दर आने वालों की गिनती बढ़ती जा रही है। अमेरिका में जितने डॉक्टर हैं, उनमें आधे शारीरिक बीमारियों के डॉक्टर हैं, आधे मानसिक बीमारियों के डॉक्टर हैं। भारत में तो अभी मानसिक बीमारियों के डॉक्टर केवल यदा कदा बड़े शहरों में हैं। अभी छोटे शहरों में मानसिक बीमारियां नहीं पहुंची। अमेरीका जैसे विकसित देशों में जितने शरीर के डॉक्टर हैं करीब-करीब उतने मन के डॉक्टर हो गये। इससे ही अब अन्दाज लगा लो कि वहां मन की बीमारियां कितनी तीव्रता से फैल रही हैं। तो मनोविज्ञान का इतना ज्ञान भी किसी विशेष काम में नहीं आ रहा, कोई समस्या हल नहीं हो रही। और मजेदार बात जो सामने आ रही है कि मनोवैज्ञानिक स्वयं ही मानसिक रोगों से पीड़ित हो जाते हैं। बहुत से मनोवैज्ञानिक स्वयं ही आत्महत्या करते हैं। जिन्दगी भर पागलों के साथ डील करते-करते उनका खुद का दिमाग खराब हो जाता है। तो एक बात तो समझ में आयी कि मन के बारे में जानकारी हासिल करने से समस्याएं हल नहीं

होती हैं।

धर्म की पकड़ बिल्कुल ही भिन्न प्रकार की है। अध्यात्म कहता है कि उसे खोजो जो मन के पार तुम्हारा वास्तविक स्वरूप है, वह जो तुम्हारी निराकार आत्मा है। इन विचारों के जाल में उलझने की जरूरत ही नहीं। ये विचार कहां से आए? क्यों आए, कैसे आए, कहां जा रहे, इन स्मृतियों का खजाना कितना गहरा है? परत-दर-परत चेतन के नीचे अर्धचेतन, उसके नीचे अचेतन और उसके नीचे सामूहिक अचेत मन- कलेक्टिव अनकॉन्शस माइन्ड, उसके भी नीचे कॉस्मिक अनकॉन्शस- ब्रह्म अचेतन; वह तो इतना ही विराट हो गया जितना विराट यह ब्रह्माण्ड है। उसकी तो जड़ हम कभी भी न खोद पाऐंगे। वह तो सम्भव ही नहीं।

भारत के संतों ने इस बात की कभी भी फिक्र नहीं की कि अचेतन में क्या छुपा है, कि सपनों का विश्लेषण किया जाये कि इनका अर्थ क्या है। भारत के संतो की फिक्र है बिल्कुल दूसरी दिशा में कि तुम ज्यादा से ज्यादा चेतन होते चलो। मनोविज्ञान अचेतन की गहराइयों में जाता है, भारत का धर्म सुपरकॉन्शसनेस- ध्यान की पराकाष्ठा, समाधि की अवस्था, उस तरफ यात्रा करता है। मजे की बात है कि एक बार इस मन के पार जब हम उठ जाते हैं तो मन की सारी समस्याएं, समस्याएं नहीं रह जातीं, खेल जैसी हो जाती हैं। वह जो गम्भीरता उनके साथ जुड़ी हुई थी वह विदा हो जाती है और एक लीला का भाव जन्मता है और परम आनन्द फलित होता है। तो ये दो बिल्कुल ही अलग दिशाएं हैं। मत पूछिए कि मन के बारे में विस्तार से समझाएं, उससे कुछ समाधान न होगा। समाधान समाधि में होता है, समाधान तो ध्यान में होता है।

प्रश्न- २ : कीर्तन संध्या में आने से पहले खाना खाने के लिए मना किया जाता है। ऐसा क्यों?

उत्तर : किसी भी ध्यान की विधि के पहले यदि हम खाली पेट हों तो हम ज्यादा ध्यान में डूब पाएंगे। पेट में भोजन हो तो हमारी चेतना भी शरीर उन्मुख हो जाती है, शरीर भारी हो जाता है और सारी ऊर्जा पेट की तरफ खाना पचाने के लिये बहने लगती है। तब वह जो सुपरकॉन्शस स्टेट है, चेतना की ऊर्ध्वगामी अवस्था है, उसका पता चलना मुश्किल हो जाएगा। हम ज्यादा शरीर केन्द्रित हो जाएंगे। तो शरीर जितना हल्का फुल्का हो, पेट खाली हो
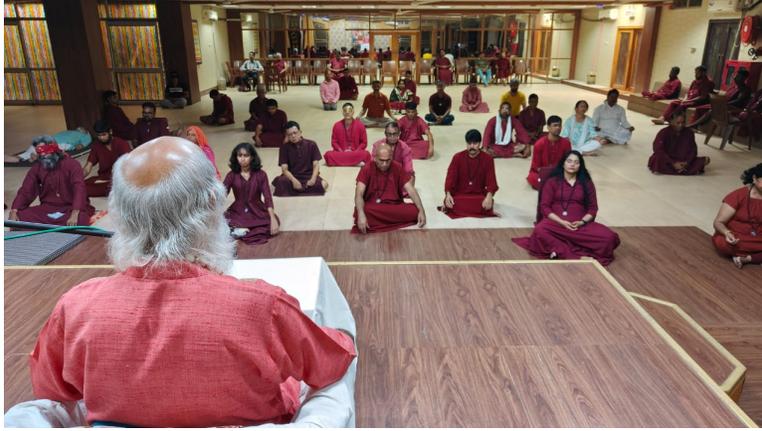
उतना ही आसान होता है भीतर की चैतन्यता को जानना। भोजन के साथ एक प्रकार की मूर्च्छा घेरने लगती है, आपने भी इसका एहसास किया होगा। दोपहर को खाना खाने के बाद हल्की सी नींद आने लगती है, कई लोगों को दोपहर को सोने की आदत होती है। रात्रि को भी खाना खाने के बाद नींद आने लगती है। उतना तीव्र होश नहीं रह जाता। भोजन में भी एक प्रकार का नशा है और इसीलिए बहुत से साधकों ने उपवास का उपयोग किया ध्यान के लिए। कभी-कभार करने जैसा है, कभी छुट्टी के दिन आप भी करके देखें। आधे दिन का उपवास। सुबह से चाय नाश्ता न करें। दोपहर तक खाली पेट रहें और इस बीच आप ध्यान करें और आप पाएंगें कि ध्यान में बड़ी तीव्र गति हो गयी।

छोटी-छोटी चीजें असर डालती हैं। ध्यान में चाय, कॉफी पीना जरूर लाभकारी होता है क्योंकि उससे नींद टूटती है, होश बढ़ता है। लेकिन गरिष्ट भोजन करना ध्यान में बाधा पहुंचाता है। तो साधक को अपने भोजन को भी चुनना होगा कि क्या खाना, क्या नहीं खाना, क्या सहयोगी है, क्या बाधक है साधना में, कब खाना, कब नहीं खाना? ये छोटी-छोटी चीजें बड़ी महत्त्वपूर्ण हो जाती हैं, वरना हमारी ध्यान की सारी मेहनत बेकार हो जाएगी। एक सज्जन मुझे मिले कुछ पहले, वे कहने लगे कि पच्चीस साल से ध्यान साधना कर रहे हैं लेकिन कोई विकास नहीं हो रहा। मैंने पूछा जरा विस्तार से बताएं आपका पूरा जीवन कैसा है- आपकी दिनचर्या। तब उनकी पत्नी बीच में बोल

पड़ी कि ये क्या बताएंगे मैं आपको बताती हूं। रोज रात को शराब पीते हैं। मैंने कहा आप जरा खुद सोचो- ध्यान यानी होश, शराब यानी बेहोशी। सुबह ध्यान करते हो रात को शराब पी लेते हो। सुबह आपने होश साधा, रात को बेहोशी साध ली। पच्चीस साल क्या, पच्चीस जन्म में भी आप करते रहो तो भी कुछ होने वाला नहीं क्योंकि आप दो विपरीत काम इकट्ठे कर रहे हो।

यह तो ऐसा है जैसे एक आदमी मकान बना रहा है। सुबह को ईंट, रेत गारा जोड़ना शुरू करता है, दोपहर तक चार फुट ऊँची दीवार खड़ी करता है। दोपहर के बाद फिर वह एक-एक ईंट गिराना शुरू कर देता है और शाम तक फिर धरातल साफ। अगले दिन सुबह से फिर मकान बनाना शुरू कर दिया। पच्चीस साल क्या पच्चीस हजार साल भी ऐसा करता रहे तो यह मकान कभी बनेगा क्या? क्योंकि वह आदमी बना भी रहा है और तोड़ भी रहा है दोनों काम इकट्ठे कर रहा है। यह काम तो कभी भी न हो पायेगा। तुम जिस वृक्ष को सींच रहे हो फिर उसी की जड़ें उखाड़ भी देते हो, अगले दिन फिर वृक्षारोपण करते हो फिर पानी सींचते हो फिर शाम तक उसे उखाड़ कर अलग रख देते हो। यह वृक्ष कब पनप पाएगा? कभी भी नहीं। यदि तुम्हारी जिन्दगी में दो विपरीत काम एक साथ चल रहे हैं उदाहरण के लिए यही शराब पीना और ध्यान करना। एक होश साधना और फिर बहोशी में चले जाना। यह तो कभी भी सफलता हासिल नहीं होगी। न तुम ठीक से होश साध पाओगे, न ठीक से बेहोश हो पाओगे।

करीब-करीब ऐसी ही आम आदमी की जिन्दगी है। वह प्रेम भी करता है और घृणा भी करता है और उन्हीं व्यक्तियों से घृणा करता है जिनसे वह प्रेम करता है। पति-पत्नी हमेशा ही झगड़ते ही रहते हैं, रोज कुछ कलह। प्रेम भी करते हैं और नफरत भी। न प्रेम पूरा हो पाता न नफरत पूरी हो पाती। चाहे वे भाई-भाई के बीच हो, चाहे वह बाप-बेटे के बीच हो, कहानी करीब-करीब वही की वही है। हम चाहते भी उन्हीं लोगों को हैं और उन्हीं लोगों को हम नहीं भी चाहते। यह तो बड़ी विपरीत चीज हो गयी। यह तो एक प्रकार का पागलपन हो गया। वही मकान बनाने और गिराने जैसा हो गया। वृक्ष को पानी सींचने जैसा और जड़ें उखाड़ने जैसा हो गया। या तो तय कर लो कि क्या करना है, घृणा ही करनी है तो पूरा फिर घृणा का जहर ही पी लो ताकि उस क्लाइमेक्स पर, उस अति पर पहुंच कर यह पता चल जाए कि घृणा तकलीफ

देती है, शायद वह तकलीफ ही तुम्हें घृणा से मुक्त कर दे। वह भी हम पूरी नहीं करते। सब कुछ कुनकुना-कुनकुना। थोड़ा थोड़ा प्रेम, थोड़ा-थोड़ा क्रोध। अंग्रेजी में तो उन्होंने लव और हेट दोनों अलग-अलग शब्दों को जोड़कर एक ही शब्द बना दिया 'लवहेट' बीच में हाइफन भी नहीं है- प्रेमघृणा इकट्ठा। क्योंकि लोगों का अध्ययन करो तो यही पता चलता है कि कि वे प्रेम और घृणा इकट्ठी करते हैं। जिससे प्रेम करते हैं उसी से घृणा करते हैं। जिस पर श्रद्धा करते हैं, उसी पर सन्देह भी करते हैं। बड़ा अजीब और विचित्र मन है हमारा।

इस द्वंद्व को जानो और तब तुम्हें बात समझ में आएगी कि ध्यान के पूर्व भोजन न करने के लिये क्यों कहा जाता है। दोनों बातें एक दूसरे से विपरीत हो जाती हैं; खाली पेट ध्यान करना ज्यादा उपयोगी है।

प्रश्न ३ : बुरे कर्मों से हमें नफरत करनी चाहिए या उस इन्सान से जो बुरे कर्म करता है?

उत्तर : इन्होंने एक बात तो मान ही ली कि नफरत तो करनी ही है। अब किससे करनी है यह भर पूछना है। नफरत की तो ठान ही ली कि पक्का करना है। अब बुरे इन्सान से करें या बुरे इन्सान के कर्मों से करें।

मैं आपको कल से एक ही बात सिखा रहा हूं कि कैसे प्रेमपूर्ण बनो, कैसे जागृत बनो। आप ने भी खूब प्रश्न पूछा। जीसस के पास एक बार कुछ लोग आए। एक स्त्री को पकड़कर साथ में लाये थे। वे लोग उसको मार रहे थे, पीट रहे थे। और उन्होंने जीसस से पूछा कि शास्त्रों में लिखा है कि व्यभिचारिणी स्त्री को पत्थर मार-मार कर मार डाला जाए। अब बोलो आप क्या कहते हो? असल में वे लोग बड़े चालाक थे। वे आए ही इसलिये थे कि लगे हाथ इस बहाने जीसस को भी मारेंगे। जीसस से भी उनकी दुश्मनी थी कि बहुत प्रेम का पाठ सिखाते हैं कि सबको प्रेम करो, प्रेम ही परमात्मा है।

अब शास्त्र का उदाहरण देकर, पुराने शास्त्रों का वचन उद्धृत करके कहेंगे कि यह स्त्री व्यभिचारिणी है और शास्त्रों में लिखा है कि व्यभिचारिणी स्त्री को पत्थर मार-मार कर मार डालो। अब अगर जीसस कहेंगे कि इसको क्षमा कर दो, इसके प्रति भी प्रेम पूर्ण व्यवहार करो तो लगे हाथ जीसस को भी पत्थर मार-मार कर मार डालेंगे कि यह तो तुम शास्त्र के खिलाफ, धर्म के खिलाफ बोलते हो तो तुम भी पापी हो। और अगर वे कहेंगे कि हां इस स्त्री

को मार डालो शास्त्रों के अनुसार, तो उनसे पूछेंगे कि तुम्हारे वचनों का क्या हुआ कि सब को प्रेम करो और इस बात पर उनको पत्थरों से मारेंगे। जीसस ने देखा कि इनका प्रश्न बड़ी चालाकी से भरा हुआ है। जीसस ने कहा कि शास्त्रों में जो लिखा है बिल्कुल ठीक लिखा है। लेकिन एक शर्त है कि वही व्यक्ति पहला पत्थर उठाए मारने के लिये जिसके मन में कभी व्यभिचार का ख्याल नहीं आया। धीरे-धीरे करके भीड़ खिसकने लगी, एक-एक करके लोग जाने लगे। अंत मे रह गई केवल वह स्त्री और जीसस। उसने जीसस के चरण पकड़ लिए और कहा कि आपने मेरे जीवन को बचाया, आपकी बड़ी करुणा।

तुम कह रहे हो कि बुरे इंसान से नफरत करें या उसके बुरे कर्म से। तुम मेरी बात समझे ही नहीं। जीसस का एक बड़ा प्यारा और अद्‌भुत वचन है 'रेजिस्ट नॉट इविल' बुराई के साथ प्रतिरोध न करो। कोई ईसाई पादरी इसका अर्थ नहीं समझता। वे समझ भी नहीं सकते, उनकी बुद्धि के बाहर है। केवल ओशो ने पहली बार इस पर प्रकाश डाला। बड़ा प्यारा बचन है। जीसस कह रहे हैं अशुभ के साथ प्रतिरोध मत करो- 'रेजिस्ट नॉट इविल' क्योंकि प्रतिरोध करना स्वयं ही एक बुराई है। आप मुझसे पूछ रहे हैं कि बुरे आदमी से नफरत करें या उसके कर्मों से। मैं आपसे कहना चाहूंगा नफरत करना स्वयं ही एक बुराई है। किससे करें का सवाल नहीं है। इस विधि से आप बुराई को नष्ट नहीं कर रहे बल्कि आप भी बुरे हो गये। एक बुरे आदमी की गिनती और बढ़ जाएगी। यह तो कोई उपाय न हुआ।

नहीं, न तो बुरे आदमी से नफरत करना, न बुरे कर्मों से नफरत करना। हाँ, उस व्यक्ति को चेताने की कोशिश करना, उसे जगाने की कोशिश करना; उससे भूल-चूक हो रही है मूर्च्छा में। कारण है उसकी मूर्च्छा, उसका व्यवहार नहीं। उस मूर्च्छा को तोड़ने की कोशिश करना दया से भरके, करुणा से भरके। घृणा करने का सवाल नहीं, वह दया का पात्र है। बेचारा स्वयं मूर्च्छित है तभी वह बुरे कृत्य कर रहा है। खुद भी कष्ट भोग रहा है औरों को भी भुगता रहा है।

मैंने बुद्ध की कहानी कही थी कि वे लोग जो अपमान करने आए थे, बुद्ध ने बड़े करुणा भाव से उनकी तरफ देखा और कहा मुझे बड़ी दया आती है। यह जहर और अपमान जो तुम मुझे देने आए थे तुम खुद ही इसे पीओगे, या

बांटोगे किसी और को। बड़ी दया तुम पर आती है। नफरत का तो सवाल ही नहीं। वे लोग दया के पात्र हैं, बहुत मूर्च्छा में हैं। एक आदमी ने शराब के नशे में बेहोश होकर सम्राट अकबर को बहुत गालियां दीं। सम्राट अकबर की सवारी निकल रही थी। वह रास्ते में खड़ा हो गया और गालियां देने लगा, पत्थर फेंकने लगा। सिपाहियों ने उसको पकड़ लिया। रात भर जेल में रखा, सुबह दरबार में पेश किया। अकबर ने कहा कल शाम को तुम मुझे गालियां क्यों दे रहे थे? वह आदमी बोला- हुजूर, कैसी बात कर रहे हैं? मैं और आपको गालियां दूंगा? मैं तो आपका प्रशंसक हूँ। मैंने तो आपकी प्रशंसा में गीत लिखे हैं। कल शाम को मैंने शराब पी ली थी। अब शराब के नशे में मैंने जो किया उसके लिए तो मैं जिम्मेदार नहीं हूं। उसके लिए शराब जिम्मेदार है।

अकबर को हंसी आ गयी और उसने अपने सिपाहियों से कहा इसे छोड़ दो। अब इसके कृत्यों के लिए हम इसको जिम्मेवार नहीं ठहरा सकते। उसने होश हवास में नहीं किए। एक पागल व्यक्ति कुछ कर दे, क्या आप उस पर नाराज होंगे या दया करेंगे? पागल को क्या सज़ा देना? वह तो बेचारा वैसे ही पागल है, कष्ट में है। अब और उस पर उसके कृत्यों के लिए सजा दोगे क्या? अदालत भी माफ कर देती है छोटे बच्चों को अगर उनसे कोई अपराध हो जाए तो। छोटे बच्चे हैं, उन्हें पता ही नहीं है। उन्होंने तो खिलौना समझ कर पिस्तौल उठा ली और दबा दी और उसमें से गोली निकल गयी। उनको थोड़ा ही पता है कि मरना-मारना क्या होता है। वे तो रोज टी.वी. में देखते हैं कि लोग पिस्तौल चलाते हैं, गोलियां चलाते हैं। तो उन्होंने भी शौक-शौक में गोली चला दी। एक बच्चे को सजा नहीं दी जा सकती। यह अज्ञान है। कोई पागलपन में कुछ कर जाए, अदालत उसे कड़ी सजा नहीं देगी। बेचारा दया का पात्र है। कोई बेहोशी में कुछ कर जाए अदालत उसे कनसिडर करेगी।

जो भी लोग बुरे कामों में संलग्न हैं वे कहीं न कहीं थोड़े से तो विक्षिप्त हैं ही। कुछ तो पागलपन का उनमें असर है। कुछ तो शराब पी ही ली है। माना कि बोतल से नहीं पी, भीतर क्रोध की ही पी है। है तो वह भी एक प्रकार का रसायन ही। भीतर ही भीतर कुछ रसायन छूट गए हैं। अब क्रोध ने उनको अंधा कर दिया है या कामवासना ने उनको अंधा कर दिया है। उस अंधेपन में अगर वे कुछ कर गुजरते हैं तो वे दया के पात्र हैं, सजा के नहीं।

और नफरत का तो सवाल ही नहीं। जीसस का वचन याद रखना 'रेसिस्ट नॉट इविल' बुराई से लड़ाई स्वयं ही अपने आप में एक बुराई है।

प्रश्न-४: आज दोपहर को एक मित्र ने यहां शेयरिंग की। उन्होंने अपना नाम स्वामी ज्ञान प्रेमानंद बताया। लेकिन उनकी बातों से न ज्ञान, न प्रेम और न आनन्द झलका। संन्यासियों को ओशो ने ऐसे नाम क्यों दिए? कृपया बताएं?

उत्तर : इसीलिए तो नाम दिए हैं ताकि तुम्हें यह होना है। तुम यह हो नहीं, यह तुम्हारी वास्तविकता नहीं है। यह तुम्हारे जीवन का लक्ष्य हो; तुम ज्ञान की, प्रेम की, आनन्द की अवस्था को पाओ। यह संकेत है, इशारा है यात्रा का कि किस दिशा में तुम्हें बढ़ना है। नाम से कोई यह न समझे कि जो नाम उसे दिया गया है वह वैसा है। नाम इसलिए दिया गया है कि वह वैसा नहीं है। इसलिए उसे वह नाम दिया गया है कि उसे वैसा होना है। यह उसके जीवन का लक्ष्य है, यह उसके जीवन का गंतव्य है। मृत्यु से पूर्व ज्ञान को, प्रेम को, आनन्द को
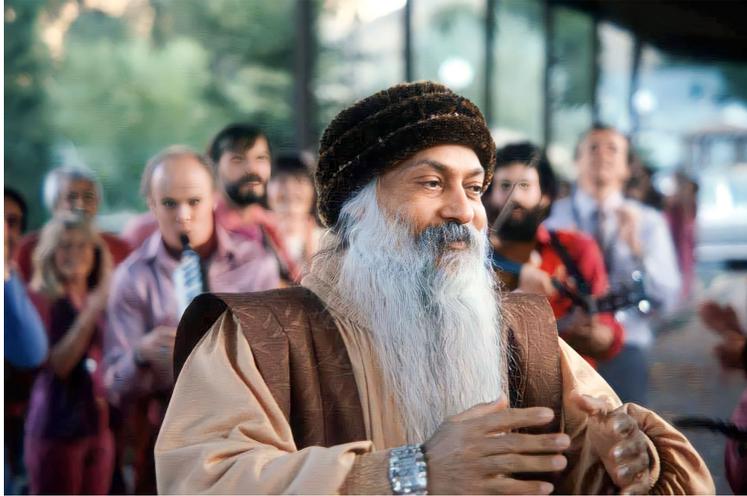
जानकर ही विदा होना। यह जीवन तुम्हारी साधना बने। यह संन्यास, यह नाम तुम्हारी साधना के इशारे हैं। इस दिशा में आगे बढ़ना। इस भांति नाम को समझना।

मुझे याद आता है एक कवि महोदय ओशो के पास आए। एक मोटी सी किताब कविताओं की छपवाने जा रहे थे। उसकी पान्डुलिपि लेकर आए थे। उन्होंने ओशो को कहा कृपया यह किताब पढ़ लीजिए और किताब का शीर्षक

क्या रखा जाए यह बता दीजिए, जो इस किताब के अनुकूल हो। वे कवि एक प्रसिद्ध उबाऊ कवि थे। उनकी कविता पढ़ना एक सिरदर्द था। ओशो उनको भली-भांति जानते थे। ओशो ने कहा पूरी किताब पढ़ने की जरूरत नहीं। मैं अभी बता देता हूं कि किताब का नाम क्या रखना है। क्या इन कविताओं में कहीं ढोल का जिक्र है? उन्होंने कहा कि नहीं ढोल पर तो कोई कविता नहीं। ओशो ने पूछा नगाड़े का कोई जिक्र है क्या? उन्होंने कहा नहीं नगाड़े पर कोई कविता नहीं है। ओशो ने कहा तो बस यही नाम रख दो किताब का 'न ढोल न नगाड़ा', बिल्कुल सटीक बैठेगा।

तो बस ऐसा ही समझना स्वामी ज्ञान प्रेमानंद यानी- न ज्ञान न प्रेम न आनंद। न ढोल न नगाड़ा, मगर पैदा करना है।

प्रश्न- ५ : जब मैं ध्यान करता हूं तो भीतर चेतना के आकाश में काले और हरे पत्तों वाले वृक्ष दिखाई देते हैं और उनके बीच जलता हुआ एक दीप दिखाई देता है। फिर धीरे-धीरे हवा में वह दीप अदृश्य हो जाता है और फिर विचार आने आरंभ हो जाते हैं। बारम्बार ऐसा क्यों होता है? कृपया समझाएं।

उत्तर : जैसे बाहर एक आकाश है ऐसे ही भीतर भी एक आकाश है। जैसे बाहर के आकाश में विभिन्न दृश्य हैं ऐसे ही अंतर्आकाश में भी बहुत से दृश्य हैं। एक बहिर्जगत है, एक अन्तर्जगत है। यह अन्तर्जगत विचारों से, सपनों से, स्मृतियों से, कल्पनाओं से, योजनाओं से, विजन्स से निर्मित है। बाहरी जगत लोगों से, वृक्षों से, पक्षियों से, जानवरों से, वस्तुओं से, नदियों, पहाड़ों मिट्टी से निर्मित है। अन्तर्जगत विचार, स्मृति, कल्पना, इनसे निर्मित है। जब तुम ध्यान में डूबते हो निश्चित रूप से अन्तर्जगत की वस्तुएं दिखाई देनी शुरू होंगी। कभी कोई स्वप्न, कोई और दृश्य, कोई कल्पना, कभी कोई अतीत की घटना, स्मृति मनस पटल पर तैर जाएगी, कभी विचार घेर लेंगे। इससे और आगे बढ़ना है- इन दृश्यों को देखने वाला द्रष्टा कौन है उसे महसूस करो। वह तुम्हारा वास्तविक स्वरूप है। केवल दृश्यों पर मत अटक जाना। क्या दिखायी दे रहा है इससे छलांग लगाना उस पर जो देख रहा है- दृश्य से द्रष्टा पर पहुंचना। क्योंकि दृश्य तो दृश्य ही है चाहे वह बहिर्जगत का हो, चाहे वह आन्तरिक जगत का हो। तुम द्रष्टा हो, साक्षी हो, तुम दृश्य के हिस्से नहीं हो - इसे सतत स्मरण रखना, तब असली ध्यान होगा। आपको जो हो रहा है वह ध्यान की

शुरुआत है। चलो बाहर के जगत से छूटे भीतर के जगत में पहुंचे। चलो ध्यान का एक कदम हुआ। अब अगला कदम उठाना। अब भीतर के दृश्यों से भी नजर हटाना और उसको फील करना जो यह सब जान रहा है। वह कौन है? वही तुम्हारा वास्तविक होना है। वही तुम्हारे भीतर की साक्षी आत्मा है। तो दृश्य से नजर हटाकर द्रष्टा पर लाना और तब ध्यान की गहराई की शुरुआत होगी। जो आप को हो रहा है ठीक हो रहा है। आप ठीक दिशा में गतिमान हैं। अब एक कदम और- दृश्य से द्रष्टा पर पहुंचें।

प्रश्न ६ : मैं हमेशा और-और की ही मांग करता रहा हूं- धन, पद, प्रतिष्ठा, स्वास्थ्य, संबंध, प्रेम। जिन्दगी में ऐसे पल भी थे जब मैं भौतिक उपलब्धियों के शिखर पर था। किन्तु और-और की मांग की वजह से मैं उन पलों का आनन्द नहीं ले पाया।

उत्तर : चलो इस घटना से एक सबक सीखें- अभी और यहीं (हियर एण्ड नाऊ)- उसका आनन्द लेना शुरू करो। पीछे जो बीत गयी वह बात गई, उसके लिए रोने की कोई जरूरत नहीं। नहीं तो तुम फिर आज का दिन भी गंवा दोगे। पहले तुमने और-और की मांग करके, भविष्य की योजनायें बना-बना के सुख के पलों को गंवा दिया।

अब तुम पीछे का रोना रोओगे कि अरे वे उपलिब्धयों के दिन बीत गए और मैं सुख न ले पाया। अब तुम फिर आज का दिन चूक रहे हो। ऐसा आदमी का मन है। या तो वह भविष्य के कारण वर्तमान को चूकता है और या अतीत की स्मृतियों के कारण वर्तमान को चूकता है। इन दोनों अतियों से बचना। मध्य में है मार्ग। एक अति है अतीत। दूसरी अति है भविष्य। ठीक मध्य में है यह बीच का क्षण। ओशो की प्रमुख देशनाओं में है- क्षण-क्षण जीओ। (लिव मोमेन्ट टू मोमेन्ट) सारे धर्मों का सारसूत्र इसी छोटी सी देशना में आ गया। जिसने यह कर लिया उसने सब कर लिया। परम आनन्द का खजाना इसी सूत्र में से खुलता है।

मैंने सुना एक नास्तिक था। घनघोर नास्तिक था। उसने अपने ऑफिस के बाहर बोर्ड लगा रखा था। घोषणा कर रखी थी ईश्वर न होने की। बोर्ड पर लिखा था- 'गौड इज नोवेयर' परमात्मा कहीं नहीं है। बोर्ड लगा रखा था। एक दिन उसका छोटा बच्चा जो के.जी. में पढ़ता था, ऑफिस आया। उसने बोर्ड पढ़ा। इतना लंबा शब्द वह पढ़ नहीं पा रहा था। 'नोवेयर' उसने दो टुकड़ो में तोड़कर पढ़ा कि- 'गौड इज नाउ हीयर'। वह नास्तिक भी सुनकर चौंका कि

परमात्मा अभी और यहीं है। 'गौड इज नाउ हीयर' परमात्मा अभी और यहीं है। वह इसी क्षण में मौजूद है। वह सच्चिदानन्द वर्तमान क्षण में है।

लेकिन हमारा मन आगे और पीछे डोलता रहता है। या तो हम अतीत की स्मृति में रहते हैं या भविष्य की योजना बनाते रहते हैं। ये दो विधियां हैं चूकने की। तो स्वामी चेतन जब समझ में आ गया तभी जागो। अब फिर से पुराने दिनों की याद में मत जीओ। मैं फिर से पढ़ता हूं तुम्हारा प्रश्न ताकि तुम्हें ठीक से स्पष्ट

हो सके। पहले और-और की मांग करके वर्तमान को चूकते रहे, अब याद करके चूक रहे हो। मैं फिर-फिर पढ़ता हूं तुम्हारा प्रश्न। तुम लिखते हो कि ''मैं हमेशा और-और की मांग करता रहा। जब मैं उपलब्धियों के शिखर पर था तब भी और-और की मांग करके उन आनन्द के पलों को चूकता रहा''। ऐसा ही होता है। इसलिए तो जागृत पुरुषों के वचनों का इतना महत्त्व है। कि वे उनकी मुक्ति के वचन हैं। मुक्ति का ही परम रूप है मोक्ष। वे उनके मोक्ष से आ रहे हैं। और इसीलिए वे दूसरों के लिए भी मुक्तिदायी होंगे। सद्‌गुरु और दूसरे गुरु में फर्क बड़ा असान है। गुरु तुम्हें बांध लेगा। तुम्हें रटे-रटाए उत्तर और धारणाएं पकड़ा देगा। उसकी मंशा तुम्हें बांधने की है। खास फिलॉसफी, खास सिद्धांत में बांधने की है। वह तुम्हारी मुक्ति में उत्सुक नहीं है। वह तुम्हें चारों तरफ से घेर लेना चाहेगा, बांध लेना चाहेगा ताकि तुम छोड़कर न जाओ उसे। सद्‌गुरु ऐसा कभी भी न करेगा। जाग जाओ और अभी और यहीं में आ जाओ।

प्रश्न ७ : कल मैंने आप से पूछा था कि विवाह करूं या नहीं करूं? पर मैंने आपको अधूरी बात बताई थी। पूरी बात यह है कि मैं एक लड़की से प्रेम करता हूं। लेकिन जाति-पाति के भेद के कारण हम शादी नहीं कर पा रहे हैं यद्यपि हम एक ही ऑफिस में काम करते हैं। आपने कहा था कि तुरन्त शादी कर लो। आज मैं फिर कनफर्म करना चाहता हूं?

उत्तर- कबीर साहब का वचन सुना नहीं, **'काल करे सो आज कर, आज करे सो अब। पल में परलय होयेगी, बहुरि करेगा कब।'** विवाह जैसी अद्‌भुत चीज़ में देरी। विवाह का संधि विच्छेद करो- विअ+वाह। वाह वाह उसमें छुपी हुई है। ऐसा वाह-वाही का काम और उसमें देरी! सच में अगर तुम्हें प्रेम है तो जाति-पाति के फर्क को जाने दो। प्रेम ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। प्रेम से यदि विवाह निकले तो निश्चित सुखद दिशा में यात्रा होती है। अक्सर हम उल्टा करते हैं। हम सोचते है पहले विवाह कर लो, प्रेम तो अपने आप हो ही जाएगा। बड़ा कठिन मामला है। कभी-कभार संयोग से ऐसा हो जाएगा। लेकिन अक्सर ऐसा नहीं हो पाएगा। इसीलिए जिन्दगी में इतना विषाद और दु:ख है।

बहुत लोगों के दु:ख का कारण हमारी विवाह की सड़ी-गली व्यवस्था है। विवाह प्रेम पर आधारित नहीं है, और सब चीजों पर आधारित है-

जाति-पाति, कुण्डली, ग्रह-लक्षत्र, पण्डित ज्योतिषी, धन, पद, प्रतिष्ठा और कुल। ये सारी चीजें हम देखते हैं। कितना धन है, कितना दहेज मिलेगा, कितनी कुल की प्रतिष्ठा है, सब देखते हैं। यह नहीं देखते कि दोनों, जिन्हें हम विवाह के बंधन में बांध रहे हैं, क्या ये दोनों प्रेमपूर्वक एक साथ रह पाएंगे। जैसे कल हमने 8 प्रकार के अहंकारों की चर्चा की थी। उसमें यदि दो विपरीत अंहकारों वाले व्यक्तियों का विवाह हो गया, फिर जीवन बड़ा दूभर हो जाएगा। आई एम राइट और यू आर रौंग, बस समझ लो फिर क्या होगा। आई विल डॉमिनेट और यू कैन नॉट डॉमिनेट- फिर तो सारी जिन्दगी एक दु:ख की कहानी होगी। और करीब-करीब ऐसा ही हो जाता है। विवाह की व्यवस्था बदलें तो बाहर की परिस्थितयां भी और सुखकर और प्रीतिकर हो सकती हैं।

विवाह अगर प्रेम से उपजे तो ज्यादा मंगल की स्थिति हो सकेगी। ज्यादा बेहतर पारिवारिक स्थिति का निर्माण हो सकेगा। आपने कहा कि कल मैंने पूरी बात नहीं की थी अधूरी बात की थी। मैं भी आपको बता दूं मैंने भी कल पूरी बात नहीं की थी। यह आधी बात बताई है फुसलाने को कि जल्दी कर लो शादी। चढ़ जा बेटा सूली पर भला करेगा राम! अगर तुम वचन दो कि तुरन्त शादी कर लोगे तो फिर पूरी बात बता दूं। वह जो विवाह का मैंने संधि विच्छेद किया था, वह गलत था। वह विव+आह। बड़ी आह छुपी हुई है उसमें। वह वाह-वाह नहीं है। बड़ी आह, आह, आह। आह और कराह।

प्रश्न ८ : अहंकार का मूल स्त्रोत क्या है। पता भी चल जाता है कि अंहकार से दु:ख मिलता है फिर भी संस्कारवशात वह फिर-फिर आता है। कृपया मार्गदर्शन करें?

उत्तर- यह बात बड़ी महत्त्वपूर्ण है और समझने जैसी कि कहीं न कहीं हममें से सब लोग जानते है कि अहंकार से दु:ख मिल रहा है फिर भी हम छोड़ नहीं पाते। तो कोई जरूर गहरा कारण होना चाहिए। यह कोई एक व्यक्ति का सवाल नहीं है। खुद अपने भीतर टटोलना। आप भी पाएंगे कि आप भी कहीं न कहीं जानते हैं कि जब भी दु:ख मिला अहंकार के कारण मिला, फिर भी अहंकार नहीं छोड़ते।

इसका कारण है कि केवल दु:ख में ही हम अपने को महसूस कर पाते हैं। हम वह भी छोड़ दें। एक पल सुख या आनन्द की दिशा में हमारा होना कैसे वाष्पीभूत, हवा जैसा हो जाएगा। पता ही नहीं चलेगा कि मैं हूं भी या

नहीं। परम मुक्ति की वह दशा होगी। इसीलिए अहंकार से मुक्त होकर परम आनंद मिलता है। हम कहते जरूर हैं कि हमें सुख चाहिए, आनंद चाहिए लेकिन हम उपाय सारे ऐसे करते हैं जिनसे दु:ख मिले, पीड़ा मिले क्योंकि दु:ख में ही अपने होने का सघन एहसास होता है कि मैं भी कोई चीज हूं। अंग्रेजी में कहावत है कि- समथिंग इज बेटर दैन नथिंग। कुछ न होने से अच्छा है कुछ भी होना। वह अहंकार अगर शून्य हो जाए, नथिंगनेस हो जाए तो वह हमें पसन्द नहीं। उससे तो हम कहेंगे चलो कुछ तो हो रहा है, दुखद ही सही पर है तो। मैं हूं तो। आनंद घटा और मैं न रहा तो उस आनंद का क्या लाभ।

निश्चित रूप से आनंद में तुम नहीं रह पाओगे क्योंकि तुम्हारा होना ही तो दु:ख का स्रोत है। ये दोनों बातें पर्यायवाची हैं- अहंकार और दु:ख। कोई दो अलग-अलग वस्तुएं नहीं हैं। एक चीज़ के दो नाम हैं। अहंकार को दु:ख में बड़ा रस है। कभी-कभी मैं मजाक में कहता हूं जैसे आइन्सटीन को गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत खोजना चाहिए। दु:ख का बड़ा भारी आकर्षण है। आ बैल मुझे मार। एक सज्जन ने तो कल कह ही दिया कि वे शादी कर के ही रहेंगे। आ बैल मुझे मार। वे बिना उसके रह नहीं सकेंगे। बिना दु:ख के जीवन क्या जीवन। बिना दु:ख के हमारा होना न होने जैसा हो जाएगा। हम शून्यवत हो जाएंगे। इसीलिए बुद्ध का सारा संदेश, ओशो का सारा संदेश शून्य हो जाने का है, मिट जाने का है। मिटने में परम आनंद है।

लेकिन अहंकार की सारी खोज, होने की खोज है। चाहे यह बात सुनने में कड़वी लगे, अविश्वसनीय लगे, मगर जरा अपने अन्दर ढूढंना। क्या तुम दु:खों से आकर्षित नहीं होते? शांत और सुखी होने की बात जरूर करते हो परन्तु यदि कोई व्यवस्था बनने लगी होने की तो तुम भाग खड़े होओगे। यह बात हजारों लोगों का ऑब्जर्वेशन करके कह रहा हूं। कोई एक-दो लोगों की बात नहीं है। आनंद से लोग घबराते हैं। एक मित्र ने पूछा था कि ध्यान में जाने से मुझे डर लगता है। क्यों? दु:ख में जाने में किसी ने नहीं कहा कि मुझे डर लगता है। ध्यान मृत्यु जैसा लगता है। लगता है मैं मरा। मैं तो नहीं रह जाऊंगा परन्तु परम आनंद फलित होगा। हां, लेकिन हम स्वयं के होने को बचाए रखना चाहते हैं। कबीर साहब ने कहा है

'प्रेम गली अति सांकरी तामें दो न समाए।
जब मैं था तब हरि नहीं अब हरि है मैं नाहीं'।

आनंद नहीं था, परमात्मा नहीं था अब परमात्मा है, आनंद है तो मैं नहीं हूं। चुनाव तुम्हारे हाथ में है। या तो मिटने को राजी हो जाओ। तो परमात्मा अवतरित हो सके और अगर तुमने जिद की कि मैं तो रहूंगा और मैं आनंद को खोजूंगा, मैं परमात्मा को पाऊंगा, तो यह तो कभी न हो सकेगा। क्योंकि मैं ही तो बाधा है। अहंकार ही तो मूल परमात्मा से जुड़ने नहीं दे रहा है। वही तो दुःख का कारण है। और तुम कह रहे हो कि मैं आनंद को खोज कर के रहूंगा। यह कभी भी न हो सकेगा। क्योंकि वह तो मिलता है मैं के मिटने पर। इस विरोधाभास को ठीक से समझ लेना। और दुःखाकर्षण हमारे भीतर है इस खतरनाक बात को अपने भीतर निरीक्षण करना, ढूंढना। मुझे मानने की जरूरत नहीं है। तुम खुद देखना। अगर कुछ इन्तजाम कर दिया जाए कि यह घर है तुम्हारे लिए, इसमें चले जाओ। सारी सुख सुविधाओं का इन्तजाम है इसमें। ठीक वक्त पर भोजन मिल जाएगा। कोई आपसे मिलेगा भी नहीं, कोई बोलेगा भी नहीं। आप सुख चैन, शान्ति से रहो। सारी सुख-सुविधाएं उसमें हैं। आप बताएं कितने दिन आप उसमें रह पाएंगे? यद्यपि आप जिन्दगी भर चाहते हैं कि कहीं शान्ति से चले जाएं। यह पत्नी, ये बाल-बच्चे, परिवार के उपद्रव, ऑफिस के काम करते-करते थक गए, कब तक यही करते रहेंगे।

'हे भगवान! कब शान्ति से रहें', यह आप कहते जरूर हो। पर अब सारी सुख-शान्ति का इन्तजाम कर दिया और अगर जोर जबदरस्ती से रखा जाए तो हफ्ते में आप पागल हो जाओगे। एक हफ्ते के भीतर आप पागल हो जाओगे। कभी दीवारों के भीतर आप क्रोधित हो जाओगे, कभी प्रेमपूर्ण हो जाओगे, कभी बातचीत करने लगोगे। इतना ही नहीं आपको उत्तर भी सुनाई देने लगेंगे। सारे दुःख का इन्तजाम हो जाएगा। काल्पनिक लोग चारों तरफ खड़े हो जाएंगे।

हम कहते जरूर हैं कि हम सुख-शान्ति से रहना चाहते हैं। मज़े से रहो। कौन रोक रहा है। मगर हम नहीं रहना चाहते। सुख, आनंद में हमारा अहंकार खो जाएगा। इस बात को गौर से समझ लो। इसका निरीक्षण करो। फिर धीरे-धीरे मुक्ति फलित होगी, इस बात का कोई उपाय या विधि नहीं है कि किसी की पूजा कर ली, प्रार्थना कर ली या ध्यान की अनापानसती विधि कर ली और तुम समझ जाओगे। जब तक तुम विवेकपूर्ण होकर नहीं समझ लोगे कि अहंकार और दुःख पर्यायवाची हैं, ये जाएंगे तो एक साथ जाएंगे, रहेंगे तो दोनों रहेंगे। सिक्के के दो पहलुओं की तरह। रहेगा तो पूरा सिक्का रहेगा, जाएगा तो पूरा सिक्का जाएगा।

हमारी मुश्किल है कि हम अहंकार को बचाए रखना चाहते हैं और दुःख फेंक देना चाहते हैं। ऐसा ही है जैसे हम 'चित' तो रखना चाहते हैं 'पट्ट' फेंक देना चाहते हैं। ऐसा नहीं हो सकता। जब तक एक को न जान लो तब तक मुक्ति संभव नहीं।

प्रश्न ९ : आचार्य जी मैंने ओशो की एक पुस्तक में अदृश्य ताकतों के बारे में पढ़ा था जिसमें लिखा था कि कुछ अदृश्य शक्तियां हैं जो हमारे जीवन को प्रभावित करती हैं। कृपया समझाएं ये शक्तियां किस प्रकार प्रभावित करती हैं?

उत्तर – इस जगत में हम अकेले नहीं, एक विराट सूक्ष्म जगत हमारे आसपास है। इस जगत से हमारा निरन्तर बदलाव हो रहा है। हमारा प्रभाव उन तक व उनका प्रभाव हम तक। शायद कभी आपने उन शक्तियों का एहसास किया हो। एक मकान में आग लग गयी है। एक छोटा बच्चा भीतर सो रहा है। सब लोग बाहर खड़े असहाय महसूस कर रहे हैं। कैसे बचाएं वह सो रहा है भीतर। धू-धू करके मकान जल रहा, किसी की हिम्मत नहीं पड़ रही कि भीतर जाकर उसे उठा लाए। और तभी एक आदमी जाता है भागता हुआ अन्दर और उस बच्चे को उठाकर ले आता है लपटों के भीतर से। बाद में वह खुद ही चकित होता है कि मैंने यह कैसे किया! इतना दुःसाहसी तो मैं नहीं। पहले तो मैंने ऐसे कभी नहीं किया। यह कैसे हुआ अचानक। निश्चित रूप किसी अदृश्य शक्ति ने यह करवाया। लेकिन वह समझ नहीं पाएगा कभी। करुणा का भाव उमड़ रहा था उसके भीतर निश्चित। उसके भीतर बड़ी दया आ रही थी, करुणा उमड़ रही थी कि छोटा बच्चा बेचारा भीतर है और अचानक उस भावाविष्ट अवस्था में कोई देवता उसमें प्रविष्ट हुआ जो मदद करना चाह रहा था लेकिन उसके पास हाथ पैर तो नहीं हैं। वह मदद करना चाहता था लेकिन उसके पास सीधा शरीर तो नहीं है। उसे किसी के शरीर का उपयोग करना पड़ेगा और इस आदमी में हिम्मत नहीं भी है यद्यपि करुणा से भरा हुआ था। यह व्यक्ति माध्यम बन सकता है। वह अदृश्य शक्ति इस पर सवार हो जाएगी और शुभ काम करवा लेगी। बाद में इसे खुद ही आश्चर्य होगा कि इसने कैसे किया। मैं इतना हिम्मतवर नहीं।

इस प्रकार अदृश्य शक्तियां काम करती हैं। सिर्फ अच्छे काम ही नहीं बुरे काम भी। आप सोच रहे थे किसी की बुराई कि वह मर जाए या उसकी हत्या हो जाए और अचानक एक दिन आप उसकी हत्या कर देते हैं, चाकू मार देते हैं। वह मर जाता है। फिर आप पछताते हैं कि यह मैंने कैसे कर दिया। ऐसा तो मैंने नहीं सोचा था। हालांकि आप सोच रहे थे कि यह मर जाए। कुछ बुरे भाव

भीतर आ रहे थे और तब मौका पाकर अचानक कोई भूत-प्रेत, कोई बुरी आत्मा, जिसे हत्या में रस है लेकिन जिसके पास शरीर नहीं है कि वह हत्या कर सके या चाकू मार सके, कोई खूंखार आत्मा, उसने देखा कि स्थिति ठीक है, आप क्रोध में हैं, वह शक्ति हावी हो गयी और उसने हत्या करवा दी। बाद में अपराधी कहते हैं कई बार अदालतों में कि पता नहीं कैसे हो गया (इंसपाइट ऑफ मी) मेरे बावजूद। हालांकि उनकी बात मानी नहीं जाती क्योंकि पूरे प्रमाण हैं कि मारा तो है उन्होंने। वे कहते हैं कि मैंने नहीं किया। वह भी ठीक कह रहा है कि उसने नहीं किया। कुछ अदृश्य ताकतें हैं जो करवा लेती हैं। अच्छी आत्माएं भी हैं जो सहयोग करती हैं। इसलिए जब हम ध्यान करते हैं तो गुरु का स्मरण करके हम ध्यान में, प्रार्थना में डूबते हैं। हम जिनका स्मरण करते हैं उनसे हमारे नाते जुड़ जाएंगे। हम ओशो कीर्तन संध्या कर रहे हैं, ओशो की याद में डूबकर, उनके चित्र के सामने, श्रद्धा से भरकर, अहोभाव से भरकर। कहीं न कहीं हम ओशो की सूक्ष्म उपस्थिति से जुड़ने लगे। उनकी मदद हमें मिलने लगेगी।

तो अदृश्य शक्तियां मौजूद हैं, अच्छी भी बुरी भी। हम पर निर्भर है कि हम किसे आकृष्ट करेंगे। तो अंततः जिम्मेदार हम ही होंगे याद रखना। हमारे भीतर जो संकल्प जागा है अंततः वही पूरा होगा। हां, उसमें सहयोग देने वाले मिल जाएंगे। हमें पता भी नहीं चलेगा किस भांति उन्होंने हमें सहयोग पहुंचा दिया। कभी आपने सोचा था कि 6 दिन में परमात्मा मिल जाएगा? जब नब्बे साल तपस्या करके ऋषि मुनियों को नहीं मिला, जन्मों-जन्मों नहीं मिला और वह 6 दिन में मिल जाएगा। बड़ी अविश्वसनीय लगती है बात! हां, यदि हम अपनी साधना को देखें, जो श्रम हम कर रहे हैं तो निश्चित असम्भव है। लेकिन हमारे अलावा और भी बहुत कुछ है, ओशो का हाथ मौजूद है और बुद्ध पुरुषों के आशीष हैं, उनके प्रसाद से उनकी कृपा से हो सकेगा। तो यह मत सोचना कि तुम्हारे श्रम से जो ध्यान करते रहते हो, उससे कुछ होने वाला है। इससे उन लोगों को केवल पता चल जाएगा कि तुम उत्सुक हो। उन्होंने तुम्हारे भाव देख लिए कि तुम माध्यम बनने को राजी हो, स्वयं को छोड़ने को राजी हो, ध्यान में तुम्हारी रुचि है, समाधि में, परमात्मा की खोज में तुम्हारी रुचि है। तुम्हारा थोड़ा सा श्रम और परिणाम बहुत विराट आएगा। इसीलिए कोई भी साधक आज तक यह नहीं कह सका कि उसने अपने श्रम से परमात्मा को पाया है। आज तक ऐसा कभी नहीं हुआ।

जब भी हम परमात्मा को पाते हैं उसके साथ यह भाव जरूर आता है कि यह तो परमात्मा की कृपा से, गुरु की कृपा से हुआ। क्योंकि यह इतना स्पष्ट है कि हमने जो किया वह तो इतना छोटा सा है। उसके इतने परिणाम आएंगे यह तो कभी सोचा ही नहीं जा सकता! इतनी क्षुद्र सी मेहनत से इतने विराट

से मिलन हो जाएगा! यह तो कोई तालमेल नहीं बैठता। हमने तो एक रुपये की टिकट खरीदी थी और मिल गए दस करोड़ रुपये। यह तो किसी व्यापार के गणित में बात फिट बैठती नहीं। मुल्ला नसरुद्दीन की टिकट फंस गयी थी। लोंगो ने पूछा नसरुद्दीन तुमने किस हिसाब से लॉटरी की टिकट खरीदी थी? उसने कहा- मैंने सपना देखा कि सात घोड़े खड़े हैं और दूसरी तरफ सात पालकियां खड़ी हैं और बीच में क्रॉस का निशान बना हुआ है। तो मैं समझ गया कि 7 X 7 = 35, तो मैंने 35 नम्बर की टिकट खरीद ली।

लोगों ने कहा भले मानस 7 X 7 तो 49 होते हैं तुम कह रहे हो 35। यह तो गलत है। 49 पर लगाना था। नसरुद्दीन ने कहा तुम गणित जानते हो तुम लगाओ 49 पर। हमारी तो लॉटरी फंस गयी! ठीक है हमें नहीं आता गणित। लॉटरी तो हमारी लगी है। तुम्हें आता है गणित तो क्या। जब परमात्मा मिलता है तो पता चलता है हम तो 7 X 7 = 35 कर रहे थे मगर लॉटरी तो फंस ही गयी। अब इसे परमात्मा की कृपा कहो, गुरु का प्रसाद कहो या अस्तित्व की मेहरबानी कहो। एक बात पक्की है कि हमारे गुणा भाग से नहीं हुआ। हमारा तो गुणा भाग ही गलत था। तो बस ऐसा ही मामला है।

अदृश्य शक्तियां हर तरफ मौजूद हैं। हम जैसा भाव करते हैं उसी तरफ वे हमारी मदद करने लगती हैं। हमारा भाव अच्छा है तो अच्छे की दिशा में, बुरा है तो बुरे की दिशा में। तो अंततः जिम्मेवार हम ही होंगे। भाव तो तुमने किया था, लॉटरी की टिकट तो तुमने ही खरीद थी।

प्रश्न १० : हमारे मन में यह मांग क्यों रहती है कि लोग हमारी तरफ देखें, ध्यान दें, हमारी तारीफ करें, हमें सम्मान दें?

उत्तर- हम सबकी यह इच्छा रहती है कि लोग मेरा सम्मान करें, हमें प्रेम दें, लोग हमें कुछ समझें। इस अहंकार के कारण हम हजार दु:ख उठाने को तैयार हो जाते हैं कि लोग मुझे कुछ समझें। और मजेदार बात यह है कि इसके बावजूद कोई हमें कुछ नहीं समझता! आप किसी को कुछ समझते हैं क्या? आप इस भूल में मत रहना कि लोगों के मन में आपके लिए कोई प्रतिष्ठा है। यह सिर्फ आप ही सोचते हैं कि आपकी कोई प्रतिष्ठा है। आपके मन में है किसी की प्रतिष्ठा?

मैंने सुना है कि एक आदमी एक शहर में पहुंचा। उसे वहां के मेयर से मिलना था, कोई काम था। अजनबी था, उसने स्टेशन पर उतर कर कुली से पूछा- मेयर साहब का बंगला कहां पर है? कुली बोला- उस गुण्डे को सारा शहर जानता है, किसी से भी पूछ लो। कोई भी बता देगा। फिर जिस ऑटोरिक्शा में बैठा उससे उसने कहा- मुझे मेयर साहब के घर जाना है। आप जानते हैं? ऑटोरिक्शा वाला बोला उस लफंगे का घर कौन नहीं

जानता। फिर उसने रिक्शा छोड़ दी। आगे गली में नहीं जा सकती थी। अब वह सूटकेस उठा कर पैदल जा रहा है और एक बुढ़िया से पूछा–मेयर साहब का घर कहां है? उस ने कहा– उस दुष्ट, पापी का घर सामने है। फिर वह अजनबी मकान के अंदर प्रवेश कर मेयर से मिला। अपने काम की बात करने के बाद उसने पूछा–'मेयर साहब, नगरनिगम के अध्यक्ष पद पर आप कब से विराजमान हैं?

'उफ, यह कार्यभार मैं पिछले बारह सालों से संभाल रहा हूं। मैं तो तंग आ गया सारे शहर की परेशानियां हल करते-करते। खाने और सोने के लिए तक ठीक से समय नहीं मिल पाता।'

अजनबी ने सवाल किया–'श्रीमान जी, इस गंभीर एवं मुश्किल कार्य के लिए आपको तनख्वाह कितनी मिलती है?'

मेयर ने हंसकर कहा–'अरे आपको इतना भी नहीं मालूम.... नगरनिगम के अध्यक्ष की कोई सैलरी नहीं होती। यह काम तो केवल प्रतिष्ठा और इज्जत की खातिर कर रहा हूं।'

कौन सम्मान कर रहा है? सिर्फ आप ही सोचते हैं कि आप की प्रतिष्ठा है। राजनेताओं को पूरा देश गालियां देता है। मगर बेचारे इज्जत के खातिर देश-सेवा में जिंदगी गुजार देते हैं। अहंकार विक्षिप्त है। वह जीवन के तथ्यों की ओर देखता ही नहीं। आप पूछते हैं इसका कारण क्या है? कारण सीधा-साफ है– चूंकि हम स्वयं को नहीं जानते, हमारे भीतर आत्म-अज्ञान की वजह से आत्म-सम्मान नहीं है; इसलिए हम दूसरों से सम्मान पाने के लिए भिखमंगे की तरह गिड़गिड़ाते रहते हैं।

इस भिखारी अहंकार से मुक्ति का उपाय क्या है– आत्मज्ञान।

नौ
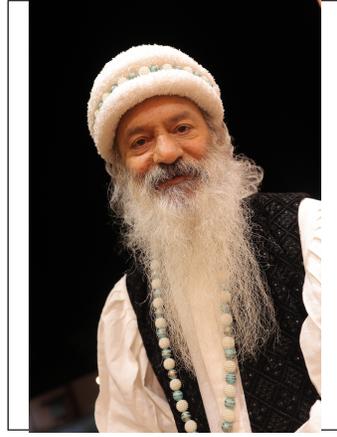
स्पर्श एवं ऊर्जा प्रवाह

प्रश्न- मुझे स्पर्श में इतनी अद्‌भुत ऊर्जा का प्रवाह महसूस होता है। आनन्द समाधि में स्पर्श-योग का महत्त्व समझाइए?

उत्तर- हमारी पांच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। इसमें सबसे प्राचीन ज्ञानेन्द्रिय त्वचा है। डार्विन के विकासवाद के सिद्धांत के बारे में आपने सुना होगा कि अमीबा जैसे एक-कोषीय जीव, यूनिसेल्युलर ऐनिमल से जीवन की शुरुआत मानी जाती है। अमीबा की सिर्फ त्वचा होती है। सेल के बीच में नाभिक, न्यूक्लियस; उसके चारों तरफ साइटोप्लाज्म, एक सेल-वॉल से घिरा हुआ, त्वचा के अन्दर बन्द। न उसकी आँखें हैं, न कान, न उसकी नाक, न जीभ, न मुँह, उसके हाथ-पैर नहीं हैं, कोई अन्य कर्मेन्द्रियां भी नहीं हैं। अपनी त्वचा के द्वारा ही वह सारी ज्ञानेन्द्रियों व कर्मेन्द्रियों का काम लेता है। भोजन भी उसी से करता, स्वाद भी उसी से आता, देखता भी वह उसी से है। अगर तेज रोशनी डाली जाए तो वहाँ से हटने लगता है, रोशनी उसे दिखाई देती है। ध्वनि तरंगों का भी उसे पता चलता है, यद्यपि कान नहीं हैं। चलता-फिरता है, जरूरत पड़ने पर वही त्वचा हाथ-पैर का भी रूप ले लेती है। फिर धीरे-धीरे प्राणियों का विकास हुआ। एक-कोषी जीव से बहुकोषी जीव निर्मित हुए। धीरे-धीरे विकसित होते-होते मनुष्य तक बात पहुँची। इन्द्रियों का विकास क्रमशः हुआ है। त्वचा का ही एक हिस्सा पारदर्शी बनकर आंख का काम करने लगा। दूसरा हिस्सा ध्वनि तरंगों के प्रति ज्यादा संवेदनशील बन गया व कान का काम करने लगा। ठीक इसी प्रकार हमारे नाक के भीतर की त्वचा, जीभ के ऊपर की त्वचा जिसे म्यूकस मेम्ब्रेन कहते हैं, यह अपने अलग-अलग कार्य संभालने लगीं। मूलतः सब त्वचा से ही निर्मित है। इसलिए त्वचा हमारी सबसे प्राचीन इन्द्रिय है।

दूसरी खूबी, त्वचा पूरे शरीर को ढांके हुए है। त्वचा फैली हुई है। अन्य इन्द्रियां 'लोकल' हैं, एक खास जगह पर हैं। यदि आप आँख का उपयोग करते हैं तो आपकी चेतना को केन्द्रित होना पड़ता है, देखने या पढ़ने के लिए। जब आप सुनने का प्रयत्न करते हैं, तो कान पर फोकस बनाना पड़ता है चेतना को। ठीक इसी प्रकार स्वाद या सुगन्ध लेते हुए जीभ अथवा नाक पर केन्द्रित होना पड़ता है। केन्द्रित होने में चेतना के तल पर एक सूक्ष्म कोशिश चलती रहती है, एक हल्का सा प्रयत्न बना रहता है और कोई भी प्रयास थकाने वाला होता है। कोई भी कार्य हम देर तक करेंगे तो उससे थकान और ऊब पैदा होगी। इसलिए आप ज्यादा देर तक पढ़ नहीं सकते। थोड़ी देर बाद, आँखों को विश्राम चाहिए, कुछ बदलाहट चाहिए। सुनते-सुनते थोड़ी देर के बाद कान विश्राम चाहेंगे, सुनाई पड़ना कम होता जाएगा। एक खास समय से ज्यादा देर तक हम स्वाद और सुगंध भी नहीं ले सकते। जब प्रथम बार आप एक फूल को सूंघते हैं तो कितनी अच्छी सुगन्ध आती है! दूसरी श्वास में उससे कम आती है, तीसरी श्वास में और भी कम हो जाती है। अगर पन्द्रह मिनट तक फूल को सूंघते रहे तो आपको पता भी नहीं चलेगा कि इस फूल में कोई सुगन्ध भी है!!

आप रूम-स्प्रे करेंगे, शुरू में आपको लगेगा बड़ी तेज सुगंध है, क्रमशः सुवास का अहसास क्षीण पड़ता जाएगा। हां, कोई नया व्यक्ति, मेहमान बाहर से आएगा, वह कमरे में घुसते ही कहेगा- अरे, बड़ी अच्छी खुशबू आपने छिड़क रखी है। मेजबान को पता नहीं चल रही। इसलिए किसी व्यक्ति को अपने शरीर की गंध का आभास नहीं होता, क्योंकि वह लगातार मौजूद है। अगर किसी से कहो आपके पसीने से बदबू आती है, तो उसको बड़ा बुरा लगता है। बुरा इसलिए लगता है कि उसको दुर्गंध बिल्कुल नहीं आती, वह पैदा ही इस गन्ध के साथ हुआ है। उसको तो पता ही नहीं कि यह गन्ध भी है, सिर्फ दूसरों को अहसास होता है।

मैं यह वर्णन इसलिए कर रहा हूँ ताकि आपको स्पष्ट हो सके कि अन्य किसी इन्द्रिय पर जब हम फोकस बनाते हैं, तो केन्द्रित होने में थकान उत्पन्न होती है। धीरे-धीरे उसकी संवेदनशीलता कम होती जाती है और ऊब भी उत्पन्न होती है। कोई कितना ही महान संगीतकार मंच पर बैठा हो, लेकिन कुछ घंटो के बाद आपका दिल भर जाएगा। हो सकता है बरसों से तमन्ना लिए बैठे हों कि इस संगीतकार को सुनें, पर दो-तीन घंटों के बाद कान जवाब दे जाएंगे, अब नहीं सुनना! कितना ही

मधुर हो, बस बहुत हुआ अब नहीं सुनना! लोग पर्वतीय स्थलों पर घूमने जाते हैं। अक्सर मैं देखता हूँ कि गए हैं एक हफ्ते की छुट्टी लेकर, लेकिन चार दिन में लौट आए। क्या हुआ? एक सप्ताह वहाँ का सौन्दर्य न देख सके। पहले दिन जितना सुन्दर लगा हिल स्टेशन, वहाँ की हरियाली से भरी वादियाँ दूसरे दिन उतनी सुन्दर न लगीं, तीसरे दिन और भी कम, चौथे दिन करीब-करीब भूल ही गए। तीन दिन के भीतर हमारा मन कहीं भी समायोजित हो जाता है। फिर हमारे सामने क्या है, क्या नहीं, कुछ खास फर्क नहीं पड़ता। हम उसके प्रति असंवेदनशील हो जाते हैं। इसलिए चौथे दिन घबराकर वहां से वापस लौट आए। जो नहीं लौटे, समझना वे जरा आलसी या संकोचशील हैं। लौटकर दफ्तर में क्या मुंह दिखाएंगे, बड़ी शान से पर्यटन करने गए थे, कई मित्रों ने पहले ही कहा था कि वहां सब बेकार है। वे कहेंगे लौट के बुद्धू घर को आए! या आलस्यवश रुक गए। कौन टिकट कैंसिल कराए, नई टिकट मिले कि न मिले! मगर तीन दिन में दिल भर गया। पहले दिन जो मजा आया था चौथे दिन वह मजा नहीं आया और जो लोग उसी पहाड़ी स्थल पर पैदा हुए, वहीं रह रहे हैं, उनको समझ ही नहीं आता कि ये नासमझ पर्यटक यहाँ आते किसलिए हैं?

ओशो ने वर्णन किया है- एक बार वह कश्मीर में डल झील पर एक प्रवचनमाला दिए। बम्बई के मित्रों का समूह उनके साथ आया था। वहाँ सब लोगों ने आनन्द-उत्सव मनाया। सुबह-शाम ओशो के प्रवचन होते। जब वहाँ से लौटने लगे तो बजरे के मालिक ने कहा, प्रभु मुझ पर एक कृपा करें। बूढ़ा हो गया हूँ, बस एक ही इच्छा है कि मरने से पहले एक बार बम्बई नगर देख लूँ तो तसल्ली हो जाए, वरना अधूरी इच्छा रह जाएगी, फिर जन्म लेना पड़ेगा। ओशो ने कहा, पागल तू बम्बई जाकर क्या करेगा... मेरे साथ इतने लोग बम्बई से ही आए हैं डल झील का मजा लेने। बजरे का मालिक कहने लगा, मेरी बिल्कुल समझ में नहीं आता कि लोग दूर-दूर से धन-पैसा खर्च कर यहाँ क्यों आते हैं? डल झील में क्या रखा है? उसके लिए डल झील बिल्कुल अंग्रेजी वाली 'डल' है। बेचारा वहीं पैदा हुआ, वहीं बड़ा हुआ है। कश्मीर की ठंडक बम्बई, मद्रास, और कलकत्ता के रहने वालों को बड़ी अच्छी लगेगी, क्योंकि वे गर्मी से परेशान हैं, उनकी सारी तकलीफों की जड़ वहाँ की गर्मी है। वह किसी प्रकार वहाँ से भाग जाना चाहते हैं, मौका मिल जाए तो।

हमारी इन्द्रियों के अनुभव थोड़ी देर में थकाने वाले सिद्ध होते हैं। सुन्दर

से सुन्दर चेहरा थोड़ी देर के बाद सुन्दर दिखाई नहीं पड़ता। ऐसे ही प्रेमी-प्रेमिका एक दूसरे से इतना प्रेम करते हैं, सुन्दरता के गीत गाते हैं, विवाह के सप्ताह भर बाद फिर वैसे नहीं गा सकते। अगर गाते हैं, तो जानना कि झूठे हैं। इतने दिन सुन्दरता देख नहीं सकता। आँखें थक गई हैं, वही-वही शक्ल सूरत देखते-देखते। कब तक सुन्दर लगेगा वह चेहरा? हर पति को लगता है कि उसकी पत्नी ने उसे धोखा दे दिया। पहले लगता है कुछ मेकअप वगैरह करके आती होगी, अब तो कोई सुन्दरता दिखाई नहीं देती और ठीक यही अनुभव पत्नी को होता है, कि यह युवक शादी से पहले कितना भलामानुष नजर आता था, बहुत बुद्धिमान प्रतीत होता था, महीने भर के बाद पता चला कि कहाँ के बुद्धू के साथ भांवरें पड़ गईं?

हमारी सभी इन्द्रियाँ धीरे-धीरे थक जाती हैं। त्वचा के साथ एक खूबी है, त्वचा जो कि हमारा प्राइमल सेंस ऑरगन है, फैला हुआ, पूरे शरीर को ढांके हुए है और सभी अन्य इन्द्रियों की पैदाइश इसी त्वचा से हुई है; इस त्वचा पर जब हम ध्यान देते हैं, स्पर्श के प्रति जागरूक होते हैं तब अद्‌भुत शान्ति घटित होती है। आँख का उपयोग करने पर तनाव उत्पन्न होता है। आँख का उपयोग करने वाले सम्मोहनविद् और तीसरे नेत्र पर ध्यान साधने वाले योगी हमेशा तनावग्रस्त हो जाते हैं। आज्ञाचक्र की साधना एक सूक्ष्म तनाव पैदा करती है। काश हम त्वचा के प्रति जागरूक होना सीखें। तब कोई भी तनाव नहीं होगा, ठीक उल्टा होगा। अगर पहले से कोई तनाव था, तो वह भी विदा हो जाएगा, क्योंकि त्वचा के साथ टोटैलिटी में हम जागरूक हो सकते हैं, समग्रता में। अन्य इन्द्रियों के साथ एक छोटे से खंड के प्रति सजग होना पड़ता है और एक जगह चेतना को लगाना पड़ता है।

अन्य इन्द्रियों की तुलना में त्वचा को आप ऐसा समझें जैसे एक टॉर्च, जिसमें एक लेंस लगा है, उसकी रोशनी फोकस बनाकर एक जगह घनीभूत रूप से पड़ती है, दीपक की रोशनी बिना लेंस के सर्वत्र फैलती है। त्वचा दीपक के समान है अन्य इन्द्रियाँ टॉर्च के समान हैं। स्पर्श के प्रति जागरुक होना गहन शान्ति में ले जाता है, क्योंकि इसमें कोई प्रयास नहीं है, यह हमारा स्वभाव है। जब हमारी अन्य इन्द्रियाँ नहीं थीं तब भी हम इसी ढंग से जीते थे। कभी अनन्त-अनन्त जन्म पहले, कभी अमीबा और बैक्टीरिया के रूप में हम रहे होंगे। तब हमारे पास कोई अन्य इन्द्रियाँ नहीं थीं। इसलिए स्पर्श के प्रति जागरूक होते ही हम अपने मन की अचेतन गहराइयों में प्रवेश कर जाते हैं, अन्य इन्द्रियाँ बहुत बाद के विकास हैं।

पाँच हजार साल से अधिक पुरानी जो किताबें हैं, उनमें केवल तीन रंगों का वर्णन है। इससे स्पष्ट है, उस समय मनुष्य जाति की आँखें केवल तीन ही रंग देख पाती थीं। अब हम सात रंग देख पाते हैं। कई लोग अब भी सात रंग नहीं देख पाते। अगर आप कलर ब्लाइन्डनेस की जांच कराएं तब पता चलेगा। जितने मित्र यहां बैठे हैं, उनमें से कई होंगे, जिनको सात रंगों में से छः रंग दिखाई देते हैं, किसी को पाँच ही दिखाई देते हैं। यह मत सोचना कि सबको इन्द्रधनुष के सात रंग दिखाई देते हैं। हमारे बीच जो कलाकार और चित्रकार पैदा होते हैं निश्चित रूप से उनकी आँखें और ज्यादा विकसित होंगी। उसको नापने का अभी तक हमारे पास कोई उपाय नहीं है, कि उनको दुनिया कैसी दिखाई देती है। निश्चित रूप से और सब आदमियों से भिन्न जगत उन्हें दिखता है, तभी इतनी संवेदनशील आँखों की वजह से चित्रकला में निष्णात हो पाते हैं। उनकी दुनिया बहुत रंग-बिरंगी है।

कान के बारे में यही सच है कि हम सबके कान एक जैसा नहीं सुनते। किसी मित्र को कोई गीत पसंद आया। आपने कैसेट अपने मित्र को सुनने के लिए दी, उसने दो लाइन सुनीं, उठाकर वापस पटक दी, कि यह क्या कैसेट दी है!

निश्चित रूप से हम सबके कान एक जैसा सुनते तो हम सबको एक सी ध्वनि प्रिय लगनी थी, एक सी ध्वनि अप्रिय लगनी थी, किन्तु ऐसा नहीं है। दूसरे लोगों की तुलना छोड़ो, आपके खुद के दोनों कान अलग-अलग तरीके से सुनते हैं। अगर आप अपना ऑडियोमेट्री टेस्ट कराएं, आप पाएंगे कि आपका एक कान बहरा होना शुरू हो चुका है। एक कान में हाई पिच की आवाज ज्यादा सुनाई दे रही है, दूसरे कान में लो पिच की आवाज ज्यादा सुनाई दे रही है, दोनों के वॉल्युम सुनने की क्षमता अलग-अलग है। करीब 35 साल बाद कान खराब होना शुरू हो चुके, आपको पता नहीं चलता आप बहरे हो। जब आप बार-बार कहने लगो- क्या, क्या, सब लोग कहेगें- अरे भाई कान की मशीन लगवाओ, तब आपको समझ में आएगा कि मैं बहरा हूँ। उस दिन बहरे नहीं हुए, 20-25 साल से आपके कान की क्षमता और कम, और कम होती जा रही थी। स्वाद और सुगन्ध के बारे में तो हमारी संवेदनशीलता बहुत ही तीव्रता से घटती है।

50 साल के व्यक्ति को आँख बन्द कराके, बिना बताए उसकी नाक बन्द करके उसको खिलाएँ, तो बता नहीं पाएगा, कि कौन सी चीज खा रहा है।

वह तो अन्य इन्द्रियों का सहारा लेकर– आँख से आपको दिखाई पड़ गया गुलाब जामुन है। हाथ से आपने छुआ नर्म–नर्म है, गुलाब जामुन है। मुँह के पास लाए, नाक से थोड़ी सुगंध ले ली। अब अपने मुंह में ले लिया। अहा, बड़ा मजा आ गया! यह झूठ है। यह आपके बचपन का स्वाद आता था। वही स्मृति आपके मन में अंकित है कि गुलाब जामुन का स्वाद कैसा होता है। अभी आप जो कह रहे हैं बड़ा स्वादिष्ट गुलाब जामुन है, आप भ्रम में हो, वास्तव में उसका स्वाद नहीं आया है, केवल बचपन की स्मृति बैठी हुई है, गुलाब जामुन का स्वाद ऐसा होता है। आप हिप्नोटाइज्ड हो, आपको पता है कि गुलाब जामुन है ऐसा, इसके स्वाद का अहसास होने लगा, आप सम्मोहित हो गए। यदि आपकी आँखें बन्द कर दी जाएं, बताया ही न जाए कि क्या खिलाने वाले हैं, नाक भी उंगली से दबाकर बन्द कर दी जाए, आप सुगंध भी न ले पाएंगे, आपको छूने भी न दें, सीधे मुँह में गुलाब जामुन डाल दें। सम्भवतः आप बता नहीं पाओगे कि गुलाब जामुन है। अहा–वाह की बात छोड़ दो, पहचान ही नहीं हो पाएगी!

बूढ़े लोग अक्सर शिकायत करते रहते हैं। सास–ससुर बहू पर नाराज होते रहते हैं कि कैसा बेकार खाना बनाती है। बेचारी बहु का दोष नहीं है। सास–ससुर की उम्र हो गई है, जीभ की संवेदनशीलता खत्म हो गई है। बहु कैसी भी चाय बनाए, सास–ससुर यही कहेगें, बेकार चाय है। उनको कभी अच्छी नहीं लगने वाली चाय। जीभ की संवेदनशीलता काफी खत्म हो चुकी, अब स्वाद आ ही नहीं सकता। त्वचा के बारे में मामला थोड़ा भिन्न है। त्वचा जो कि हमारा प्राइमल सेंस ऑरगन है, प्रकृति की तरफ से इंतजाम है। त्वचा की संवेदनशीलता इतनी तीव्रता से कम नहीं होती, कम तो होती है, लेकिन इतनी ज्यादा नहीं जितनी कि अन्य इन्द्रियों की होती है। अन्य इन्द्रियाँ बाहर के विकास हैं, वे जल्दी थक जाते हैं। उनमें चेतना को फोकस करना पड़ता है, इस प्रयास में इन्द्रियाँ थक जाती हैं और उनकी संवेदनशीलता कम होने लगती है।

त्वचा में हम फैले हुए होते हैं इसलिए जब हम त्वचा पर ध्यान देते हैं, दिव्य–स्पर्श अनुभूति में जाते हैं, बड़ा फैलाव अनुभव होता है, बड़ी शान्ति लगती है। आपने गौर किया होगा कि स्नान करने के बाद इतना अच्छा क्यों लगता है। मैंने कई लोगों से सवाल पूछा, कोई ठीक–ठीक उत्तर नहीं दे पाता कि स्नान करने के बाद इतना अच्छा क्यों लगता है, स्विमिंग पूल में, नदी में, बाथ टब में, इसका कारण

है– ठण्डा पानी या गर्म पानी हमारे शरीर पर पड़ता है, तब हमारा ध्यान अचानक त्वचा पर जाता है। क्या है? हम त्वचा पर ध्यान ही नहीं देते, इसलिए स्नान के बाद स्फूर्ति–ताजगी महसूस होती है। आप ज्यादा ओजस्वी हो जाते हैं, शान्त हो जाते हैं। हो सकता है नहाने से पहले आप तनाव में हों, किसी से नाराज हों, नहाने के बाद चिन्ता की इनटेन्सिटी, तीव्रता कम हो गई, क्रोध थोड़ा ठंडा पड़ गया। नहाने से शरीर तो ठंडा पड़ा, क्रोध भी थोड़ा ठंडा पड़ गया। क्योंकि आपका ध्यान उस समय मन पर नहीं था, शरीर पर चला गया। जहां गर्म पानी की सुविधा नहीं है, लोग नदी में, तलाब में स्नान करते हैं, वहां और भी ज्यादा ताजगी महसूस होती है।

यदि हम बॉडी टेम्प्रेचर के बराबर कुनकुने पानी से नहाएं, तो फिर वह ताजगी महसूस नहीं होती, क्योंकि इस पक्ष के प्रति विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। प्राकृतिक चिकित्सा वाले एक खास आयोजन करते हैं। पहले भाप से पूरे शरीर को गर्म करते हैं। भाप से स्नान करा के बर्फीले ठंडे पानी से नहलाते हैं। अब दोनों बार त्वचा के प्रति संवेदनशील होना पड़ता है। बहुत ज्यादा गर्मी लग रही है पसीने की बूदें सारे शरीर पर छलक आईं, भाप की गर्मी हमें त्वचा के प्रति सजग बना देगी। अगर ठंडे पानी से नहाएं तो उसकी शीतलता हमें फिर झकझोर देगी, हम त्वचा के प्रति फिर जागरूक हो जाएंगे। आश्चर्य की बात है, चिकित्सा कैसे काम करती होगी बीमार को ठीक करने में! वह जो आदमी का मन बीमारी से ग्रस्त हो गया था, निरन्तर बीमारी में लगा रहता था, हमने उसको थोड़ी देर के लिए दूसरी तरफ खींच लिया। इतनी गर्मी और इतनी ठंडक कॉन्ट्रास्ट में उसको अचानक मिली, इस बीमारी के विषय में सोचना भूल गया। लगातार सम्मोहित था, मैं बीमार हूँ, मैं बीमार हूँ, बर्फीला पानी सिर पर पड़ा, कंपकंपा उठा, इस बीच भूल गया कि मैं बीमार हूँ। ध्यान दूसरी तरफ आ गया, नहाने के बाद जो निर्भारता महसूस होती है, उसका कारण यही है। जब आप तौलिए से बदन को रगड़कर पोंछ रहे हैं, आप त्वचा के प्रति जागरूक हैं, वह जागरुकता विश्रामदायी है।

मां की गोद में बच्चा लेटा है, मां के हाथ उसको सब तरफ से लपेटे हुए हैं। मां के सीने से या पेट से लगकर सो रहा है। क्यों इतना विश्राम अनुभव कर रहा है? क्यांकि, इसके शरीर का अधिकतम हिस्सा मां का स्पर्श कर रहा है। सोते समय रात को विश्रान्ति का अनुभव होता है

क्योंकि नीचे गद्‌दा, बेडशीट, तकिया, ऊपर से चादर या कम्बल सब तरफ छू रहे हैं। मां के गर्भ में छोटा बच्चा, मां के शरीर को चारों तरफ से स्पर्श कर रहा था, गर्भ के अन्दर जल में तैरता हुआ, गर्भ में सब तरफ से स्पर्श- परम आनंद के क्षण थे। जब बच्चा मां के सीने से चिपक कर सोता है, जैसे पुनः गर्भावस्था की स्मृति उसे हो आती है, वह शान्त हो जाता है। लेटा हुआ बच्चा तकलीफ में है, मां उसे सीने से लगा लेती है, चुप हो जाता है, बड़ी विश्रान्ति अनुभव होती है, स्पर्श की वजह से। ठीक वही बात आधुनिक विज्ञान का उपयोग करके, सुखद फर्नीचर और सुखद कमरे बनाकर हम कर रहे हैं। अच्छे गद्‌दे, तकिये हों, अच्छा सोफा हो, अच्छी कुर्सी हो, नरम, मुलायम कुशन लगे हों। गलीचा बिछा हो, जमीन पर, ताकि हमारी स्पर्श की संवेदना हमें शान्ति प्रदान कर सके। स्पर्श के महत्त्व को समझें। बाहर से जो हमें स्पर्श हो रहा है, वह भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। उसका उपयोग करते हुए धीरे-धीरे हम आन्तरिक स्पर्श की तरफ चलें। एक और स्पर्श है, ओंकार की ध्वनि तरगें, जो भीतर से हमको छू रही हैं।

ठंड की सुबह सूरज की धूप में खड़े होकर कुनकुनी किरणों के स्पर्श का मजा आप सबने लिया होगा। भीतर ध्यान में डूबकर दिव्य आलोक अपने आपको स्पर्श करता हुआ और भी गहन आनंद से भर देता है। तो भीतर का ओंकार, भीतर का आलोक, भीतर का अमृत शीतलता का अनुभव, भीतर की दिव्य गंध, दिव्य स्वाद, ये सब भी हमको छू रहे हैं। उस छूने को सर्वत्र महसूस करो। जब आप सुरति समाधि में आए थे, तब मुख्य रूप से आप कानों पर फोकस कर रहे थे। दिव्य समाधि में जीभ और नाक को फोकस किया। अमृत समाधि में हारा-केन्द्र पर फोकस किया। आनन्द समाधि में यूं ही त्वचा पर फैल जाओ, कहीं भी फोकस करने की जरूरत नहीं। अनफोकस्ड कॉन्शियसनेस, फैली हुई समग्ररूपेण चेतना। इसलिए इससे परम आनन्द मिल सकेगा, क्योंकि इसमें कोई तनाव नहीं है, कोई प्रयास नहीं है। दिव्य स्पर्श का अनुभव बड़ा रोमांचित करने वाला होता है, पूरे निराकार में फैल जाता है। अन्य चीजों को कितना भी कहा जाए कि पूरे निराकार में गूंजते हुए ओंकार को सुनें, कान पर फोकस हो ही जाता है। कितना ही कहें कि आलोक पूरी चेतना में ओतप्रोत है, आंखों पर केन्द्रिकरण हो ही जाता है।

आनन्द समाधि में अन्य सब इन्द्रियों को जानने के पश्चात, अब हम आते हैं

स्पर्श-योग पर, वही सबसे कठिन है, क्योंकि त्वचा के प्रति हम पहले ही बहुत कम संवेदनशील रहते हैं, इसलिए इसको सबसे अन्त में रखा गया है। पहले अन्य सारी इन्द्रियों की साधना आपसे करा दी, क्योंकि फोकस बनाने की हमारी आदत है। उस आदत का हमने उपयोग कर लिया। अब हम आते हैं स्पर्श पर, यह हमारी आदत नहीं है। इसलिए शुरुआत में थोड़ा सा कठिन लगेगा सम्पूर्ण त्वचा के प्रति जागरूक होना। फैली हुई चेतना का अनुभव अति विश्रामदायी और शान्तिदायी है। आनन्द की पुलक उससे उत्पन्न होती है। तो दो-तीन मिनट पूर्वांकन हो गई, एक तो अन्य सभी इन्द्रियाँ त्वचा से ही उत्पन्न हुई हैं, वह स्पेशलाइज्ड सेंस ऑरगन है। त्वचा सबसे प्राचीन इंद्री है, फैली हुई है। आरम्भ के जीव-जन्तुओं में एक मात्र इन्द्रिय वही थी। गर्भावस्था में हम उस दौर से गुजरे हैं, नौ महीने जब हमारी सारी इन्द्रियाँ बन्द थीं, केवल त्वचा ही फंक्शन कर रही थी।

जन्म के बाद भी, इसलिए स्पर्श के साथ प्रेमल ऊर्जा का भाव जुड़ा हुआ है।

मां का स्पर्श और उसका प्रेम, दोनों चीजें आपस में जुड़ गई हैं। कभी आप जमीन पर लेट जाएं, पेट नीचे करके और आप महसूस करें कि जैसे छोटा बच्चा अपनी मां के सीने से लगा हो, ऐसे धरती मां के साथ जोड़ महसूस करें। हमारी पीठ और पैरों का पिछला हिस्सा कम संवेदनशील है। इसलिए मैं कह रहा हूँ, उल्टे लेटें, पेट के बल लेटें। हमारे शरीर के सामने का हिस्सा ज्यादा संवेदनशील है, आती-जाती श्वास के साथ, पेट को उठता, गिरता महसूस करें। जमीन को स्पर्श करता हुआ पेट, पूरा शरीर जमीन को स्पर्श करता हुआ। आप पाएंगे पाँच मिनट के भीतर मन शान्त हो गया, तनाव मिट गए, सारी चिन्ताएं मिट गईं। फिर से अपने गहरे अचेतन में प्रवेश पा लिया। जितने गहरे चैतन्य में प्रवेश करेंगे, उतनी ही हमारी चैतन्यता की मात्रा वृद्धि कर जाती है। चूंकि स्पर्श केन्द्र सर्वाधिक अचेतन में है, इसलिए दिव्य स्पर्श का अनुभव सुपर कॉन्शियसनेस, अति चेतनता में कारगर सिद्ध हो सकता है। जो विधियां हम अपना रहे हैं उनका मेकैनिज्म समझ लें। जैसे बाहर के घंटे की आवाज सुनते हुए उसकी गूंज के अंतिम हिस्से को पकड़ते हुए धीरे-धीरे हम अनहद नाद के प्रति जागरूक हो गए; सूरज की रोशनी को देखते हुए या बल्ब पर त्राटक करते हुए, फिर आँख बन्द कर उसकी प्रतिछवि देखते हुए, प्रतिछवि के विलीन होने पर अन्तस आलोक के प्रति जागरूक हो गए।

जैसे अगरबत्ती की सुगन्ध को लेते हुए अगरबत्ती को हटाने के बाद कुछ मिनटों में भीतर दिव्य-सुगन्ध को हमने पहचाना, इसी प्रकार किसी भोज्य पदार्थ का स्वाद लेते हुए, उसको चखने के पश्चात उसके दिव्य-स्वाद को पहचाना। ठीक इसी विधि से दिव्य-स्पर्श का अनुभव होता है। पहले बाहरी त्वचा के अनुभव को जानें। बैठे हैं आप, नीचे गद्दे के स्पर्श का अनुभव हो रहा है। बाहर बगीचे में खड़े हैं, हवा चल रही है या कमरे में पंखे या ए.सी. की हवा है। पानी की शीतलता या गर्मी, तौलिए की रगड़, इसके प्रति कि स्नान कर रहे हैं, जागरूक होना शुरू करें, और धीरे-धीरे आंख बन्द कर भीतर की तरफ आएं। फव्वारे के नीचे खड़े होकर स्नान कर रहे हैं। खूब जागरूक हो जाएं पानी के प्रति। अब फव्वारे को बन्द कर दें। अब बाहरी उत्तेजना तो न रही, वह ऊर्जा जो पानी की ठंडक या गर्माहट महसूस करने में लगी थी, वह भीतर की तरफ मुड़ जाएगी। तब भीतर का अन्तरस्पर्श अनुभव आने लगा। कभी कम्बल ओढ़े बैठे हैं, उसके स्पर्श के प्रति जागें। धीरे-धीरे संवेदनशीलता को बढ़ाते चलें। थोड़ी देर में कम्बल तो भूल जाएगा, थोड़ी देर में कुछ और स्पर्श करने लगेगा। वह डिवाइन टच, दिव्य-स्पर्श आनन्द में डुबोने में सर्वाधिक

सहयोगी है।

बाहरी जगत में हम बड़े से बड़ा सुख जानते हैं, वह है काम का सुख। वह स्पर्श इंद्रिय का सुख है। स्त्री-पुरुष आलिंगनबद्ध होते हुए सुख अनुभव करते हैं। उनकी पूरी त्वचा आपस में जुड़ गई, एक दूसरे को छूना है, जननेन्द्रियों के माध्यम से स्पर्श हो ही रहा है। यहाँ भी आप तुलना करके देखें, अन्य इन्द्रियों की तुलना में कामसुख ज्यादा प्रबल है। ठीक इसी प्रकार जब हम अतीन्द्रिय अनुभव में आते हैं, परमात्मा के विभिन्न आयामों में, सुरति, निरति, अमृत, दिव्य गंध और दिव्य स्वाद में जो आनन्द आया, उसकी तुलना में दिव्य-स्पर्श का आनन्द अतुलनीय है, बहुत गहरा है। इसलिए दिव्य-स्पर्श योग को आनन्द समाधि में रखा गया है।

प्रश्न : क्या ऊर्जा का प्रवाह स्पर्श के बिना भी महसूस किया जा सकता है?

उत्तर : अवश्य किया जा सकता है। इस विषय में चीन के महान संत लाओत्सु पर प्रवचन देते हुए परमगुरु ओशो ने समझाया है, तथा एक विधि भी बताई है। उस प्रवचनांश को सुनो-

ऊर्जा के दो प्रवाह

–ओशो

लाओत्सु ने कहा– अब प्रकाश को एक वृत्त में घुमने दिया जाता है, तब स्वर्ग और पृथ्वी की, रोशनी और अंधकार की सारी ऊर्जाएं संघटित और एकजुट हो जाती हैं।

बहिर्मुखी एवं अन्तर्मुखी प्रवाह

धीरे-धीरे प्रकाश बाहर की ओर प्रवाहित होता रहता है और कभी वापस नहीं लौटता। तुम अधिक से अधिकतर रिक्त और खोखले होते जाते हो। तुम एक काला खड्ढ बन जाते हो। ताओ के साधकों का अनुभव है कि वह ऊर्जा जो तुम्हारी बहिर्मुखता में तुम खर्च करते हो, इसे अधिक से अधिक भीतर इकट्ठा और एकजुट किया जा सकता है यदि तुम इसे वापस लौटा लेने की ध्यान-विधि सीख लो। यह संभव है। वही तो एकाग्रचित्तता की समस्त विधियों का विज्ञान है।

तुम्हारी चेतना बाहर की ओर प्रवाहित हो रही है—यह एक तथ्य है, इसमें विश्वास करने की कोई जरूरत नहीं है। जब तुम किसी वस्तु को देखते हो तब तुम्हारी चेतना उसकी ओर बहती है।

उदाहरण के लिए तुम मुझे देख रहे हो। तब तुम स्वयं को भूल जाते हो और मुझ पर केन्द्रित हो जाते हो। तब तुम्हारी ऊर्जा मेरी ओर बहती है, तुम्हारी आंखें मेरी ओर टिकी हुई हैं। वह बहिर्मुखता है।

तुम एक फूल को देखते हो और विमुग्ध होते हो, तुम फूल पर केंद्रित हो जाते हो। तुम स्वयं के प्रति अनुपस्थित हो जाते हो, तुम फूल के सौंदर्य मात्र के प्रति सजग रह जाते हो।

हम यह जानते हैं—यह प्रतिपल घट रहा है। एक सुंदर स्त्री पास से गुजरती है और अचानक तुम्हारी ऊर्जा उसका अनुगमन करने लगती है। इस ऊर्जा के इस प्रकाश के बाहर की दिशा में बहने को हम जानते हैं। यह केवल आधी बात है। लेकिन हर बार जब अंतस ऊर्जा, अंतस प्रकाश बाहर बहता है, तुम स्वयं के प्रति मूर्च्छित हो जाते हो। प्रकाश को वापस भीतर की ओर प्रवाहित होना चाहिए ताकि तुम्हें एक साथ, युगपत, विषयवस्तु और जानने वाले दोनों का बोध का आविर्भाव होता है।

सामान्यतः हम इसी आधे-आधे ढंग से जीते हैं—आधे जीवित, आधे मृत। यही हमारी स्थिति है। और धीरे-धीरे प्रकाश बाहर की ओर प्रवाहित होता रहता है और कभी वापस नहीं लौटता। तुम अधिक से अधिकतर रिक्त और खोखले होते जाते हो। तुम एक काला खड्‌ढ बन जाते हो।

ताओ के साधकों का अनुभव है कि वह ऊर्जा जो तुम्हारी बहिर्मुखता में तुम खर्च करते हो, इसे अधिक से अधिक भीतर इकट्‌ठा और एकजुट किया जा सकता यदि तुम इसे वापस लौटा लेने की ध्यान-विधि सीख लो। यह संभव है। वही तो एकाग्रचित्तता की समस्त विधियों का विज्ञान है।

ध्यान प्रयोग : ऊर्जा का अंतर्वृत्त

किसी दिन दर्पण के सामने खड़े होकर एक छोटा-सा प्रयोग करो। तुम दर्पण में देख रहे हो—तुम दर्पण में अपना चेहरा, अपनी आंखें देख रहे हो। यह बहिर्मुखता है। तुम दर्पण में प्रतिबिंबित चेहरा देख रहे हो—निश्चय ही अपना खुद का चेहरा देख रहे हो, लेकिन यह प्रतिबिंब तुमसे बाहर का एक विषय है।

फिर एक क्षण के लिए इस पूरी प्रक्रिया को उलटा कर दो। यह अनुभव करना शुरू करो कि दर्पण में प्रतिबिंबित चेहरे द्वारा तुम देखे जा रहे हो—ऐसा नहीं है कि तुम दर्पण में प्रतिफलित बिंब को देख रहे हो, वरन् ऐसा कि दर्पण में प्रतिबिंबित चेहरा तुम्हें देख रहा है। और फिर तुम एक अजीब स्थिति अनुभव करोगे। कुछ मिनटों के लिए इसका प्रयोग करो; तुम बहुत जीवंत हो उठोगे और एक विराट अज्ञात शक्ति तुममें प्रविष्ट होने लगेगी। तुम शायद भयभीत भी हो जाओ, क्योंकि तुमने इसे कभी नहीं जाना है; तुमने ऊर्जा के पूर्णवृत्त को कभी नहीं देखा है।

यद्यपि ताओ के किसी शास्त्र में इसका उल्लेख नहीं है, फिर भी मुझे यह बहुत सरल विधि लगती है, जिसका अभ्यास कोई भी व्यक्ति कर सकता है—और बहुत आसानी से।

अपने स्नानगृह में दर्पण के सामने खड़े हुए पहले तुम दर्पण में अपने प्रतिबिंब को देखो। वह तुम्हारा विषय है। फिर पूरी स्थिति को बदल डालो, प्रक्रिया को उलटा कर दो। अनुभव करो कि तुम प्रतिबिंब हो और दर्पणवाला प्रतिबिंब तुम्हें देख रहा है। तुरंत तुम एक परिवर्तन घटित होता हुआ देखोगे—एक विराट ऊर्जा तुम पर आती हुई।

शुरू में हो सकता है कि यह घटना तुम्हें भयभीत करने वाली लगे क्योंकि तुमने न कभी यह प्रयोग किया है और न ही तुम इस घटना से परिचित हो। यह तुम्हें एक विक्षिप्त बात लग सकती है। तुम शायद झकझोरे गए अनुभव कर सकते हो; तुममें एक कंपकंपी भी उठ सकती है; या तुम अस्तव्यस्त हुआ अनुभव कर सकते हो क्योंकि अब तक के तुम्हारे सारे संस्कार बहिर्मुखता के रहे हैं। अंतर्मुखता को धीरे-धीरे सीखना होगा। लेकिन तभी वृत्त पूरा होता है।

यदि तुम इस प्रयोग को कुछ दिन करो तो तुम आश्चर्य से भर जाओगे कि पूरे दिन अब तुम कितना ज्यादा जीवंत अनुभव करने लगे हो। बस कुछ मिनट के लिए दर्पण के सामने खड़े होना और ऊर्जा को प्रतिबिंब से लौटकर तुम तक वापस आने देना ताकि ऊर्जा का एक पूरा वृत्त निर्मित हो जाता है। और जब भी ऊर्जा का पूरा वृत्त बनता है—एक गहन मौन भीतर उतर आता है।

अधूरा वृत्त बेचैनी पैदा करता है और जब ऊर्जा का वृत्त पूरा होता है तब वह गहन विश्राम को जन्म देता है। वह तुम्हें केंद्रस्थ कर देता है और केंद्रस्थ होना ऊर्जावान होना है। यह तुम्हारी स्वयं की शक्ति है।

यह एक तरह का प्रयोग है; तुम इसे और दूसरे ढंग से भी कर सकते हो।

दूसरा ध्यान प्रयोग

गुलाब के फूल के पास जाकर पहले उसे कुछ क्षणों के लिए, कुछ मिनटों के लिए देखो और फिर उसकी विपरीत प्रक्रिया शुरू करो कि गुलाब का फूल तुम्हें देख रहा है। तुम आश्चर्यचकित हो जाओगे कि गुलाब का फूल तुम्हें कितनी ऊर्जा दे सकता है। यह प्रयोग वृक्षों, सितारों और व्यक्तियों के साथ भी किया जा सकता है। बहुत अच्छा होता है इसे उस स्त्री या उस पुरुष के साथ करना जिसे तुम प्रेम करते हो। बस एक-दूसरे की आंखों में झांको। पहले दूसरे में देखना शुरू करो, फिर अनुभव करो कि दूसरा व्यक्ति ऊर्जा को तुम पर वापस लौटा रहा है; उपहार वापस लौटकर आ रहा है। तुम आपूरित हुआ, स्नान किया हुआ, एक नई ऊर्जा से भीगा हुआ अनुभव करोगे। तुम इससे गुजरकर ज्यादा प्राणवान, ज्यादा जीवंत अनुभव करोगे।

–ओशो, ध्यान योग प्रथम और अन्तिम मुक्ति
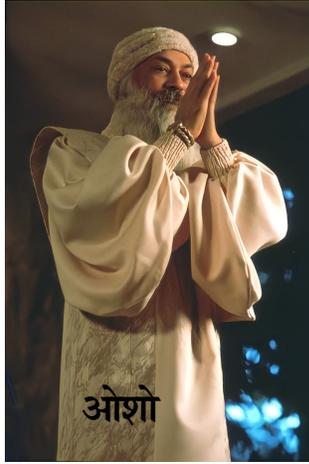
ऊर्जा ही बनती है पुण्य और पाप

भगवान बुद्ध का सूत्र है–

'पुण्य करने में शीघ्रता करें, पाप से चित्त को हटाएं। पुण्य को धीमी गति से करने वाले का मन पाप में रमने लगता है।'

यह भाषा बहुत पुरानी हो गयी, ढाई हजार वर्ष पुरानी हो गयी है। इसे नया रूप देना होगा, तो ही तुम्हारे समझ के करीब आ सकेगी।

इसे ऐसा समझो, जीवन ऊर्जा है। अगर ऊर्जा के लिए सक्रियता न हो, तो ऊर्जा उन दिशाओं में बहने लगती है जहां तुमने उसे कभी चाहा न था कि बहे।

छोटे बच्चे के पास कोई खिलौना न हो, तो किसी भी चीज का खिलौना बना लेगा। मंहगा है यह सौदा। खिलौना चार पैसे का था, टूटता भी तो ठीक

था। उसने घड़ी उठा ली, रेडियो का खिलौना बना लिया, तो महंगा सौदा है।

ऊर्जा उसके पास है, ऊर्जा संलग्न होनी चाहिए। ऊर्जा प्रवाहित होनी चाहिए। ऊर्जा अगर प्रवाहित न हो तो बेचैनी पैदा होती है। और बेचैनी में आदमी कुछ भी करने को राजी हो जाता है। पाप बेचैनी से पैदा होता है।

बुद्ध कहते हैं, 'पुण्य करने में शीघ्रता करें।'

जब भी तुम्हारे पास शक्ति हो, बांटो। जब भी तुम कुछ कर सकते हो, कुछ शुभ करो। प्रतीक्षा मत करो कि करेंगे कल। क्योंकि ऊर्जा आज है, और तुमने शुभ को कल पर टाला, तो बीच के समय में पाप तुम्हें पकड़ेगा। तुम कुछ न कुछ करोगे।

यह चकित होओगे तुम जानकर कि जीवन के अधिक पाप कमजोरी से पैदा नहीं होते, शक्ति से पैदा होते हैं। बीमार लोग दुनिया में बहुत पाप नहीं करते, स्वस्थ लोग पाप करते हैं। अगर पाप के हिसाब से देखो, तो बीमारी सौभाग्य है, स्वास्थ्य दुर्भाग्य है। अगर पाप की दृष्टि से देखो, तो जिनके पास शक्ति है वही उपद्रव है। जिनके पास शक्ति नहीं है, उनका कोई उपद्रव नहीं। आलसी आदमियों ने कोई बड़े पाप नहीं किए, पाप करने के लिए आलस्य तो तोड़ना पड़ेगा। कर्मठ, सक्रिय, कर्मवीर... वे ही पाप करते हैं। जहां ऊर्जा है वहां संभावना है, कुछ होकर रहेगा।

फूल भी खिलता है ऊर्जा से, कांटा भी निकलता है ऊर्जा से। अगर फूल न निकला, तो ऊर्जा कांटे से बहेगी। इसके पहले कि ऊर्जा कांटा बनने लगे, तुम फूल बना लेना। तो शक्ति को इकट्ठी करके मत बैठो।

शक्ति तुम रोज पैदा कर रहे हो अनेक-अनेक रूपों से। भोजन शक्ति दे रहा है, श्वास शक्ति दे रही है, जल शक्ति दे रहा है, सूरज शक्ति दे रहा है। तुम्हारा जीवन प्रतिपल ऊर्जा को उद्गम कर रहा है, पैदा कर रहा है। इस ऊर्जा का तुम उपयोग क्या कर रहे हो?

अगर इसका कोई सदुपयोग न हुआ, फूल न बने, तो भी इस ऊर्जा को निष्कासित तो होना ही पड़ेगा। यह बहेगी। अगर यह करुणा न बनी, तो क्रोध बनेगी। अगर यह प्रेम न बनी, तो काम बनेगी। अगर यह प्रार्थना न बनी, तो निंदा बनेगी। अगर यह पूजा न बनी, तो कुछ तो बनेगी। यह ऊर्जा ऐसे ही नहीं रहेगी। यह संगृहीत नहीं रहेगी, यह बिखरेगी। क्योंकि कल फिर नयी ऊर्जा

आ रही है, जगह खाली करनी पड़ेगी। इसे सक्रिय करो, बुद्ध के सूत्र का इतना ही अर्थ है।

'पुण्य करने में शीघ्रता करें।'

हम करते उलटा हैं। अगर पुण्य करना हो तो हम कहते हैं, सोचेंगे, विचारेंगे, कल करेंगे, परसों करेंगे। पाप करना हो तो हम तत्क्षण करते हैं।

तुमने कभी इस पर ख्याल किया, कोई गाली दे तो तुम नहीं कहते कि चौबीस घंटे बाद, सोच-विचारकर उत्तर देंगे। अगर तुम ऐसा करो तो शायद उत्तर तुम कभी दे ही न पाओ। सोच-विचारकर कब किसी ने गाली का उत्तर दिया है? सोच-विचार तो गाली को आने ही न देगा। सोच-विचार तो गाली की रुकावट बन जाएगा। गाली के लिए तो बेहोशी चाहिए। तत्क्षण करते हो तुम। किसी ने गाली दी, तुम फिर क्षण भी नहीं खोते। फिर तुम्हें जो करना है, उसी वक्त बावले होकर, पागल होकर कर गुजरते हो।

लेकिन अगर किसी ने प्रेम मांगा, तुम कितने कंजूस हो जाते हो! तुमने कभी ध्यान किया, प्रेम में तुम कितने कंजूस हो। देते हो तो भी बड़े बेमन से देते हो, रोक-रोककर देते हो। जैसे प्राण टूटे जा रहे हैं, जैसे जीवन नष्ट हुआ जा रहा है।

मेरे पास हजारों लोग आते हैं। बड़ी से बड़ी कठिनाई जो मैं देखता हूं, वह प्रेम नहीं मिल रहा है। होगी ही! क्योंकि कोई दे ही नहीं रहा है, तो मिलेगा कैसे? वे खुद भी नहीं दे रहे हैं।

देना हम भूल ही गए हैं। हमें ऐसा लगता है कि देने से खो जाएगा। जब कि जीवन का सार-सूत्र यही है कि जो भी पुण्य है, वह देने से बढ़ता है, बांटने से बढ़ता है। दबाने से घटता है, रोकने से मरता है।

पुण्य का सतत प्रवाह चाहिए। जैसे नदी ताजी होती है, बहती रहती है। डबरा बन गयी, सड़ने लगी। कीचड़ पैदा होने लगा। दुर्गंध उठने लगी। खो गयी स्वच्छता, खो गयी ताजगी, खो गया कुंवारापन। वह सुगंध न रही, वह सुवास न रही, बंधन में पड़ गयी; वह मुक्ति का छंद न रहा, वह गीत न रहा।

बहाओ। एक क्षण को भी ऊर्जा इकट्ठी मत करो। करनी ही क्यों है? जिसने आज दी है, कल भी देगा। जो प्रतिपल दे रहा है, वह प्रतिपल देता रहेगा। तुम लुटाओ दोनों हाथों से।

पुण्य का अर्थ है जब भी तुम पाओ तुम्हारे पास कुछ करने की शक्ति है, करो। खोजो अवसर। अवसर की कोई कमी नहीं है। सिर्फ कृपणता न हो, तो अवसर ही अवसर है। कुछ भी करो, कुछ बहुत बड़ा काम करना है, ऐसा ही नहीं है कि तुम सारी दुनिया को बदलो, कोई बहुत बड़ा आदर्श समाज बनाओ, तभी कुछ होगा। कोई छोटा सा काम ही करो। किसी आदमी के पैर में लगा कांटा ही निकाल दो। किसी के घर का आंगन ही साफ कर आओ। रास्ते का कचरा ही अलग कर दो। कुछ भी करो। लेकिन एक बात ख्याल रखो कि तुम जो करो, वह किसी के लिए सुख लाता हो। जो किसी के लिए सुख लाता हो, वही पुण्य है। और जो किसी के लिए सुख लाता है, वह अनंत गुना सुख तुम्हारे लिए ले आता है। पाप कहता है, तुम्हारे लिए सुख लाऊंगा; पुण्य कहता है, दूसरों के लिए सुख लाऊंगा। पाप कहता है, तुम्हारे लिए सुख लाऊंगा; लाता नहीं, जब लाता है दुख की झोली भर आती है। पुण्य कहता है, दूसरों के लिए सुख लाऊंगा; लेकिन तुम उससे अगर राजी हो जाओ, तो तुम पर अनंत गुना बरस जाता है। जो तुम दूसरों को देते हो, वही तुम्हें मिलता है।

इसे थोड़ा समझो।

जब तुम अपने लिए सुख चाहते हो, तो तुम दूसरों के लिए दुख की कीमत पर भी अपने लिए सुख चाहते हो। तुम देते दूसरों को दुख हो, अपने लिए सुख की कामना करते हो—दुख ही मिलता है। जब तुम दूसरे को सुख देने लगते हो, अपने को दुख देने की कीमत पर भी, तब तुम्हारे चारों तरफ सुख की लहरें उठने लगती हैं।

'पुण्य करने में शीघ्रता करे।'

त्वरा चाहिए। जरा सी भी शिथिलता मत करना, क्योंकि शक्ति क्षण भर को रुकती नहीं। तुमने देर की, उतने में ही शक्ति पाप बनने लगेगी। ऐसा ही है कि अगर तुमने दूध का उपयोग न कर लिया, दूध खट्टा होने लगेगा, दही बनने लगेगा। अगर तुम मुझसे पूछो, तो शक्ति को देर तक रखना ही उसमें खटास पैदा कर देता है। वह पाप की तरफ उन्मुख हो जाती है। शक्ति का प्रतिपल उपयोग चाहिए। एक क्षण की भी देरी व्यर्थ है। अवसर खोना ही मत। और जितने तुम अवसर कम से कम

खोओगे, उतने ज्यादा अवसर तुम्हें उपलब्ध होने लगेंगे।

और तुम चकित होओगे जानकर, जीवन के इस भीतरी गणित को पहचानकर, कि जितना तुम बांटते हो, उतना ज्यादा तुम्हें मिलता जाता है। तुम थकते ही नहीं। तुम भरते ही चले जाते हो। जैसे अनंत स्रोत खुल गए। इधर तुम लुटाते हो, वहां मिलता है। एक दफा लुटाने का अर्थशास्त्र ख्याल में आ गया, फिर तुम कभी दीन हो ही नहीं सकते, फिर तुम दरिद्र हो ही नहीं सकते। फिर तुम सम्राट हो गए। और सम्राट होने का कोई दूसरा उपाय नहीं है। शक्ति थोड़ी देर भी रुक जाए, जहर हो जाती है। शक्ति का रुकना ही, अवरुद्ध होना ही, सड़ना है।

—ओशो, एस धम्मो सनंतनो - 45

दस

ऊर्जा का इंद्रधनुष

कुछ बातें ऊर्जा के संबंध में कहना चाहता हूं। अगर हम दस छोटे-छोटे हिस्सों में बांटकर शक्ति अथवा ऊर्जा को समझना चाहें तो बड़ा आसान होगा। उसके स्थूल रूप और सूक्ष्म रूप हमें ख्याल में आ जाएंगे। सामान्य जीना जो है, वह सूक्ष्म से स्थूल की तरफ ऊर्जाओं का प्रवाह है, और साधना जो है वह वापस स्थूल से सूक्ष्म की तरफ चैतन्य का बहाव है। जगत अवतरण है, सूक्ष्म जो था वह धीरे-धीरे प्रकट हुआ, स्थूल रूप लिया, जीवन बना। जब हम इसको जानने के प्रयास में चलते हैं तो हम स्थूल से शुरू करते हैं, और क्रमशः सूक्ष्म और सूक्ष्मतर की और बढ़ते हैं। इसे हम प्रतिक्रमण या वापस लौटना भी कह सकते हैं। भीतर से बाहर की तरफ अतिक्रमण है जीवन। बाहर से भीतर की ओर अंतर्यात्रा है समाधि।

विज्ञान के उदाहरण से समझें। विज्ञान ने शुरुआत की, जगत में जो चीजें दिखाई पड़ रही हैं, उनकी खोजबीन से, कि उनका मूल तत्व क्या है? खोजते-खोजते पता चला कि कुछ कम्पाउंड्स हैं, और कुछ मिक्सचर्स। मिश्रण और यौगिकों से सब चीजें बनी हैं। फिर खोज हुई कि कम्पाउंड्स किससे बने हैं? तब तत्वों का ज्ञान हुआ। सौ से भी ज्यादा तत्व हैं, उनसे सब चीजें निर्मित हैं। और अधिक खोज से पता चला कि तत्व अणुओं से बने हैं। फिर परमाणु, एटम तक पहुंचे। एटम के भीतर प्राप्त हुए सब-एटॉमिक पार्टिकल्स- इलैक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन, इत्यादि। और अंततः पता चला कि वे सब ऊर्जा के रूप हैं। यहां तक विज्ञान पहुंचा है। अगला सवाल यह उठेगा कि ऊर्जा किससे बनी है? अभी यह विचार आया नहीं है। लेकिन निश्चित रूप से आएगा। जिस तर्कसारणी पर हम चल रहे हैं, पिछले ढाई-तीन सौ साल में धीरे-धीरे विज्ञान ऊर्जा तक पहुंचा है; तो स्वभावतः अगला प्रश्न अब यही उत्पन्न होगा कि ऊर्जा किससे निर्मित हुई है?

ओशो कहते हैं ऊर्जा चैतन्य से निर्मित हुई। अगर ठीक से समझें तो सर्वाधिक सूक्ष्म चैतन्य है। चैतन्य का सघन रूप ऊर्जा है। फिर ऊर्जा के सघन रूप पार्टिकल्स है, फिर उनके भी सघन रूप परमाणु, फिर और घने रूप अणु, फिर अणु के ज्यादा घने रूप तत्व, फिर यौगिक, मिश्रण वगैरह जिनसे सारी दुनिया के अरबों-खरबों प्रकार के पदार्थ- ऑरगैनिक और इनऑरगैनिक- असंख्य रूप जन्मे। इसी पृष्ठभूमि में हम समझ सकते हैं कि जीवन-शक्ति के विभिन्न रूप क्या हैं? सबसे स्थूल बाहरी शक्ति जिससे हम परिचित हैं, वह है पॉलिटिकल पावर, संघटन की शक्ति, राजनीति, पद की ताकत। इसके

दो रूप हो सकते हैं– हर चीज के दो रूप हो सकते हैं- पहला शुभ और दूसरा अशुभ। राजनीति की शक्ति एक शुभ रूप ले तो खूब सुन्दर मैनेजमेंट और समाज की सुव्यवस्था बन सकती है। चीन के संत लाओत्सु ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'ताओ तेह किंग' में 'शासन कैसा हो' उसका खुबसूरत वर्णन किया है। अगर राजनीति की शक्ति अशुभ रूप ले तो यह चालाकी, शोषण और मैनुपुलेशन बन जाती है। हर शक्ति के दो रूप संभव हैं। सबसे निकृष्ट, स्थूलतम, बाहरी रूप शक्ति का जो दिखाई देता है, वह है पद की ताकत।

पद के बाद दूसरे नम्बर पर है– धन की शक्ति, पावर ऑफ वेल्थ। इसके भी दो रूप संभव हैं, सुन्दर रूप है, धन का उत्पादन, प्रोडक्शन और उसका फ्लो। धन को अंग्रेजी में कहते हैं करेंसी। वह करेंट में, फ्लो में, सरकुलेशन में रहे तो बड़ी समृद्धि उत्पन्न कर सकती है। इसका खराब रूप बन जाता है शोषण एवं संग्रह, पकड़ और कृपणता। पुराने जमाने में राजा–महाराजा थे, डाकू–लुटेरे थे, ज़मींदार थे, माना वे धनी थे; लेकिन उनका धन शोषण का धन था। आज स्थिति भिन्न है, आज जरूरी नहीं है कि धनी व्यक्ति ने शोषण के द्वारा धन इकट्ठा किया हो। उसकी बुद्धिमत्ता से उत्पादित हो सकता है। अब धन निर्मित किया जा सकता है। खासकर विज्ञान के विकास ने ऐसे साधन जुटा दिए हैं। याद रखना इतनी संपत्ति और सुविधा आज जो दिखाई दे रही है दुनिया में, यह पहले नहीं थी। यह शोषण से नहीं आई है। पुराने जमाने में धनी व्यक्ति सिर्फ शोषण के द्वारा ही धनी हो सकता था। अब समृद्धि आई है औद्योगिक क्रांति, इंडस्ट्रियल रेवोल्यूशन से, यह क्रियेशन है। यह शोषण नहीं है। शोषण और संग्रह में चीजों को कुछ लोग रोक लेते हैं, फैलने नहीं देते तो वृहत समाज दरिद्र हो जाता है। उत्पादन और सरकुलेशन द्वारा सारा समाज समृद्ध और सुखी हो जाता है। पद एवं धन की शक्ति बहुत स्थूल है। बाहर के समाज से, लोगों से, भीड़ से संबंधित है। प्रायः लोग शक्ति से राजनीति तथा पैसों की ताकत ही समझते हैं, इसलिए मैंने धन दोनों को गिनाया।

अब हम आते हैं स्वयं पर। तीसरी है हमारे तन की शक्ति, मस्कुलर पावर। स्वस्थ व पहलवान आदमी ज्यादा शक्तिशाली है, बीमार व कमजोर व्यक्ति की तुलना में। शक्ति का यह रूप हमें स्वयं के दैहिक तल पर महसूस होता है। यह समाज से संबंधित नहीं है। धन और पद दूसरों से संबंधित थे। शरीर के तल पर भी शुभ और अशुभ दोनों ढंग हो सकते हैं। युद्ध में, लड़ाई में, हिंसा में, बलात्कार और गुंडागर्दी में कोई अपनी शारीरिक शक्ति का दुरुपयोग कर रहा है। सदुपयोग भी हो सकता है। उसी का हम किसी सृजनात्मक कर्म में उपयोग कर सकते हैं- कुछ क्रिएट करने में, स्वयं के लिए और दूसरों के लिए कुछ हितकारी काम में। विधायक रचनात्मक कर्म बन सकती है। स्वास्थ्यप्रद क्रियाएं बन सकती हैं। खेल-व्यायाम बन सकती है। सत्कर्म बन सकती है। स्वयं और दूसरों की भलाई कर सकती है। यही कर्म की शक्ति अगर ध्यान से जुड़ जाए तो कर्मयोग की दिशा में ले जा सकती है। साधना में उपयोग आ सकती है। अगर इसके संग साक्षीभाव जुड़ जाए, तो कर्मयोग के रूप में मुक्ति का मार्ग बन जाए।

फिजिकल पावर से थोड़ा और सूक्ष्म है- काम शक्ति, सेक्सुअल पावर। सामान्य प्रकृति के ढंग से चले तो यह प्रोडक्शन में काम का है। जाति को आगे बढ़ाने के लिए। अगर इसका दुरुपयोग हो तो यह बलात्कार बन सकता है, यौन विकृति बन सकता है। अगर इसका सदुपयोग हो, ध्यान से जुड़ जाए, साधना का हिस्सा बन जाए तो तंत्र की साधना बन सकता है। स्वयं की ओर ले जाने वाला हो सकता है। हर शक्ति के दो रूप संभव हैं। काम शक्ति के भी दो रूप संभव हैं। एक तरफ एक एक्स्ट्रीम में यौन विकृतियां और बलात्कार है, तो दूसरी तरफ तंत्र साधना से आत्मज्ञान की यात्रा है। और बीच में जो सामान्य मनुष्य है, उसके लिए सिर्फ जाति को आगे बढ़ाने का एक साधन है। तो मैं दो अतियों के उद्धरण देता चल रहा हूं हर चीज का। बीच की बात कुछ खास नहीं वह तो सामान्य है ही।

काम शक्ति के बाद उससे और सूक्ष्म है, हमारी प्राण शक्ति जिसको हम कहें वाइटल फोर्स, हमारे भीतर जो साहस अथवा दुस्साहस दोनों रूप ले सकती है। इसके भी शुभ और अशुभ दोनों ढंग हो सकते हैं। एक आतंकवादी है वह भी बड़ा दुस्साहसी है, उसकी प्राण ऊर्जा भी बड़ी सघन है। उग्रवादी खतरों से खेलने को राजी है, मरने को तैयार है। और ठीक इसका उलटा भी संभव है, कोई व्यक्ति अपनी इस साहस की वृत्ति को वीरता के कार्य में लगाए, किसी सजृनात्मक दिशा में इसे मोड़ दें। अपनी भलाई के लिए, परिवार की, देश की भलाई के लिए, इसी

प्राण शक्ति को यदि साधना से जोड़ दे, तो वह हठ योग बन जाती है। तो दुरुपयोग भी संभव है। दुनिया में जितने बुरे लोग हुए हैं, वे भी खूब साहसी किस्म के लोग होते हैं, पर उनका साहस दुस्साहस बन जाता है। बहुत अच्छे लोग भी खूब साहसी होते हैं, उनकी प्राण शक्ति का फ्लो सही दिशा में चला जाता
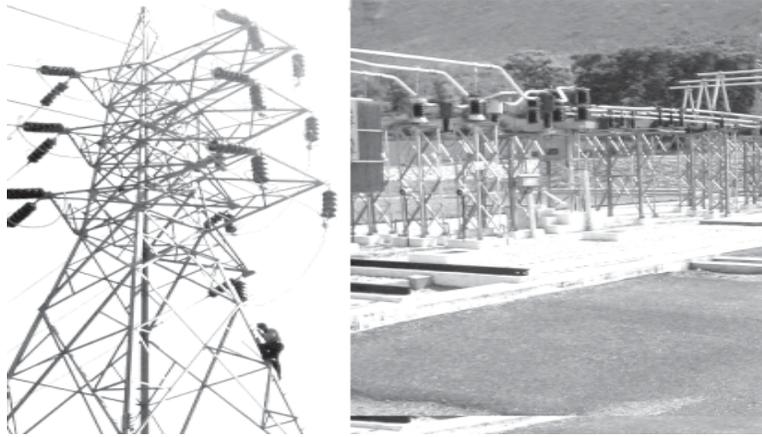
है। तो कौन सी दिशा हम पकड़ा देंगे इसको ऐसे समझना जैसे इलेक्ट्रिकल एनर्जी है, विद्युत ऊर्जा अपने आप में न्यूट्रल है। अगर इस बिजली के प्लग से हम फ्रीज या एयरकंडीशनर को जोड़ दें तो शीतलता उत्पन्न हो जाएगी। और इसी प्लग से हम हीटर या गीजर को जोड़ दें तो गर्मी पैदा हो जाएगी। अगर कोई पूछे कि बताइए की बिजली ठंडी होती है कि गर्म तो बड़ा मुश्किल हो जाएगा कहना। बिजली अपने आप में गर्म या ठंडी नहीं है। यह तय होगा कि किस उपकरण से हम उसको गुजारेंगे। वैसे उसके इफेक्ट उत्पन्न हो जाएगें।

उसी विद्युत के झटके से हम किसी के प्राण ले सकते हैं। इलेक्ट्रिकल चेयर बन गयी है फांसी की सजा देने के लिए। उसी से गैस चैम्बर बन जाते हैं। उसी विद्युत शक्ति के झटके से किसी पागल व्यक्ति का इलाज भी किया जा सकता है। उसी विद्युत ऊर्जा का प्रयोग करके सारी दुनिया को स्वर्ग बनाया जा सकता है। शक्ति अपने आप में न्यूट्रल है। लेकिन इसका उपयोग शुभ अथवा अशुभ दोनों दिशाओं में हो सकता है। ठीक ऐसे ही जो लोग बड़े जीवंत हैं प्राण शक्ति से लबालब हैं, अगर ये अशुभ दिशा में निकल गए तो बड़े असाधु हो जाएंगे। अगर ये शुभ दिशा में निकल गए तो बड़ा सुन्दर घटित होगा, सब

कुछ अच्छा हो जाएगा। महात्मा और अपराधी एक बात में समान हैं। प्राण शक्ति उनकी सामान्य लोगों से बहुत ज्यादा है। सामान्य आदमी कमजोर है। वह न बहुत अच्छा है न बहुत बुरा है। इसलिए कभी-कभी ट्रांसफॉर्म भी होता है। अचानक कोई अंगुलीमाल बुद्ध का शिष्य हो जाता है, बाल्य भील ऋषि वाल्मिकी बन जाता है। ट्रांसफॉर्मेशन संभव है। शक्ति सारी मौजूद है, दिशा बदली जा सकती है। जहां शक्ति नहीं, वहां कुछ बदलाहट भी नहीं कर सकते। कुनकुना जीने वाले आदमी में कुछ विशेष संभावना नहीं है। वह शक्तिशाली ही नहीं है।

प्राणशक्ति से और सूक्ष्म है- भाव शक्ति। दि पावर ऑफ सेंटीमेंट्स या इमोशनल पावर। इसमें भी दो रूप संभव हैं। दुर्भावना और सद्भावना। मुख्य रूप से घृणा, वैराग्य, द्वेष, शत्रुता, ईर्ष्या आदि दुर्भावनाएं हैं, अहितकारी। इनमें हम स्वयं भी परेशान होंगे, और दूसरों को भी परेशान करेंगे। और इनका विपरीत भी संभव है- सद्भावनाएं, प्रेम भाव, धन्यवाद भाव और वही आगे विकसित होकर श्रद्धाभाव बन सकता है। साधना का हिस्सा हो जाए तो भक्ति भाव व प्रार्थना बन सकता है। भाव की शक्ति दोनों दिशाओं में बह सकती है। हम पर निर्भर करेगा हम उसे किस तरफ मोड़ दें। प्रकृति ने हमको जो दिया है, वह मिश्रण है। थोड़ा सा यह, थोड़ा सा वह, दोनों मौजूद हैं। क्योंकि दोनों की प्रकृति में जरूरत है। अगर क्रोध की भावना न हो तो बात न बनेगी और भय न हो केवल साहस हो तो भी जीवन का संतुलन खो जाएगा। प्रकृति ने हमको सब कुछ दिया है। फूल भी हैं, कांटे भी हैं। लेकिन इनमें से हमें चुनने की स्वतंत्रता है। निगेटिव फोर्सेस की तरफ बह जाना ज्यादा आसान लगता है। जिन्दगी में उसी के मौके ज्यादा आते हैं कि लड़ो झगड़ो, कि हिंसाओं, प्रतियोगिताओं में पड़ो, ईर्ष्याओं में फंसो, कि धन संग्रह हेतु दौड़ो, या कि राजनीति के दीवाने हो जाओ।

दूसरी तरफ अगर जाना है तो हमें सप्रयास जाना होगा। निगटेव चीजें अपने आप हो रही हैं। जैसे ग्रेविटेशन फोर्स नीचे की ओर खींच रहा है। तो गिरने के लिए कुछ करना नहीं पड़ता। बस कुछ न करें तो गिरना शुरु हो जाता है। लेकिन अगर पहाड़ चढ़ना हो तो काफी श्रम करना पड़ेगा। शिखरों पर जाने के लिए हमें सचेतन रूप से प्रयत्न करना होगा। फिर भी बीच-बीच में फिसल-फिसल जाएंगे। फिर-फिर कोशिश करनी होगी। इसलिए यह साधना का हिस्सा है। ये चीजें अपने आप नहीं होंगी। हां, क्रोध अपने आप आएगा, भय अपने आप आएगा। वासना में कुछ खास करने की जरूरत नहीं है। प्रकृति

पर छोड़ दिया जाए तो अधिकांश लोग बलात्कारी हो जाएंगे। साधना का रूप देना हो, तो बड़ा सचेतन प्रयास चाहिए। बड़ी समझ के साथ धीरे-धीरे अपने आप को उठाना होगा। क्रोध नैसर्गिक भावना है, और प्रेम भी। जिन्दगी में यदा-कदा छोटे-मोटे प्रेम के एपिसोड्स आते हैं। किंतु जल्दी ही घृणा और क्रोध ओवरलैप कर लेते हैं। इसको ठीक से समझ लेना... जिन्दगी ऐसी है!

अगर आपको सुन्दर बगिया लगाना है तो बीज बोने होंगे, खाद डालनी होगी, पानी सींचना होगा, देखभाल करनी होगी पौधों की। सुरक्षा करनी होगी। अगर घासपात लगाना है तो कुछ नहीं करना है, छोड़ दो ऐसे ही जमीन को, वे अपने आप उग आएंगे। मैंने सुना है मुल्ला नसरुद्दीन को एक बार शौक चढ़ा। उसे एक खास प्रकार के फूल का पौधा बहुत पसन्द आया। अपने मित्र से बीज मांगकर लाया। बगिया में उसने बीज बोए, कुछ दिनों बाद उसने देखा कुछ घास की कोपलें सी निकल आई हैं। कुछ समझ नहीं आ रहा था कि फूल वाले पौधे की कोपलें हैं या घासपात है? नसरुद्दीन के बगल में वनस्पति शास्त्र के प्रोफेसर रहते थे, उसने सोचा की इनसे पूछ लें। मुल्ला ने पूछा कि कृपया बताएं... कैसे पहचानू कि कौन सा घासपात है जिसे उखाड़कर फेंकना है, और कौन सा पौधा है जिसको मैं उगाना चाह रहा था? प्रोफेसर ने कहा बिल्कुल आसान है। सबको उखाड़कर फेंक दो। जो अपने आप उग आए वो घासपात है, जो स्वयं न उगें समझना वही थे फूल के पौधे।

जिन्दगी के इस नियम को समझ लो। घासपात उगाने के लिए आपको कुछ नहीं करना पड़ता, वह खुद-ब-खुद उग ही रहा है। मगर फूल लगाने हैं तो समझपूर्वक श्रम करना होगा। निगटेव भावनाएं अपने आप ही फूट-फूट आ रही हैं, पॉजिटिव तो यदा-कदा, बीच-बीच में छोटी सी झलक, कुछ क्षण को आती हैं। लोग कहते हैं- मोमेंट्स ऑफ लव, प्रेम के क्षण। प्रेम के घंटे नहीं होते, प्रेम के सप्ताह नहीं होते। लेकिन अगर उसे विकसित करना है तो हमें कुछ करना होगा। अपने आप वह नहीं होगा। यही भाव शक्ति, भक्ति तक

ले जा सकती है।

भाव से भी ज्यादा सूक्ष्म शक्ति है मन की, मेंटल पावर या विचार शक्ति, पावर ऑफ थॉट्स। इसके भी दो रूप संभव हैं। एक तो है अनर्गल विचार। उनको चलाने में शक्ति व्यर्थ जा रही है। बिना किसी काम के असंगत कुछ भी चल रहा है। सामान्य मनुष्य की स्थिति ऐसी है। कोई दुर्विचार भी कर सकता है- खराब विचारों से भरकर। बहुत लोगों के जीवन में ऐसा हो रहा है- विचार शक्ति का दुरुपयोग। सद्विचार भी हो सकता है, जिसे हम कहते हैं विवेक। विवेक और विचार में भेद समझ लेना। विचार की शक्ति ट्रांसफॉर्म होकर विवेक, प्रज्ञा या विज़्डम बनती है। अपने आप नहीं बनेगी, हम कोशिश करेंगे लगातार प्रयास करते रहेंगे तब बनेगी। वैज्ञानिक खोज कर रहे हैं परमाणु बम बना लिया, न्यूक्लियर वेपन्स बना लिए। विचार शक्ति का उन्होंने उपयोग किया। लेकिन वे विवेकपूर्ण नहीं हैं। परमाणु बम बनाने वाला वैज्ञानिक बड़ा विचारशील है, बड़ी खोजीवृत्ति का है, उसकी थिंकिंग पावर निश्चित रूप से असाधारण है। वह अनर्गल विचार भी नहीं करता, बिल्कुल एक दिशा में एकाग्रतापूर्वक डूबकर इतनी खोजबीन कर पाता है। लेकिन जगत के विध्वंस की तैयारी कर रहा है। यह वह नहीं देख पाता, इस व्यक्ति को हम प्रज्ञावान नहीं कह सकते। खूब विचारशील तो हैं।

विचार के भी कई-कई रूप हैं। एक अनर्गल विचार है, वह फिलॉसफी का रूप भी लेता है। लगता है कि फोकस हो गया, एक दिशा में जा रहा है, लेकिन किसी काम का नहीं होता। कम से कम दस हजार साल से मनुष्य जाति सभ्य हुई है और फिलॉसफिकल थिंकिंग चलती रही है। कभी उससे कुछ भी हासिल नहीं हुआ। विज्ञान के आने के बाद फिलॉसफी ने एक्सपेरिमेंटल रूप धारण किया। अब सिर्फ सोचना ही नहीं है, उसका प्रयोग भी करना है। प्रयोग से सिद्ध होगा, सिर्फ विचार से नहीं। हवाई विचार से कुछ नहीं होता, विज्ञान ने ठोस रूप लेना शुरू किया। अब विज्ञान का उपयोग या दुरुपयोग दोनों चीजें संभव हैं। हर चीज के दो रास्ते हो जाते हैं। विचार का शुद्धत्तम उपयोग हो सकता है, वह है ज्ञानयोग। जहां हम स्वयं के अन्वेषण में, आत्मज्ञान की दिशा में लगते हैं। विज्ञान लगा पदार्थ ज्ञान की दिशा में। सदुपयोग, दुरुपयोग दोनों संभव हैं। जरूरी नहीं कि उसमें विज़्डम हो, लेकिन जब यही विचार शक्ति, यही जानने की जिज्ञासा एवं क्षमता, अपनी तरफ मुड़ती है, तब आत्मज्ञान की खोज शुरू हो जाती है। 'मैं कौन हूं' जैसा प्रश्न महत्त्वपूर्ण हो जाता है।

विचार शक्ति से और ज्यादा सूक्ष्म है संकल्प शक्ति, इच्छा शक्ति। अंग्रेजी

में हम जिसे कहते हैं विल पावर। हमारे भीतर क्या इच्छा है, क्या कामना है, यह बहुत ही बीज रूप में है, अति-सूक्ष्म। विचार में जब कोई चीज आती है, भावनाओं में आती है, तब तो हम पकड़ लेते हैं। तब तो हमें पता भी चल जाता है कि मेरे भीतर यह चल रहा है। अभी दूसरों को पता नहीं कि मेरे भीतर क्या विचार या भावना है, लेकिन कम से कम मुझे तो पता है। या मैं कोशिश करूं तो पता लगा सकता हूं आसानी से। थोड़ा सा भी निरीक्षण करूंगा तो ख्याल में आ जाएगा, मेरे विचार क्या हैं, मेरी भावना क्या है। दूसरों को तो तब पता चलेगा, जब मेरी वाणी से या मेरे कर्मों से व्यक्त होगा। लेकिन वाणी में और कर्म में झूठ-पाखंड भी हो सकता है। मैं अभिनय भी कर सकता हूं, असत्य भी बोल सकता हूं, मेरा व्यवहार बिल्कुल नाटकीय भी हो सकता है। मेरे बारे में कुछ पक्का पता नहीं चलता मेरे आचरण से, व्यवहार से और वक्तव्य से। मेरे भीतर के विचार और भावना मैं ही पढ़ सकता हूं। और उससे भी सूक्ष्मतर है, विल पावर, वह बहुत धुंधला-धुंधला है। मैं खुद अपने भीतर टटोलूं तो एकदम से पकड़ में आसानी से नहीं आता। अभी विचार रूप में भी नहीं बात, अभी प्रकट बिल्कुल नहीं हुई है, एकदम छुपी हुई बीज की भांति है। किंतु यही छोटा सा बीज कभी विराट वृक्ष बनेगा।

ओशो एक प्रवचन की शुरुआत, बड़ी सुन्दर, प्रेरक उपमा से करते हैं। कहते हैं, मैं एक बड़े सुन्दर बगीचे से गुजर रहा था जिसमें भांति-भांति के वृक्ष थे। हजारों प्रकार के पेड़, कोई बड़े पेड़, कोई छोटी झाड़ियां, छोटे-छोटे पौधे,

कई रंगों व गंधों के फूल, भांति-भांति के स्वाद वाले फल। मेरे मन में ख्याल आया, ये सारे पौधे एक ही जमीन से, एक ही मिट्टी से रस खींचते हैं। एक ही वर्षा का जल इन्हें मिलता है। एक ही सूरज की रोशनी में प्रकाश संश्लेषण करते हैं। फोटो सिंथेसिस करके अपना भोजन बनाते हैं। एक ही हवा में श्वास लेते हैं। फिर ये इतने भिन्न-भिन्न कैसे हो गए? इसी मिट्टी में मीठे आम व अमरूद के फल निकल आते हैं। इसी मिट्टी में नीम व करेले के कड़वे फल भी निकल आते हैं। इसी में खट्टी इमली पैदा हो जाती है। आश्चर्य! इसी में कांटों वाले बबूल तथा कैक्टस निकल आते हैं। इसी में सुन्दर कोमल फूल वाले पौधे भी उत्पन्न हो जाते हैं। वही मिट्टी, वही हवा, वही पानी, वही सूरज। ओशो कहते हैं, मैंने उस बगीचे के माली से पूछा, ये पौधे इतने भिन्न-भिन्न कैसे हो गए? माली ने कहा, क्योंकि इनके बीज अलग-अलग थे।

ओशो ने बताया- जब मैं बगीचे से बाहर निकला तो मेरे मन में यही ख्याल था कि इतना छोटा बीज... कभी-कभी तो हमें बीज दिखाई भी नहीं देता, इतना छोटा बीज होता है... उसमें इतना कुछ छुपा है! और इस छोटे से बीज में इतनी ताकत है, कि पृथ्वी में से केवल वही तत्व ग्रहण कर लेता है, जो इसको चाहिए और बाकी यह सब छोड़ देता है। यह हवा में से और सूरज की रोशनी में से और पानी में से वह प्राप्त कर लेता है जो इसको चाहिए, बस; और जो छोड़ना है, वह छोड़ देता है। प्रकृति इसको कुछ जबरदस्ती दे नहीं सकती। इसकी अपनी मर्जी है। आश्चर्य है कि एक छोटे से बीज में इतनी ताकत है कि सूरज, पृथ्वी और वायुमण्डल हार जाते हैं। वह जो चाहता है ग्रहण कर लेता है। जो इसको नहीं चाहिए नहीं लेता।

ओशो कहते हैं मुझे ख्याल आया कि मनुष्य दुनिया में इतने भिन्न हैं, इनकी भिन्नता का क्या कारण है? वह कौन सा बीज है जो मनुष्यों को इतना अलग-अलग बना देता है? यहीं कोई अपराधी और आतंकवादी हो जाता है। कोई हत्यारा या राजनैतिक बन जाता है। कोई शोषणकर्ता हो जाता है। कोई पृथ्वी को विश्वयुद्ध में धकेल देता है। और यहीं कोई व्यक्ति करुणा और अहिंसा और समाधि में लीन हो जाता है। और यहीं अधिकांश लोग कुछ भी नहीं हो पाते। मनुष्य के भीतर कौन सा बीज है?

ओशो स्वयं ही इस प्रश्न का उत्तर देते हैं। वे कहते हैं, वह बीज है संकल्प का, विल पावर का, इच्छा शक्ति का। आदमी जो चाहता है, वैसा ही बनना शुरू

हो जाता है। अन्ततः वह एक दिन वही हो जाता है, जो उसके प्राणों ने चाहा था।

लेकिन यह संकल्प शक्ति अति सूक्ष्म और बारीक चीज है। हम खुद भी खोजना चाहें तो स्पष्टतः पकड़ में नहीं आती, हम खुद अपने आप को भी धोखा दे सकते हैं। लेकिन याद रखना जीवन में होगा वही जो हमने चाहा है। हमारे वृक्ष में पत्ते, फूल और फल वही आएंगे जो हमारे भीतर चाहत थी। उससे भिन्न कुछ नहीं हो सकता। न आज तक हुआ है, न कभी होगा। आज हम जो भी हैं, हमारे पुराने संकल्पों का परिणाम हैं। ये बीज हममें मौजूद थे। उसी की खिलावट आज हुई है। चाहे अच्छी या बुरी, जैसी भी है। अगर इसको बदलना चाहें तो निश्चित रूप से उस सूक्ष्म तल पर पहुंचना होगा। बीज रूप में, जहां चीजें बिल्कुल अप्रकट हैं, कुछ पता नहीं चलता कि इनमें क्या है! दस पक्षियों के अण्डे आपके सामने रखे हों, एक से आकार वाले... कुछ भी पता नहीं चलेगा, सब अण्डे एक से लग रहे हैं। परन्तु भीतर से चूजा निकलेगा तब पता चलेगा। वे बड़े होकर अलग-अलग प्रकार के पक्षी बन जाएंगे। हमारे शरीर के क्रोमोजोम्स और जीन्स खुली आंख दिख भी नहीं सकते। साधारण माइक्रोस्कोप में भी नहीं दिखते। इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप द्वारा एक लाख गुना बड़ा करके देखें तब छोटा सा बिंदु दिखाई देता है। लेकिन उस छोटे से 'जीन' में पूरी भावी-कहानी छुपी है। इससे कैसा मनुष्य उत्पन्न होगा। उसकी उम्र कैसी होगी, आंखों का रंग कैसा होगा, बाल कैसे होंगे, उसका रंग कैसा होगा, बुद्धि कितनी होगी, उसे बीमारियां किस प्रकार की होंगी, सारी कथा लिखी हुई है। कितने साल जी पाएगा, सब कुछ लिखा है।

शरीर के जीन्स तो विज्ञान की पकड़ में आ गए। भविष्य में और साफ हो जाएंगे। बस, ऐसा ही समझना हमारे भीतर ऊर्जा के जीन्स विल पावर के रूप में हैं। इच्छा शक्ति किसी माइक्रोस्कोप की पकड़ में कभी नहीं आएगी। बाहर से जानने का कोई उपाय नहीं, भीतर हम खुद ही प्रयास करें। खूब सजग होकर उस साक्षी के लेंस से निरीक्षण 'ऑब्जर्वेशन विदाउट जजमेन्ट' करें। तब हमें ख्याल में आना शुरू होगा कि क्या मेरे भीतर इच्छा चल रही है। अगर हमने जजमेन्ट भी लिया कि कोई चीज गलत है, नहीं होनी चाहिए, वह तुरन्त गायब हो जाएगी फिर दिखाई ही नहीं देगी। नॉन-जजमेंटल होना होगा। अच्छे-बुरे के निर्णय किये तो अचानक आप पाएंगे धोखाधड़ी शुरू हो गयी। आपने जिसको

बुरा कहा, आपके भीतर से वह ऐसा गायब हो जाएगा कि पता ही नहीं चलेगा कि है, छिप जाएगा। फिर आप इसको कभी नहीं बदल पाएंगे। आपको पता ही नहीं चलेगा कि मौजूद है। जब अंकुरित होकर बड़ा पेड़ बन जाएगा, तभी पता चलेगा प्रकट रूप में। बीज रूप में नहीं पकड़ पाएंगे उसको। भीतर भावनाओं और विचारों का ऑब्जर्वेशन काफी हद तक हम कर सकते हैं। संकल्प शक्ति का ऑब्जर्वेशन बहुत सूक्ष्म मामला हो जाता है। इसके लिए बिल्कुल नॉन-जजमेंटल होंगे तो ही पता चलेगा। क्रोध के बारे में जजमेंटल हैं तो भी थोड़ा सा पता लग जाएगा कि भीतर क्रोध चल रहा है। अगर आप ऑब्जर्व करेंगे इस धारणा के साथ कि क्रोध बुरा है, नहीं होना चाहिए, फिर भी आपको पता लगेगा कि हां, मौजूद है। वह अपना प्रभाव दिखाएगा। चीजें प्रकट रूप में आ गयी हैं। अभी बहुत सूक्ष्म मामला नहीं है, अंकुर फूट आया है। माना भीतर है, अभी बाहर शाखाएं नहीं निकलीं। फिर भी आप देख सकते हैं, भाव को पकड़ सकते हैं। विचार को भी पकड़ सकते हैं। संकल्प बिल्कुल सूक्ष्म बीज है। कुछ पता नहीं चलता ऊपर से। अगर आपने जरा सी धारणा रखी, अच्छे-बुरे की द्वंद्वात्मक धारणा, वह बिल्कुल गायब हो जाएगी। अदृश्य हो जाएगी। बड़ा सूक्ष्म जागरण चाहिए। अब इससे और सूक्ष्म में हम चलते हैं।

संकल्प शक्ति से भी सूक्ष्म है, डिवाइन एनर्जी या दिव्य ऊर्जा। इसको मैं शक्ति नाम नहीं देना चाहता। मैं इसे ऊर्जा कहना चाहूंगा। शक्ति और ऊर्जा में एक छोटा सा भेद कर लें। जैसे बाहर की दुनिया में हम करते हैं भौतिक तल पर। एनर्जी एण्ड पावर। पावर का मतलब है, जहां एनर्जी को यूटीलाइज किया जाने लगा। वह पावर है। और जहां अनयूज्ड पावर है, उसका नाम है एनर्जी। तो इन दो शब्दों का हम अलग-अलग उपयोग करना चाहेंगे। ऊर्जा मतलब- शक्ति मौजूद है। अभी उसकी यूटीलिटी, अभी उसका उपयोग शुरू नहीं हुआ। अभी किसी दिशा में नहीं बह रही, कुछ अभी इसका उपयोग नहीं किया जा रहा। और पावर का मतलब है- उपयोग में आने लगी। तो विल पावर को विल पावर कहना होगा, क्योंकि वहां उपयोग शुरू हो चुका। शुभ या अशुभ दोनों दिशाओं में जा सकती है। वह संकल्प बुरा रूप भी ले सकता है और अच्छा रूप भी ले सकता है। उपयोग शुरू हो गया। जब तक उसका उपयोग नहीं है तब तक सिर्फ अपने प्योर फॉर्म में है। तब उसे हम एनर्जी कह सकते हैं। अनयूटीलाइज्ड फोर्स, इसको हम दिव्य शक्ति कहें, डिवाइन एनर्जी कहें। यह हमारी आत्मा की चेतना की शक्ति है। यह कॉन्शसनेस से ओतप्रोत है। यह न्यूट्रल है।

इससे पहले मैंने आपको जितने भी प्रकार कि शक्तियां कहीं वे ड्युअलिटी वाली हैं, द्वंद्व है उनमें। शुभ-अशुभ दोनों दिशाओं में जा सकती हैं। कभी भी यहां से वहां दिशा बदल सकती हैं। डिवाइन एनर्जी, एनर्जी ऑफ कॉन्शसनेस, यह शुभ-अशुभ के पार है। क्योंकि इसमें कोई उपयोग नहीं है, यह बस है। बीज ओंकार की ध्वनि से गूंजती हुई चेतना। यह डिवाइन एनर्जी है। और गहरे में चलें यह जो हमारी इंडिविज्युवल आत्म शक्ति है, आत्म ऊर्जा है, यह कहां से आ रही? अब हम बात करते हैं ब्रह्म ऊर्जा, **पर्सनल** एनर्जी की, जो मेरी नहीं, आपकी नहीं, किसी की नहीं। एक कलेक्टिव कॉन्शसनेस या उससे भी **पार्जनस** कॉन्शसनेस एक महासागर है। जिसे हम आत्म ऊर्जा कह रहे हैं, वह समझें की हमारे कुंए का पानी है। और जो **पार्जनस** एनर्जी है वह भूमिगत जल भण्डार है। अंडरग्राउण्ड वॉटर है। कुंए को तो इंडिविज्युअल अपना कुआं कह सकते हैं। निश्चित ही मेरे घर का कुंआ, आपके घर का कुआं, आपके पड़ोसी के घर का कुआं सबका अलग-अलग है। किन्तु नीचे जो अण्डरग्राउण्ड वॉटर टेबल है, वह एक ही है। इसको मैं कहना चाहूंगा **पोर्जनस** एनर्जी, ब्रह्म ऊर्जा या आप जो नाम देना चाहें, भागवत् ऊर्जा कह लें। यह जो दिव्य ऊर्जा या भागवत् ऊर्जा है, यह अपने आप में आनन्द है। जैसे ही यह पावर का रूप लेती है, यह उपयोग में आ जाती है। जब तक यह उपयोग में नहीं आई है तब तक यह अपने आप में आनन्द स्वरूप है। उपयोग नहीं है, आनन्द है। और जैसे ही हम उपयोग शुरू करते हैं आनन्द की मात्रा क्षीण होने लगती है। इसलिए जैसे-जैसे हम यूटिलिटेरियन होते जाते हैं, वैसे-वैसे ब्लिसफुलनेस कम होती जाएगी। जहां-जहां हम ब्लिसफुल होते हैं, वहां-वहां हम नॉन यूटिलिटेरियन हो जाते हैं।

आप अपने जीवन के आनन्द के, शांति के क्षण को याद करें- वे क्षण वही हैं जब आप ऐसी स्थिति में थे जहां समाज की यूटिलिटेरियन दृष्टि से या आपकी अपनी नजरों में भी कुछ उपयोग नहीं हो रहा था। बस, आनन्द रूप हो सकता है, उसके बाद में उपयोग हुआ हो। लेकिन जिस क्षण आप उसमें लीन थे आपके भीतर उपयोगिता की भावना नहीं थी। चीजें घट रही थीं, हो रही थीं। कहीं आप कॉस्मिक लेवेल से जुड़े थे। उस लेवेल से उसका फ्लो हो रहा था। संभव है कि किसी व्यक्ति के भीतर का विकास, किसी अज्ञात स्रोत से कुछ अवतरित हुआ। यह अपने आप में आनन्द है। अब यह अलग बात है कि बाद में इसकी किताब छप जाए, कि उसको नाम और प्रसिद्धि मिल जाए, वह धन कमा ले, नोबेल पुरस्कार मिल जाए। लेकिन जिस क्षण में यह

घटना घट रही है, वह शुद्ध ऊर्जा है अवतरित हो रही है ऊपर से। जब-जब हम उस कॉस्मिक लेबल से या स्वयं की कॉन्शसनेस लेबल से जुड़ जाते हैं- वहां से जो कुछ भी होता है वह सब आनन्दमय होता है। या उसमें अगर हम स्थिर हो जाएं, कुछ भी नहीं हो रहा; बस, उसमें स्थिर हैं- तो भी वह अपने आप में आनन्द है। ठीक इसी प्रकार से मैंने आपको शक्ति के ये रूप कहे- बिल्कुल स्थूल से शुरू करके सूक्ष्म तक। उलटे क्रम में भी फिर से एक नाम आपको याद दिला दूं- भागवत् ऊर्जा या ब्रह्म ऊर्जा, फिर उसके बाद हमारी इडिविज्युअल चैतन्य ऊर्जा, आत्म ऊर्जा कह लो, दिव्य ऊर्जा कह लो, जो भी आपका नाम देने का मन हो। मैं ऊर्जा वर्ड यूज करूंगा। इसके बाद शक्ति उपयोग करना चाहूंगा। यह ऊर्जा पहला जो रूप लेती है, वह है संकल्प शक्ति का। अब यूटिलिटी की दुनिया में आना शुरू हुआ। एनर्जी पावर में कन्वर्ट होना शुरू हुई। यह विद्युत ऊर्जा थी। वह इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन बनना शुरू हुई। याद रखना द्वंद्व शुरू हो गया। एनर्जी पहले न्यूट्रॉन थी इन इलेक्ट्रॉन प्रोटॉन में ही निगेटिव-पॉजिटिव आने लगे। संकल्प शक्ति के बाद आया विचार और उस इच्छा ने विचार का रूप धारण करना शुरू किया। विचार से अब योजना बननी शुरू हुई, कैसे यह कामना पूर्ति हो? मन ने अपनी शक्ति उसमें लगा दी। फिर और नीचे आए, वह भाव के रूप में और स्थूल हो गयी। इथरिक लेवेल पर आ गयी। फिर भाव से और नीचे आई, वाइटल फोर्स उसमें जुड़ा। अब भाव केवल भाव ही नहीं रहा, वाइटल फोर्स (प्राण शक्ति) उसमें जुड़ गयी। एक्सट्रा एनर्जी उसमें जुड़ गयी। तब यह और सूक्ष्म हो गई। शरीर के तल पर विभिन्न प्रकार के भोग और कर्म इससे उत्पन्न हुए। फिर जब इससे और नीचे आई तब बाहर के जगत में दो रूप में बंट गई- धन की शक्ति का रूप और पद की शक्ति का रूप। वे सबसे निकटतम रूप हैं याद रखना। तो जितना स्थूल मामला होता जाएगा, उतना गिरा हुआ होता जाएगा, उतना ही बुरा वह हो सकता है।

थायरकी में किसी ने ओशो से पूछा कि कामवासना से भी निम्न कोई चीज है? ओशो ने कहा- 'निश्चित ही कामवासना से भी निम्न कोटि की है धन वासना और उससे भी नीचे की है पद वासना। कामवासना में भी दूसरे का मैनुपुलेशन शुरू हो रहा है। सूक्ष्म हिंसा आने लगी। लेकिन जरूरी नहीं है कि यह अहिंसक रूप ही ले, अच्छा रूप भी ले सकती है। लेकिन जहां धन वासना और पद वासना आ रही है, वहां पर शुभ की संभावना और भी निम्न

होती चली गयी। और भी कम होती चली गई। करीब-करीब नहीं के बराबर। तो जितने शुद्ध और सूक्ष्म रूप में चीजें हैं, उतनी सत्यम् शिवम् सुन्दरम् में जमे जमाएं हैं। जैसे-जैसे ऊपर से हम नीचे की ओर खिसकना शुरू हुए शुभ-अशुभ का द्वंद्व संकल्प से ही शुरू हो गया। फिर वही दुर्विचार और सद्विचार, दुर्भावना और सद्भावना, धीरे-धीरे नीचे आते-आते सब चीजें द्वंद्व में बढ़ती चली गयीं। बुराई की संभावनाएं बढ़ती चली गयीं। सच्चाई की तरफ लौटने की चान्सेस कम से कम होती चली गई। फिर भी कहना चाहिए कि अपने तन की शक्ति तक आते-आते फिजिकल (सेक्सुअल) पावर तक आते-आते ये चीजें हमारे हाथ में हैं। काफी कुछ और हम मोड़ दे सकते हैं। लेकिन जब चीजें इससे भी ज्यादा नीचे गिर जाती हैं... जिसको हम कहें पावर ऑफ मनी और पावर ऑफ पॉलिटिक्स- ये सर्वाधिक निम्नत्तम रूप हैं शक्ति के। उसका निगेटिव रूप ही ज्यादातर प्रकट हो सकता है। शुभ की संभावना होना बहुत कम है, किन्तु है। पूरी तरह समाप्त नहीं हुई है। वहां भी संभावना तो है लेकिन हम जितने सूक्ष्म में होंगे उतने ही हम निर्द्वंद्व में होंगे। और फिर जब द्वंद्व में आते हैं तो वहां भी जो सूक्ष्मतम है— संकल्प, विचार, वहां हम सब और आसानी से मुड़ सकते हैं।

समझो मेरे भीतर विचार चल रहा है, क्रोध का। मेरे भीतर क्रोध की भावना, और मैं दुर्विचार ही कर रहा हूं किसी को बुरा-भला बोलने की सोच रहा हूं। अभी यह कुछ नहीं है। अभी यहां से टर्न करना बहुत आसान होगा। न तो मैंने कुछ किया है, न मैंने कुछ कहा है। लेकिन एक बार यह और स्थूल रूप ले लेगा जैसे- किसी को अपशब्द कह दिए, अपमान जनक बातें कह दीं, या मैंने कर्म ऐसा कर दिया- किसी की कॉलर पकड़ ली, दो थप्पड़ मार दिए, या धक्का मार कर गिरा दिया, या चाकू मार दिया, मर्डर कर दिया, अब यहां से लौटना संभव नहीं है। अब मैं जागरूक भी हो जाऊं कि मैंने हत्या की है लेकिन अब उस व्यक्ति के प्राण वापस नहीं आ सकते। मैंने किसी को गाली दे दी, अपमान कर दिया, अब अगर मैं क्षमा भी मांग लूं तो भी पूरी तरह से रिवर्स नहीं हो सकती बात। उस व्यक्ति को जो चोट लगी है... हो सकता है उसने माफ भी कर दिया हो ऊपर-ऊपर से लेकिन भीतर कहीं दरार पड़ गयी। घाव लग गए हैं। चाकू नहीं मारा, एक शब्द ही मारा है, लेकिन घाव तो हो गया। घाव भर भी जाएं, माफी भी मांग ली, उसने माफ कर भी दिया, फिर भी घाव के निशान रह जाएंगे। इसको समझना- हम जितने स्थूल रूप में पहुंच जाएंगे, वहां से प्वाइंट ऑफ रिटर्न उतना ही मुश्किल है। जब तक चीजें सूक्ष्म हैं वहां से प्वाइंट ऑफ रिटर्न बिल्कुल आसान है। वहां दूसरा इनवॉल्व नहीं था।

मैं सजग होकर लौट सकता हूं। क्रोध की शक्ति का रूपांतरण मैत्री भाव से होता है। वह स्वयं इलेक्ट्रिकल एनर्जी है। मैंने हीटर में लगा दिया था प्लग यह समझ में आ गया कि यह तो व्यर्थ गर्मी पैदा हो रही है, खून खौल रहा है। निकाल कर फ्रिज से जोड़ दिया और ऊर्जा सद्भावना बनकर बह गई। इस चीज को समझना। जैसे-जैसे चीजें स्थूल होती जा रही हैं वैसे-वैसे हमारे वश के बाहर भी होती जा रही हैं। दूसरों के साथ इन्वॉल्वमेंट होता जा रहा है और फिर चीजें अकेले आपके हाथ में नहीं हैं। दूसरा भी कुछ करेगा। फिर आप मालिक नहीं रहे गुलाम हो गए दूसरे के। बोरियत करेगा, अब उस पर डिपेंड करता है कि वह क्या करेगा। अब आपके हाथ में नहीं है।

तो ऊर्जा के सूक्ष्म रूप को जानना कि वह डिवाइन एनर्जी है और तुम्हारे भीतर है। वह शांत, आनन्दपूर्ण और न्यूट्रल है। जैसे ही उसका उपयोग शुरू हुआ, हम द्वंद्व के जगत में प्रवेश किए। जहां तक हमारे भीतर-भीतर की बात है, वहां तक हम मालिक हैं चीजों को बदलने के। जैसे चीजें हमारे हाथ से बाहर निकलीं, हमारे वश के भी बाहर हो गयीं तो ये पावर का रूप ले लेती हैं। साधना है स्थूल से सूक्ष्म की और जागरण। जो हम भीतर के स्रोत में डुबकी लगाकर उसकी शांति और आनन्द में सराबोर हो जाते हैं, तब हमारा जीवन बिल्कुल ही दूसरा रूप ले लेता है। फिर हमारे भीतर से जो प्रवाह है, वह हमारी इच्छा अनुसार होता है। हमारा संकल्प ही शुभ की दिशा में हो जाता है। फिर बाकी सब चीजें तो उसके अनुसार ही बदलती चली जाती हैं।

ग्यारह
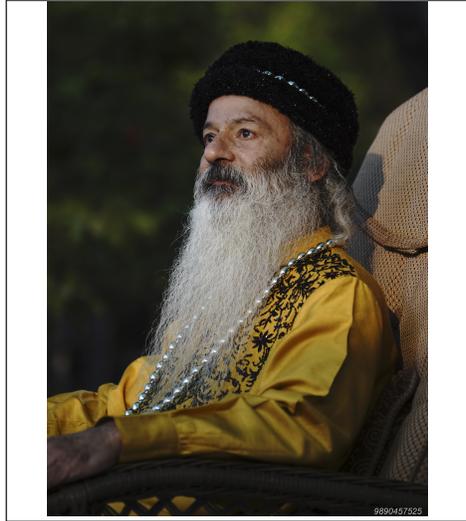
शक्तियों के अलग-अलग बहाव

मूल शक्ति तो एक ही है मगर इसके प्रकट होने के तरीके अलग-अलग हो जाते हैं। हिन्दू धर्म में इसको आदि शक्ति कहा जाता है। जिसे वैज्ञानिक मूल विद्युत ऊर्जा कहते हैं। यही ऊर्जा फिर ताप के रूप में, गर्मी के रूप में, रेडियो तरंगों के रूप में, प्रकाश के रूप में, एक्सरे के रूप में बहुत-बहुत प्रकार इसके संभव हैं। सैकड़ों प्रकार की वेव्स का पता चला लेकिन मूल रूप से वेव्स बस वेव्स ही हैं- तरंग। वेव लेंग्थ अलग-अलग हैं और कोई डिफरेंस नहीं है। उसी वेव लेंग्थ में जरा सा फर्क पड़ जाए तो प्रकाश का रंग बदल जाता है। और अगर बदलता जाए तो प्रकाश से वह **इनफ्रा-रेड** बन जाता है। ऊपर की तरफ बढ़ जाएं तो प्रकाश **अल्ट्रावायलेट** बन जाता है। कॉस्मिक वेव्स तक चली जाती है बात, सिर्फ वेव लेंग्थ का फर्क। मैनिफेस्टेशन में जरा सा अन्तर कितना गुण धर्म का फर्क हो गया। ठीक इसी प्रकार हमारी जो जीवन ऊर्जा है इसके भांति-भांति के मैनीफेस्टेशन हैं। प्रकट और अप्रकट रूप एक ही है। अगर प्रकट होगी तो जिस उपकरण के थ्रू बहेगी वैसा ही रूप धारण हो जाएगा। यह जो मैंने क्लासीफिकेशन किया था- इसको बहुत रिजिडली मत लीजिएगा। क्योंकि किसी चीज को समझाने के लिए उसको हिस्सों में बांटना पड़ता है। वास्तव में वह कामचलाऊ वर्गीकरण होता है। कई प्रकार से उसी बात को कहा जा सकता है।

उदाहरण के लिए मैंने आपसे पूछा कि बुद्धा हॉल में कितने प्रकार के लोग थे? कोई भी उत्तर दे सकता है कि दो प्रकार के- स्त्री और पुरुष। ठीक है उसका उत्तर भी। किसी अन्य व्यक्ति से पूछें कि कितने प्रकार के व्यक्ति थे बुद्धा हॉल में? वह कहे तीन प्रकार के- वृद्ध, युवा और बच्चे। इसका वर्गीकरण भी ठीक है, गलत कुछ नहीं है। किसी और से पूछें, वह कहे- मोटे, लम्बे, पतले, छोटे, यह भी ठीक है। कोई और कह दे दाढ़ी वाले, बिना दाढ़ी वाले, बाल वाले, बिना बाल वाले, टोपीधारी, पगड़ीधारी, पटकाधारी, गोरे, काले दांत वाले, बिना दांत वाले, नकली दांत वाले कई प्रकार से क्लासीफाई कर सकते हैं। कपड़ों के आधार पर कर सकते हैं- मैरून गाउन वाले, गेरुवा गाउन वाले, लाल गाउन वाले। जिस व्यक्ति को पता न हो वह तो कन्फ्यूज हो जाएगा कि दस लोगों से पूछा, दसों ने अलग-अलग बातें बताईं। ये लोग पागल हैं क्या? क्लासीफिकेशन तो एक ही होना चाहिए। नहीं, ऐसा नहीं है। क्लासीफिकेशन अलग-अलग दृष्टिकोण से हो सकता है। काफी डिफरेंट हो जाएगा उसके अनुसार उसमें गलत कुछ भी नहीं है; वह

भी सही है। यह भी सही है।

सामान्यतः हमारे मन में एक धारणा है, एक कथा, एक फिक्शन कि सत्य एक ही होता है। सोचिए आप जरा, आपके मन में भी यही धारणा होगी। दिस इज टोटल फिक्शन। सच एक ही हो सकता है। अगर एक से ज्यादा कुछ नजर आ रहा है तो एक तो झूठा है, क्योंकि सच एक ही हो सकता है, ऐसा हमारा गहन अंधविश्वास है। अभी जो मैंने उदाहरण दिया एक वर्गीकरण का कि सभी सही हैं लेकिन और भी प्रकार हो सकते हैं जो हमें नहीं पता। कोई यह भी कह सकता है कि बुद्धा हॉल में तो एक प्रकार के लोग थे सब ओशो प्रेमी आध्यात्मिक साधक। उसकी बात भी ठीक है। उसने वर्गीकरण किया ही नहीं। एक ही प्रकार उसने कहा वह भी ठीक है अपने तरीके से। एक दूसरे ढंग से इसी बात को समझाना चाहूंगा- मेडिकल टर्मिनोलॉजी में।

जब चिकित्सा शास्त्र विकसित हुआ तो सबसे पहले भौतिक अंग, फिजिकल बॉडी, धीरे-धीरे फिजियोलॉजी का विकास हुआ। क्रमशः धीरे-धीरे केमिकल स्ट्रक्चर पर पहुंचे। खासकर उसमें हार्मोंस, न्यूरो ट्रांसमिटर्स ये केमिकल्स हैं। रसायन बहुत सूक्ष्म मात्रा में, अति सूक्ष्म मात्रा में लेकिन इनका प्रभाव बड़ा अद्‌भुत है। शरीर के अंग तो स्पष्ट हैं- दिखाई देते हैं, उनका काम और फिजियोलॉजी आसानी से समझ में आ गई। जब इन सूक्ष्म रसायनों का पता चला और उनके प्रभाव का तो आश्चर्य हुआ कि इतनी छोटी मात्रा में, एक ग्राम और उसका भी एक हजारवां हिस्सा होता है मिली ग्राम, और मिली ग्राम का भी हजारवां हिस्सा माइक्रो ग्राम, उसके भी और छोटे हिस्से उतनी ही छोटी सी मात्रा में वे थायरायड हार्मोन हैं; पूरे शरीर को बदल कर रख देता है। इतनी छोटी मात्रा! जरा सा वह एड्रिनैलिन हार्मोन छूट जाएगा शरीर में, तो क्रोध और भय से भर जाएंगे। हमारी सारी की सारी भावनाएं उसी से संचालित होती हैं। सेक्स हार्मोंस हैं, जरा सी मात्रा बहुत सूक्ष्म मात्रा है, हमारी भावना उस प्रकार की हो जाएगी। इसका उलटा भी किया जा सकता है, इसको रोका जा सकता है। एड्रिनैलिन को रोकने का उपाय किया जा सकता है। और तब इसके भीतर भय के जो-जो लक्षण थे वे कोई भी पैदा नहीं होंगे। भय से ब्लड प्रेशर बढ़ा जा रहा था, पसीना आ रहा था, मांसपेशियों का रक्त संचार बढ़ गया, आंख लाल हो गई, लड़ने मारने को या भागने को तैयार हो गया, ये सारे के सारे लक्षण जो पैदा हुए थे- एड्रिनैलिन की अति सूक्ष्म मात्रा से हुए थे। इसके उलटे पदार्थ भी खोज लिए गए हैं जो इसके प्रभाव को रोक सकते हैं। अगर हार्ट बीट तेज नहीं होगा तो ब्लड प्रेशर नहीं बढ़ेगा, अगर पसीना नहीं

आएगा, मांसपेशियों का रक्त संचार नहीं बढ़ेगा। हमारी जितनी भी भावनाएं हैं, जिनमें मैंने एक-दो उदाहरण दिए कामवासना, भय और क्रोध का। ठीक इसी प्रकार सारी की सारी भावनाएं किन्हीं केमिकल के द्वारा संचालित होती हैं। कुछ का पता चल चुका है और आगे भविष्य में कुछ का पता चल जाएगा। और इनको बाहर से कंट्रोल करने का भी उपाय हो सकेगा। अभी प्रकृति ने भीतर ही भीतर उपाय किया है। हमारे अन्दर एक पूरी केमिस्ट्री की फैक्ट्री है। जब जरूरत पड़ती है तब उस प्रकार के हार्मोंस बनने शुरू हो जाते हैं। इसमें जरा सी कमी या ज्यादति हो जाए तो सारी फिजियोलॉजी गड़बड़ा जाती है।

दो प्रकार के हार्मोंस हमेशा बनते हैं एक-दूसरे के विपरित प्रभाव वाले। वे एक दूसरे को बैलेंस करते रहते हैं। समझो एक हार्मोन है इंसुलिन भूख को बढ़ा रहा है, ग्लूकोज लेवेल को कम कर रहा है। और उसका एक उल्टा हार्मोन है- ग्लाइकोजेन। वह इसका बिल्कुल उल्टा काम कर रहा है, ब्लड शुगर को बढ़ा रहा है, भूख को घटा रहा है। भीतर दोनों का बैलेंस चलता रहता है समानुसार। इसमें जरा सा भी कुछ गड़बड़ हो गई तो बीमारी हो जाएगी। जरा इंसुलिन की कमी हो गई डायबिटीज हो जाएगी। जरा सा थाइरॉयड हार्मोन ज्यादा निकलने लगा शरीर का वजन एकदम कम हो जाएगा। भूख लगेगी, खाना खूब खाएगा लेकिन रहेगा बिल्कुल दुबला-पतला। और जरा सा थाइरॉयड की कमी हो गई तो भूख खत्म हो जाएगी, खाना कम हो जाएगा। खाना कम खाएगा लेकिन मोटा होता जाएगा। सूजन आती जाएगी। इतनी छोटी मात्रा याद रखना, माइक्रो ग्राम, मिली ग्राम का भी और हजारवां हिस्सा, पूरी केमिस्ट्री पूरी फिजियोलॉजी इकोनॉमी को बदलकर रख देगा।

तो हमारी जितनी भी भावनाएं हैं वे मूलरूप से रसायन से संबंधित हैं। ओशो ने 'जिन खोजा तिन पाइयां' नामक प्रवचनमाला में सात शरीरों का जिक्र किया है। पहला तो स्थूल शरीर (फिजिकल बॉडी) जिसको हम सब जानते ही हैं। दूसरा उन्होंने कहा इथरिक बॉडी या भाव शरीर। भाव शरीर को आधुनिक शब्दावली में हम कह सकते हैं- केमिकल बॉडी हार्मोनल बॉडी। विज्ञान इतना विकसित हो गया है फिर भी चीजें स्पष्ट नहीं हुई हैं। बहुत कुछ स्पष्ट होने को बाकी है। एक केमिकल स्ट्रक्चर का एक भारी जाल है, वहां से सब कुछ संचालित हो रहा है। सारी भावनाएं उसी के कंट्रोल में है। जरा सा उस में कुछ कमी हो जाती है, ज्यादति हो जाती है, सारे भाव परिवर्तन हो जाते हैं। यहां पर एक बात और बता दूं, कल मैंने कहा था कि जितने स्थूल तल पर हम आएंगे उतनी

ही द्वंद्वात्मक चीजें होंगी। उसके विपरित में परिवर्तित हो जाएंगी। एक छोटे से उदाहरण से समझना- जिनको 35-40 साल में डायबिटीज होती है, वे अक्सर बड़े बलिष्ठ किस्म के लोग होते हैं। स्वामी विवेकानन्द की फोटो आपने देखी होगी- पहलवान किस्म के, बड़े मस्कुलर, तोंद वाले। ये वे लोग हैं जिनके अन्दर इंसुलिन ज्यादा मात्रा में बन रही थी। इनकी भूख तेज थी, ओर जो भी खाते थे पूरी तरह बॉडी में वह डिपॉजिट होता जाता था। सामान्यत: हम इस प्रकार के लोगों को खूब स्वस्थ समझते हैं, लेकिन वे स्वस्थ नहीं हैं। ये पोटेंशियल डायबिटिक हैं। इनको टाईप-टू डायबिटीज हो गई है, एक उम्र के बाद।

विवेकानन्द के जमाने में इंसुलिन नहीं थी। 36 साल में चल बसे। उस समय ईलाज नहीं था। उस समय सभी डायबिटीज के मरीज कुछ ही उम्र में मर जाते थे। लेकिन याद रखना डायबिटीज होने से पहले वे बहुत ही बलिष्ठ और बलशाली शरीर के मालिक दिखाई देंगें। अक्सर हम कहेंगे बहुत हेल्दी व्यक्ति हैं ये। हेल्दी नहीं बल्कि यह एक बहुत बड़ी बीमारी की तैयार चल रही है। उसके भीतर इंसुलिन अभी ओवर क्रिएशन हो रहा है। जल्दी ही उसकी ग्लैंड चुक जाएगी। इंसुलिन बनाने की क्षमता उसकी खत्म होती जा रही है, बहुत ज्यादा ओवर वर्क कर रही है उसकी पैंक्रियाटिक ग्लैंड। बाद में इंसुलिन की कमी हो जाएगी। तो जीवन के प्रथम आधे हिस्से में बहुत ज्यादा इंसुलिन क्रिएट हुई, अब बाद वाले हिस्से में कमी पड़ जाएगी। इससे आप समझना क्यों द्वंद्वात्मक चीजें हैं बाहर की दुनिया में? अगर एक चीज ज्यादा हो गई है, ज्यादा ही उपयोग हो रही है, तो एक दिन वह चुक जाएगी, खत्म हो जाएगी, खर्च हो जाएगी, इसकी कमी पड़ जाएगी। सारी चीजें द्वंद्वात्मक हैं। वह जो क्रोध से भरा हुआ व्यक्ति है उसके अन्दर एक खास प्रकार के केमिकल्स निकले हैं। बहुत गुस्से में है वह, थोड़ा धीरज रखना केमिकल्स ज्यादा देर टिकने वाले नहीं हैं। उसको डेस्ट्रॉय करने वाले केमिकल्स भी उसके शरीर में शुरू हो गए हैं, जो थोड़ी ही देर में क्रोध वाले केमिकल्स खत्म कर देंगे। तब वह आदमी बिल्कुल उल्टी भावदशा में पहुंच जाएगा। आपसे माफी मांग रहा होगा कि गल्ती हो गयी, इस पर भी ज्यादा भरोसा मत करना, ये भी केमिकल इफेक्ट है। थोड़ी देर में यह भी चुक जाएगा, फिर किसी बात पर वह भड़क जाएगा। काश, हमें समझ आ जाए कि हमारे भीतर केमिकल्स का खेल चल रहा है, हम बड़े मजे से फिर साक्षी हो जाएंगे। अभी हम इसमें इन्वॉल्व हो जाते हैं। हम समझते हैं कि हम ही कर रहे हैं। यह मेरी भावना है, फिर आपको समझ में आएगा कि भावना कुछ भी नहीं है, यह तो इंजेक्शन लगवाकर भी आपसे करवा सकते हैं। इसमें कुछ

आपकी भावना नहीं है, एक इंजेक्शन लगाओ और आप भड़क उठोगे, आग बबूला हो जाओगे। दूसरा इंजेक्शन लगाओ आप एकदम शांत हो जाओगे। इसमें न आपकी शांति है न आपका क्रोध था। कुछ भी नहीं है। काश, यह समझ में आ जाए फिर हम बड़ी आसानी से दूरी स्थापित कर सकते हैं, हम साक्षी हो सकते हैं। फिर विज्ञान की और खोजें हुईं, इस बात का पता लगा कि ये हार्मोनल ग्लैंड्स कैसे फंक्शन करते हैं। इस सारी ग्लैंड्स की रानी ग्रन्थि है, इसका नाम है पिट्यूटरी। वहां से केमिकल आदेश निकलते हैं, फिर और पता चला कि पिट्यूटरी को जो आदेश मिलते हैं, वे हाइपोथैलेमस नाम की ग्रन्थि से मिलते हैं। बहुत ही छोटी सी ग्रन्थि है, वहां से कुछ केमिकल्स निकलते हैं वे ऑर्डर देते हैं, पिट्यूटरी को। फिर पिट्यूटरी से आदेश निकलते हैं वे भी केमिकल फॉर्म में जाते हैं, **स्टीमुलेटिम यटीट** हार्मोंस उनको कहते हैं, फिर वे जाकर रियल जो **एंडोक्राइन ग्लैंड्स** हैं उनको जाकर संदेश देते हैं कि क्या करना है? फिर वहां से जो हार्मोंस निकलते हैं, वे हमारी फिजियोलॉजी को इफेक्ट करते हैं। फिर हमारी भावनाएं क्रम में रूपांतरित होती हैं। **हाइपोथैलमस** को जो संदेश आते हैं, वे आते हैं- इलेक्ट्रीकल वेव्स के रूप में। मस्तिष्क की कभी भी इलेक्ट्रॉईल से **फेलोग्राफी** की जाए, ई.ई.जी. लिया जाए, वहां हमेशा वेव्स बनती रहती हैं। मुख्य रूप से चार प्रकार की वेव्स आइडेंटीफाई की गई हैं अभी तक। एक विद्युत एनर्जी है- यह विद्युत एनर्जी किसी **हाइपोथैलमस** को बताती है कि क्या करना है। फिर वहां से केमिकल फंक्शन शुरू हो जाता है, फिर केमिकल से फिजियोलॉजिकल फंक्शन शुरू हो जाता है। अब इलेक्ट्रिकल एनर्जी से और सूक्ष्म क्या है, जो इसको प्रभावित करता है? वे हैं हमारे विचार। पहले विचार के रूप में कोई चीज आती है, वह एक खास प्रकार के विद्युत पैटर्न को जन्म देती है। क्योंकि यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो गई है कि चार प्रकार की वेव्स बनती हैं। दिन के जागरण के समय बीटा वेव्स बनती हैं। ध्यान अथवा सम्मोहन अथवा तल्लीनता की अवस्था में अल्फा वेव्स बनते हैं। स्वप्न में, नींद में, थीटा वेव्स बनती हैं। बहुत गहरी नींद में डेल्टा वेव्स बनती हैं। तो ये विचारों से संबंधित हैं, विचार इनको प्रभावित करते हैं।

जब आप चंचल विचारों की अवस्था में हैं, तब अलग प्रकार की इलेक्ट्रिकल फंक्शन ब्रेन पर हो रही है। जब आप किसी कार्य में तल्लीन हैं तो अलग प्रकार की वेव्स बनने लगीं। अभी तक विचारों को वैज्ञानिक अच्छी तरह से नहीं पकड़ पाए हैं, कि वे क्या हैं? कैसे हैं? शायद भविष्य में और सूक्ष्म उपकरण बन जाने पर उनकी भी पकड़ आ जाएगी। अभी तक तीन चीजें तो बहुत स्पष्ट हो गयी हैं- एनाटॉमी, फिजियोलॉजी से शरीर का काफी कुछ स्पष्ट

है। हार्मोनल स्ट्रक्चर इसके पीछे का, काफी कुछ पता चल चुका है, लेकिन अभी भी काफी रहस्यमय है। इसके पीछे इलेक्ट्रिकल पैटर्न है, कुछ-कुछ ज्ञान इसका भी हो गया। बहुत ज्यादा तो नहीं पता, लेकिन इतना तो पता हो गया कि पहले इलेक्टिकल वेव्स आती हैं फिर हाइपोथैलियम, लोमस, पिट्यूटरी और सारी एंडोक्राइन ग्लैंड्स को आदेश मिलता है कि इलेक्ट्रीकल्स वेव्स विचार से प्रभावित होती हैं, अभी तक विचार के ऊपर विज्ञान ज्यादा नहीं पहुंच पाया। अभी पकड़ के बाहर है, अति सूक्ष्म मामला है।

ओशो ने 'जिन खोजा तिन पाइयां' में जिन सात शरीरों की चर्चा की है उनको इस कॉन्टेक्स्ट में समझें तो बिल्कुल आपस में मैचिंग लगती है। ओशो ने कहा- पहला शरीर है स्थूल शरीर फिजिकल बॉडी। दूसरा है- भाव शरीर स्थूल से थोड़ा ज्यादा सूक्ष्म, अंग्रेजी में उन्होंने इथरिक बॉडी कहा है भाव शरीर को। तीसरा है- एस्ट्रल बॉडी, सूक्ष्म शरीर या इलेक्ट्रीकल बॉडी या एनर्जी बॉडी। तो सबसे पहला स्थूल, दूसरा भाव, तीसरा सूक्ष्म। सर्वसार उपनिषद् की भाषा में कहें तो उसमें समझाते हुए ओशो ने स्थूल शरीर को अन्नमय कोष कहा है। और एस्ट्रल बॉडी को कहा है प्राणमय कोष। हम चाहें तो इसे प्राण शक्ति कह लें। इलेक्ट्रिकल एनर्जी कह लें, यह प्राणमय कोष है। इससे सूक्ष्म है उपनिषद् की भाषा में मनोमय कोष, 'जिन खोजा तिन पाइयां' में जिसको

ओशो ने कहा है– मेंटल बॉडी, मनस शरीर; इनको पर्यायवाची समझना, तीनों शब्दों को, मनस शरीर या मेंटल बॉडी या मनोमय कोष। बाकी के तीन शरीर पशुओं-पक्षियों के पास भी हैं। मनुष्य का डिफरेन्सियेशन यहां से शुरू होता है, और उसके पास मनस शरीर बहुत सक्रिय है। पशु-पक्षियों के पास मनस शरीर अभी सूक्ष्म अवस्था में है। उन्हें उसका कुछ पता नहीं। बाकी इलेक्ट्रीकल बॉडी उनकी भी है, केमिकल बॉडी है, फिजिकल बॉडी है। मन से ही मनुष्य शब्द बना है। अंग्रेजी का ह्यूमन बना है, वह भी मन से ही बना है। मनुष्य की खूबी है कि मन उसके पास काफी प्रगाढ़ है। तो ये चार प्रकार के शरीर आप इस क्रम में समझना– विचार सर्वाधिक सूक्ष्म हैं, फिर वे प्राण शक्ति से जुड़कर फिर भाव का रूप ले लेते हैं। केमिकल स्ट्रक्चर में आ जाते हैं। फिर भावनाएं हमारी फिजियोलॉजी और एनाटॉमी को प्रभावित कर देती हैं, हमारे क्रम में और शरीर में बहुत स्थूल रूप से फिर चीजें प्रकट होती हैं। तो आज जो चीज विचार के रूप में मौजूद है, जल्द ही वह मैनिफेस्टेशन की तरफ जा रही है। बीज विकसित होकर वृक्ष बनेगा।

विचार से और सूक्ष्म है इच्छा। इसकी पहले चर्चा हो चुकी है। संकल्प, विल पावर। अभी विचार भी नहीं बना बिल्कुल अंधेरे में ही है सब। विचार अभी तक विज्ञान की प्रयोगशालाओं में पकड़ नहीं आया लेकिन हम खुद तो पकड़ ही सकते हैं अपने भीतर विचार को। हो सकता है आगे भविष्य में वैज्ञानिक उपकरण भी बन जाएं विचार पकड़ने के। कम से कम हम तो अपने भीतर पकड़ ही सकते हैं, हम तो जानते हैं कि विचार है। यद्यपि कोई एक्सरे या एम.आर.आई. नहीं बताती की विचार है, लेकिन हमको पता है कि विचार है। अति सूक्ष्म है। इससे और सूक्ष्म है हमारी कामना। उसके पीछे फिर दिव्य शक्ति है। इनसे संबंधित बीमारियां हैं, इस पूरे सिस्टम में जो एनर्जी का अवतरण हो रहा है सूक्ष्म से स्थूल की तरफ, अगर कहीं कोई ब्लॉकेज आता है, कोई रुकावट या बाधा पड़ती है, तो उस तल से बीमारी की शुरुआत हो जाती है। कहीं कुछ गड़बड़ हो गयी इस पूरे सिस्टम में, कहीं भी हो सकती है, कामना से ही हो सकती है शुरुआत बीमारी की, भाव में हो सकती है, स्थूल शरीर में हो सकती है, तो बीमारियां कई प्रकार की हैं, एक प्रकार की नहीं हैं। अभी तक जो मेडिकल साईंस डेवलप हुआ है, वह सब चीज को बहुत स्थूल रूप से मानकर चल रहा है। ये सब चीजें बस बाहर से ही संचालित हैं, कि बैक्टेरिया आ गया था इसलिए बीमारी हो गयी। कि चोट लग गयी थी इससे घाव हो गया। खाने में प्रोटीन की कमी हो गयी इससे बीमारी

हो गयी। बहुत चीजों को फिजिकल और मेडिकल रूप में मान रहे हैं। शुरुआत में आज से 50-60 साल पहले तो बिल्कुल फिजिकल ही मान रहे थे सब चीजों को। पिछले 50-60 साल में जैसे-जैसे अंत:स्रावी ग्रंथियों का पता चला, अब धीरे-धीरे केमिकल पर ज्यादा नजर चली गयी। धीरे-धीरे मनोविज्ञान भी पिछली सदी में विकसित हुआ। विचार के तल पर, भाव के तल पर, बीमारियों की पकड़ आनी शुरू हुई। पी.एल.आर. की प्रोसेस से पता चला की बहुत सी बीमारियां पिछले जन्मों से चली आई हैं। मन में अभी के किसी घटनाओं से उसका कोई संबंध ही नहीं है। वह कोई बहुत पुरानी स्मृति मन में बैठी है, उसकी वजह से तकलीफ हो रही है। इसलिए दुनिया में इतने प्रकार की पैथियां हैं, क्योंकि कई प्रकार की बीमारियां हैं। हो सकता है बीमारी के लक्षण दस लोगों में एक से हों। लेकिन हो सकता है उन दसों के कारण बिल्कुल अलग-अलग हों। वे डिफरेंट लेवेल की बीमारियां हैं। इसलिए उनको जो ठीक करने की प्रोसेस होगी वह एक ही पैथी सब पर काम नहीं करेगी। इसलिए हम देखते हैं दुनिया में कि इतने प्रकार की पैथियां हैं करीब-करीब किसी न किसी को फायदा पहुंचाती हैं। ऐसी कोई भी पैथी नहीं बन पाई जो सबको फायदा पहुंचाए। क्योंकि हम पकड़ने की कोशिश कर रहे हैं बाहर के लक्षणों से। डायग्नोसिस कर रहे है कि बीमारी क्या है? उसके मल्टीपल डायमेंशन हो सकते हैं, जहां से बीमारी की शुरुआत हुई। जब तक हम उस तल पर कुछ न करें, तो बहुत बड़ा परिवर्तन नहीं कर पाएंगे। तो ठीक है जो बीमारियां न्यूट्रीशन से थीं, उनको उचित आहार देने से ठीक हो जाएंगी। कोई बीमारी बैक्टीरिया के वजह से थी तो इन्फेक्शन का उपाय करने से वह ठीक हो जाएगी। लेकिन बहुत बड़ी बीमारियों की संख्या छूट जाती है, जो इस कैटेगरी में नहीं आतीं। और उसके लिए निश्चित् ही कोई और तल पर कार्य करना होगा। तो जिस प्रकार की पैथियां आज दुनिया में चल रही हैं, उस संबंध में एक संक्षिप्त बात कहना चाहूंगा- हम जिस ब्रह्म शक्ति की बात कर रहे थे, दिव्य चिकित्सा (डिवाइन हिलिंग) और रेकी जैसी पद्धतियां, इन पर डिवाइन एनर्जी काम करती है, वहां से शुरुआत होती है। जिसको शिव चिकित्सा कहा जाता है इसका आजकल काफी प्रचलन हो रहा है। वह दिव्य शक्ति पर काम कर रही है, उस तल से। तंत्र-मंत्र और झाड़-फूंक जो हैं, वे मन के तल पर, मन की शक्ति पर, विचार शक्ति पर काम करते हैं। अगर एक विचार भीतर बिठा दिया जाए और मंत्र बन जाए, रेपिटिशन, बार-बार, बार-बार उसका भी असर है। लेकिन याद रखना, असर वहीं होगा, जो

वैचारिक तल पर बीमारी से पीड़ित था। उसके लिए इसका विपरित विचार पकड़ा दिया जाए। समझो किसी बाबा जी ने आशीर्वाद दे दिया और कह दिया कि अब तुम ठीक हो जाओगे, यह रहा मंत्र और इसको दोहराते रहना। उसके मन में जो विचार था कि मैं बीमार हूं, अब विपरित विचार आ गया कि मैं ठीक हो रहा हूं।

इमाइल कुए ने पिछली सदी में हजारों लोगों को ठीक किया फ्रांस में, दुनिया भर से लोग उसके पास पहुंचते थे और वह एक ही बात सबको कहता था कि तुम भाव करो, विचार करो, बार-बार रिपीट करो। घर में कई जगह लिख-लिख कर लगा लो, आइने पर चिपका दो, टेबल पर चिपका दो, कि मैं ठीक हो रहा हूं (आई ऐम गेटिंग बेटर)। तुम्हारी नजर पड़ेगी बार-बार उस पर और पुनरावृत्ति हो जाएगी। हजारों लोग ठीक हो गये। ऐसी-ऐसी बीमारियों वाले ठीक हो गए, जो किसी चीज से ठीक नहीं हो रहे थे। आजकल एक डायलॉग बड़ा फेमस हो रहा है- थ्री इडियट्स फिल्म का- 'आल इज वेल' इसको कोई रिपीट करता रहे तो मैं मानता हूं कि 33 प्रतिशत लोगों पर एकदम जादुई असर हो जाएगा। क्योंकि वे मान रहे थे, नथिंग इज वेल। वह भी एक विचार था, तुम उल्टा विचार डाल लो 'एवरीथिंग गेटिंग ओके' कीप ऑन रिपीटिंग, बहुत चीजें बदल जाएंगी। मंत्र का मतलब है कोई विचार जिसको हम रिपीट कर रहे हैं बार-बार। उस विचार का अपना कुछ असर है। तो तंत्र-मंत्र, झाड़-फूंक, ये हमारे विचार को बदल देते हैं और हमारे भीतर एक पॉजिटिव विचार घुसा देते हैं और वह पॉजिटिव विचार अपना असर दिखाता है।

इसके बाद आता है- भाव शक्ति (पावर ऑफ इमोशन्स)। यहां पर सम्मोहन बहुत उपयोगी है। कोई व्यक्ति अपने ही भीतर एक भावना बनाता है, धारणा बनाता है और उसकी वह भावना काम करने लगती है। विजुअलाईजेशन, पतंजलि जिसको धारणा कहते हैं, वह पॉजिटिव सेल्फ हिप्नोसिस है। याद रखना, निगेटिव हिप्नोसिस से हम बीमार हो सकते हैं। एक नकारात्मक धारणा किसी ने पकड़ ली, उसके कारण वह बीमार हो रहा है। काश हम उसकी धारणा को बदल सकें और एक विधायक धारणा को पकड़ सकें तो चीजें बदल जाएंगी। और न केवल शरीर के तल पर बल्कि बहुत तलों पर बदल जाएंगी। एक बच्चे को उसके माता-पिता, शिक्षक डांटते-डंपटते रहें कि तुम नालायक हो, बेवकूफ हो, किसी काम के नहीं, तुम से कुछ न हो सकेगा। अगर उस बच्चे ने यह धारणा पकड़ ली तो ऐसा ही हो जाएगा। अगर उसको

एक विपरीत धारणा पकड़वा सकें कि तुम बहुत इंटेलिजेंट हो, तुम सबकुछ कर सकते हो, तुम बहुत शक्तिशाली हो, मुश्किल पड़ेगी उसकी बचपन की धारणा के खिलाफ कुछ घुसाना लेकिन अगर वह कोऑपरेट करे तो यह बात उसके भीतर डाली जा सकती है। और तब इस हिप्नोसिस का, इस सम्मोहन का बहुत सुन्दर परिणाम आ सकता है। तो सम्मोहन और प्राणिक चिकित्सा को प्राणिक हीलिंग कहते हैं। यह भाव तल पर काम करती है। इसके बाद प्राण शक्ति है (वाइटल फोर्स) उसमें काम करने वाली पैथी में विशेष हैं- योगा, विभिन्न प्रकार के

यौगिक एक्सरसाईज, मुद्रा चिकित्सा, प्राकृतिक चिकित्सा, नैचुरोपैथी और होमियोपैथी- ये चारों पद्धतियां हमारे वाइटल फोर्स को प्रभावित करती हैं। याद रखना होमियोपैथी में कोई केमिकल नहीं होता, इट इज प्योर एल्कोहल। 100 प्रतिशत प्योर एल्कोहल लेकिन काम करती है। 40-45 प्रतिशत लोग ठीक हो जाते हैं। वाइटल फोर्स को प्रभावित कर रही हैं। अगर हम केमिकल ढंग से देखने जाएंगे तो लगेगा यह कैसे काम कर रही है जिसमें दवाई कुछ है ही नहीं फिर भी काम रही है। नैचुरोपैथी खासकर मिट्टी की पट्टी बांधना, पेट पर टप बाथ लेना,

नाभि तक ठंडे पानी में डुबा कर रखना, शरीर को गर्म पानी में टब

बाथ लेना। ये सब नाभि चक्र को, मणिपुर चक्र को प्रभावित कर रहे हैं। याद रखना, इसमें मिट्टी का इतना रोल नहीं है और न टब के पानी का रोल है, लेकिन नाभि चक्र प्रभावित हो रहा है और वहां से हीलिंग शुरू हो जाएगी। तो ये चार पद्धतियां- योगा, नैचुरोपैथी, होमियोपैथी और मुद्रा चिकित्सा ये हमारे वाइटल फोर्स को प्रभावित करती हैं। वहां से हीलिंग करती हैं। फिर है हमारी सेक्सुअल एनर्जी या इसको और ठीक शब्द देना हो तो कहना चाहिए इन्द्रिक शक्ति। सेक्सुअल कहने पर सिर्फ एक ही इंद्री का ख्याल आता है। इन्द्रिक शक्ति कहें तो उसमें हमारी सभी इन्द्रियां शामिल हो जाती हैं। इस पर जो पैथी काम कर सकती हैं, वे हैं- रंग चिकित्सा, कलर थेरेपी, ऐरोमा थेरेपी, सुगंध चिकित्सा, संगीत चिकित्सा- इन पर खूब काम चल रहा है। भांति-भांति की ट्यून और ध्वनि सुनने से क्या होता है? काफी कुछ होता है। खास प्रकार की खुशबू, खास प्रकार का रंग प्रभावित करता है। बहुत लोग हैं जिनकी बीमारियां इस तल से ठीक हो सकती हैं। आज हम चक्रा साउंड मेडिटेशन का उपयोग करेंगे। इसलिए मैं इस कॉन्टेक्स्ट में बता रहा हूं कि ध्वनियों के भी अपने प्रभाव हैं। हीलिंग साउंड्स बीमार करने वाले भी हैं, तो ठीक करने वाले साउंड भी हो सकते हैं। सबसे स्थूल है फिजिकल बॉडी- भौतिक शक्ति। जिसको मैं मस्कुलर पावर कह रहा था उसको भौतिक शक्ति कह लें। फिजिकल पावर यहां पर काम करती है- एलोपैथी, आयुर्वेद, यूनानी चिकित्सा, ऐक्यूप्रेशर, ऐक्यूपंचर को आप गिनिए प्राण शक्ति में जो हमारी इलेक्ट्रिकल बॉडी को प्रभावित करता है। इसलिए ऐक्यूप्रेशर में जो नया बना है इलेक्ट्रिकल ऐक्यूप्रेशर वह और भी ज्यादा इफेक्टिव है। उसमें सुई चुभाकर हल्का करेंट भी दिया जाता है। मैगनेटो थेरेपी को भी आप उसी में एकाउंट करिए प्राणिक चिकित्सा के संग। यहां पर हम एक मैगनेटिक चैंबर बना रहे है; आपने देखा होगा लोहा का पूरा स्ट्रक्चर गड़ाया है, उसकी पूरी दीवार लोहे की है। छत भी लोहे की है। नीचे फ्लोर भी लोहे का है। जमीन के ग्रुप मैगनेटिक फोर्स इसके साथ वह भी मैगनेटाइज्ड हो जाएगा और उसके भीतर एक पूरा लोहे का बैंड लगाएंगे। एक इंच मोटी लोहे की पट्टी, उत्तर दक्षिण दिशा में। इस पर लिटाकर किसी व्यक्ति की बहुत सुन्दर चिकित्सा की जा सकती है। पूरा

का पूरा मैगनेटाइज्ड चैम्बर होगा। याद रखना यह किस पर काम करेगा? जहां प्राणिक ऊर्जा (वाइटल फोर्स) को प्रभावित करना है। विलियम रैंक ने पिछली सदी में इस तरह के चैम्बर बनाए थे। ओशो ने कई प्रवचनों में चर्चा की। जिसको ऑर्गोन एनर्जी नाम दिया था। एक डिब्बे में आदमी को लेटा दिया जाता था, बन्द कर दिया जाता था। बड़े-बड़े टैंक थे, बहुत लोग ठीक हुए। ओशो ने पूना आश्रम में समाधि टैंक बनवाए थे। क्योंकि एक बहुत अद्‌भुत प्रयोग है, करने जैसा। कभी यहां समय आया तो उसका प्रयोग करेंगे। बहुत आसान है बनाना।

भौतिक शक्ति को प्रभावित करने वाली जो पैथियां हैं- उसमें एलोपैथी, आयुर्वेद, यूनानी चिकित्सा, चाईनीज मेडिसिन और ऐक्यूप्रेशर ये बिल्कुल फिजिकल लेवेल पर काम करती हैं। इसलिए दुनिया में इतनी प्रकार की पैथियां प्रचलित हैं। भविष्य में कभी ऐसा दिन आना चाहिए

सौभाग्य का कि हर अस्पताल में सभी सुविधाएं उपलब्ध हों, और मरीज की जांच करके डॉक्टर तय करे कि इसको किस प्रकार की चिकित्सा दी जाए। अभी मरीज खुद ही तय करता है, उस बेचारे को क्या पता। इसके लिए एक्सपर्ट होना चाहिए। सारी जांच-पड़ताल करके, सारी इनवेस्टीगेशन करके तय करें कि कौन सी चिकित्सा उपयोगी होगी। अभी तो अपने-अपने अंधविश्वासों के आधार पर चले जाते हैं इलाज करवाने। जरूरी नहीं है कि हर बार जो बीमारी आ रही है, हो सकता है तुम्हारी बीमारी पहले किसी खास पैथी से ठीक हुई हो और यह जरूरी नहीं है कि जो कल बीमारी आएगी वह भी उसी पैथी से ठीक होगी। वह किसी डिफरेंट लेवेल से आई हुई हो सकती है। तो भविष्य में एक बेहतर मनुष्य हो तो बेहतर अस्पताल भी होने चाहिए जहां सब प्रकार की चिकित्सायें उपलब्ध हों और जहां एक्सपर्ट इंवेस्टीगेट करके बताएं कि किस रोगी को किस पैथी से लाभ होगा।

बारह
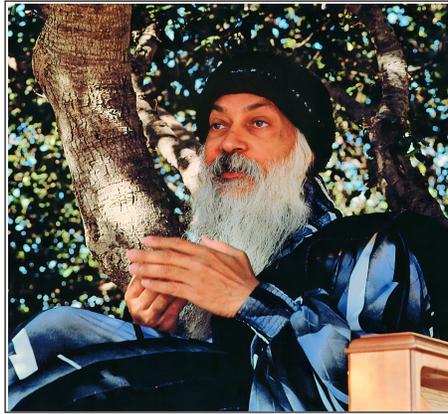
जीवन ऊर्जा के रहस्य

('महावीर वाणी' का एक प्रवचनांश)

–ओशो

'तप' के संबंध में ओशो समझाते हैं- मनुष्य के भीतर जो ऊर्जा है, वह नीचे या ऊपर जा सकती है। जब आप कामवासना से भरे होते हैं तो वह ऊर्जा नीचे जाती है; जब आप आत्मा की खोज से भरे होते हैं तो वह ऊर्जा ऊपर की तरफ जाती है। जब आप जीवन से भरे होते हैं तो वह ऊर्जा भीतर की तरफ जाती है। और भीतर और ऊपर धर्म की दृष्टि में एक ही दिशा के नाम हैं। और जब आप मरण से भरते हैं, मृत्यु निकट आती है तो वह ऊर्जा बाहर जाती है।

दस वर्ष पहले तक, केवल दस वर्ष पहले तक वैज्ञानिक इस बात के लिए राजी नहीं थे कि मृत्यु में कोई ऊर्जा मनुष्य के बाहर जाती है, लेकिन रूस के डेविडोविच किरलियान की फोटोग्राफी ने पूरी धारणा को बदल दिया है।

देह के पास ऊर्जा का वर्तुल

किरलियान ने जीवित व्यक्तियों के चित्र लिए हैं, तो उन चित्रों में शरीर के आसपास ऊर्जा का वर्तुल, एनर्जी फील्ड चित्रों में आता है। हायर सेंसिटिविटी फोटोग्राफी में, बहुत संवेदनशील फोटोग्राफी में आपके आसपास ऊर्जा का एक वर्तुल आता है। लेकिन अगर मरे आदमी का, अभी मर गए आदमी का चित्र लेते हैं तो वर्तुल नहीं आता। ऊर्जा के गुच्छे आदमी से दूर जाते हुए दिखते हैं। ऊर्जा के गुच्छे आदमी से दूर हटते हुए, भागते हुए नजर आते हैं। तीन दिन तक मरे हुए आदमी के शरीर से ऊर्जा के गुच्छे बाहर निकलते रहते हैं। पहले दिन ज्यादा, दूसरे दिन और कम, तीसरे दिन और कम। जब ऊर्जा के गुच्छों का बहिर्गमन पूरी तरह समाप्त हो जाता है, तब आदमी पूरी तरह मरा।

वैज्ञानिक कहते हैं कि जब तक ऊर्जा निकल रही है तब तक उसको पुनः जीवित करने की कोई विधि आज नहीं कल खोजी जा सकेगी।

निजिन्सकी का लेविटेशन

अभी एक बहुत अद्‌भुत नृत्यकार था पश्चिम में– निजिन्सकी। उसका नृत्य असाधारण था, शायद पृथ्वी पर वैसा नृत्यकार इसके पहले नहीं था।

असाधारणता यह थी कि वह अपने नाच में जमीन से इतना ऊपर उठ जाता था जितना कि साधारणतः उठना बहुत मुश्किल है। और इससे भी ज्यादा आश्चर्यजनक यह था कि वह ऊपर से जमीन की तरफ आता था तो इतने स्लोली, इतने धीमे आता था कि जो बहुत हैरानी की बात है। क्योंकि इतने धीमे नहीं आया जा सकता। जमीन का जो खिंचाव है वह उतने धीमे आने की आज्ञा नहीं देता। यह उसका चमत्कारपूर्ण हिस्सा था। उसने विवाह किया, उसकी पत्नी ने जब उसका नृत्य देखा तो वह आश्चर्यचकित हो गयी। वह खुद भी नर्तकी थी।

उसने एक दिन निजिन्सकी को कहा– उसकी पत्नी ने आत्मकथा में लिखा है, मैंने एक दिन अपने पति को कहा– व्हाट ए शेम दैट यू कैन नॉट सी युअरसेल्फ डांसिंग– कैसा दुख कि तुम अपने को नाचते हुए नहीं देख सकते। निजिन्सकी ने कहा– हू सेड, आइ कैन नॉट सी? आइ डू ऑलवेज सी। आइ

ऐम ऑलवेज आउट। आइ मेक माइसेल्फ डान्स फ्रॉम दि आउटसाइड। निजिन्सकी ने कहा– मैं देखता हूं सदा, क्योंकि मैं सदा बाहर होता हूं और मैं बाहर से ही अपने को नाच करवाता हूं। और अगर मैं बाहर नहीं रहता हूं तो मैं इतने ऊपर नहीं जा पाता हूं और अगर मैं बाहर नहीं रहता हूं तो इतने धीमे जमीन पर वापस नहीं लौट पाता हूं। जब मैं भीतर होकर नाचता हूं तो मुझमें वजन होता है, और जब मैं बाहर होकर नाचता हूं तो देह में से वजन खो जाता

है।

अनाहत चक्र का पहला चमत्कारः भारहीनता

योग कहता है– अनाहत चक्र जब भी किसी व्यक्ति का सक्रिय हो जाए, तो जमीन का गुरुत्वाकर्षण उस पर प्रभाव कम कर देता है और विशेष नृत्यों का प्रभाव अनाहत चक्र पर पड़ता है। अनायास ही मालूम होता है कि निजिन्सकी ने नाचते-नाचते अनाहत चक्र को सक्रिय कर लिया।

अनाहत चक्र का दूसरा चमत्कारः अशरीरी अनुभव

अनाहत चक्र की दूसरी खूबी है कि जिस व्यक्ति का अनाहत चक्र सक्रिय हो जाए वह आउट ऑफ बॉडी एक्सपीरिएंस, शरीर के बाहर के अनुभवों में उतर जाता है। वह अपने शरीर के बाहर खड़े होकर देख पाता है। लेकिन जब आप शरीर के बाहर होते हैं, तब जो शरीर

के बाहर होता है, वही आपकी प्राण ऊर्जा है। वही वस्तुतः आप हैं।

वह जो ऊर्जा है उसे ही महावीर ने जीवन-अग्नि कहा है। और उस ऊर्जा को जगाने को ही वैदिक संस्कृति ने यज्ञ कहा है।

गुरुत्वाकर्षण-मुक्त जीवन-ऊर्जा

मृत्यु में ऊर्जा आपके बाहर जा रही है, लेकिन शरीर का वजन कम नहीं होता है। निश्चित ही कोई ऐसी ऊर्जा है जिस पर ग्रैविटेशन का कोई असर नहीं होता। क्योंकि वजन का एक ही अर्थ होता है कि जमीन में जो गुरुत्वाकर्षण है उसका खिंचाव। आपका जितना वजन है, आप भूलकर यह मत समझना कि वह आपका वजन है। वह जमीन के खिंचाव का वजन है। जमीन जितनी ताकत से आपको खींच रही हो, उस ताकत का माप है। अगर आप चांद पर जाएंगे तो आपका वजन छः गुना कम हो जाएगा। क्योंकि चांद छः गुना कम ग्रैविटेशन रखता है। अगर 150 पौंड आपका वजन है तो पच्चीस पौंड चांद पर रह जाएगा। इसे आप ऐसा भी समझ सकते हैं कि अगर आप जमीन पर चार फीट ऊंचे कूद सकते हैं तो चांद पर आप जाकर चौबीस फीट ऊंचे कूद सकेंगे। और जब अंतरिक्ष में यात्री होता है,

अपने यान में, कैप्सूल में— तब उसका कोई वजन नहीं रहता, नो वेट। क्योंकि वहां कोई ग्रैविटेशन नहीं होता। इसलिए यात्री को पट्टों से बांधकर उसकी कुर्सी पर रखना पड़ता है। अगर पट्टा जरा छूट जाए तो जैसे गैसभरा गुब्बारा जाकर ऊपर टकराने लगे, ऐसा वह आदमी टकराने लगेगा क्योंकि उसमें कोई वजन नहीं है जो उसे नीचे खींच सकें। भार जो है वह जमीन के गुरुत्वाकर्षण के कारण है। लेकिन किरलियान के प्रयोगों ने सिद्ध किया है कि आदमी से ऊर्जा तो निकलती है किंतु वजन कम नहीं होता। निश्चित ही उस ऊर्जा पर जमीन के गुरुत्वाकर्षण का कोई प्रभाव न पड़ता होगा। योग के लेविटेशन में जमीन से शरीर को उठाने के प्रयोग में उसी ऊर्जा का उपयोग है।

यज्ञः जीवन-अग्नि से संबंधित

उस ऊर्जा के जग जाने पर जीवन में एक नयी ऊष्मा भर जाती है, एक नया उत्ताप, जो बहुत शीतल है। यही कठिनाई है समझने की, एक नया उत्ताप जो बहुत शीतल है। तो तपस्वी जितना शीतल होता है उतना कोई भी नहीं होता। यद्यपि हम उसे कहते हैं तपस्वी। तपस्वी का अर्थ हुआ कि वह ताप से भरा हुआ है। लेकिन बाहर जितनी जग जाती है यह अग्नि, उतना केन्द्र शीतल हो जाता है। चारों ओर शक्ति जग जाती है, भीतर केन्द्र पर शीतलता छा जाती है।

बाहर अग्नि, भीतर शीतलता

वैज्ञानिक पहले सोचते थे कि यह जो सूर्य है हमारा, यह जलती हुई अग्नि है, उबलती हुई अग्नि। लेकिन अब वैज्ञानिक कहते हैं कि सूर्य अपने केन्द्र पर बिल्कुल शीतल है, दि कोल्डेस्ट स्पॉट इन दि यूनिवर्स, यह बहुत हैरानी की बात है। चारों ओर अग्नि का इतना वर्तुल है, सूर्य अपने केन्द्र पर सर्वाधिक शीतल बिन्दु है। और उसका कारण अब ख्याल में आना शुरू हुआ है। क्योंकि जहां इतनी अग्नि हो, उसको संतुलित करने के लिए इतनी ही गहन शीतलता केन्द्र पर होनी चाहिए, नहीं तो संतुलन टूट जाएगा। ठीक ऐसी ही घटना तपस्वी के जीवन में घटती है। चारों ओर ऊर्जा उत्तप्त हो जाती है, लेकिन उस उत्तप्त ऊर्जा को संतुलित करने के लिए केन्द्र बिल्कुल शीतल हो जाता है। इसलिए तप से भरे व्यक्ति से ज्यादा शीतलता का बिन्दु इस जगत में दूसरा नहीं है, सूर्य भी नहीं। इस जगत में संतुलन अनिवार्य है। असंतुलन में चीजें बिखर जाती हैं।

तपस्वी की जीवन शैली

आपने कभी गर्मी के दिनों में उठ गया बवंडर देखा होगा, धूल का। जब

बवंडर चला जाए तब आप धूल के ऊपर जाना या रेत के पास जाना। तो आप एक बात देखेंगे कि बवंडर चारों तरफ था, बवंडर के निशान चारों तरफ बने हैं, लेकिन बीच में एक बिन्दु है जहां कोई निशान नहीं है। वहां शून्य था। वह बवंडर शून्य की धुरी पर ही घूम रहा था।

बैलगाड़ी चलती है, उसका चाक घूमता है, लेकिन उसकी कील खड़ी रहती है। अब यह बहुत मजे की बात है कि खड़ी हुई कील पर चलते हुए चाक को सहारा है। खड़ी हुई कील पर, ठहरी हुई कील पर, चलते हुए चाक को चलना पड़ता है। अगर कील भी चल जाए तो गाड़ी गिर जाए। विपरीत से संतुलन है। जीवन का सूत्र है– विपरीत के बीच संतुलन।

स्वर्ण की कीमत का राज–

एक अनूठी बात आपको कहूं– चकित होंगे आप जानकर कि काफ्का, किरलियान, विलियम रेक और अनेक वैज्ञानिकों का अनुभव है कि सोना एकमात्र धातु है जो सर्वाधिक प्राण ऊर्जा को अपनी तरफ आकर्षित करता है। और यही सोने का मूल्य है, अन्यथा कोई मूल्य नहीं है।

इसलिए पुराने दिनों में, कोई दस हजार साल पुराने रिकार्ड उपलब्ध हैं, जिनमें सम्राटों ने प्रजा को सोना पहनने की मनाही कर रखी थी। कोई दूसरा आदमी सोना नहीं पहन सकता था, सिर्फ सम्राट पहन सकता था। उसका राज था कि वह सोना पहनकर, और दूसरे लोगों को सोना पहनना रोककर ज्यादा जी सकता था। लोगों की प्राण ऊर्जा को अनजाने अपनी तरफ आकर्षित कर रहा था। जब आप सोने को देखकर आकर्षित होते हैं, तो सिर्फ सोने को देखकर आकर्षित नहीं होते, आपकी प्राण ऊर्जा सोने की तरफ बहनी शुरू हो जाती है, इसलिए आकर्षित होते हैं। इसलिए सम्राटों ने सोने का बड़ा उपयोग किया और आम आदमी को सोना पहनने की मनाही कर दी गयी थी कि कोई आम आदमी सोना नहीं पहन सकेगा। सोना सर्वाधिक खींचता है प्राण ऊर्जा को। यही उसके बेशकीमती होने का राज है।

सात ऊर्जा चक्र, सात सौ बिन्दु

आपके शरीर के आसपास जो आभामंडल निर्मित होता है, वह इस शरीर का रेडिएशन नहीं है, इस शरीर से विकीर्णन नहीं है, वरन् किरलियान ने वक्तव्य दिया है कि 'ऑन दि कॉन्ट्री दिस बॉडी ओनली मिरर्स दि इनर बॉडी' वह जो भीतर का शरीर है, उसके लिए यह सिर्फ दर्पण की तरह बाहर प्रगट कर देती है। इस शरीर के द्वारा वे किरणें नहीं निकल रही हैं, वे किरणें किसी और शरीर के द्वारा निकल रही हैं। इस शरीर से केवल प्रगट होती हैं।

जैसे हमने एक दीया जलाया हो, चारों तरफ एक ट्रांसपेरेंट कांच का घेरा लगा दिया हो, उस कांच के घेरे के बाहर हमें किरणों का वर्तुल दिखाई पड़ेगा। हम शायद सोचें कि वह कांच से निकल रहा है तो गलती है। वह पारदर्शी कांच से निकल जरूर रहा है, लेकिन कांच से आ नहीं रहा है। वह आ रहा है भीतर के दीये से। ऐसे ही, हमारे शरीर से जो ऊर्जा निकलती है वह इस भौतिक शरीर की ऊर्जा नहीं है, क्योंकि मरे हुए आदमी के शरीर में समस्त भौतिक तत्व यही के यही होते हैं, लेकिन ऊर्जा का वर्तुल खो जाता है। उस ऊर्जा के वर्तुल को योग सूक्ष्म शरीर कहता रहा है। और तप के लिए उस सूक्ष्म शरीर पर ही काम करने पड़ते हैं।

'तप'-एनर्जी बॉडी पर काम

लेकिन आमतौर से जिन्हें हम तपस्वी समझते हैं, वे ऐसे लोग हैं जो इस भौतिक शरीर को ही सताने में लगे रहते हैं। इससे कुछ लेना-देना नहीं है। असली काम इस शरीर के भीतर जो दूसरा छिपा हुआ शरीर है– ऊर्जा-शरीर, एनर्जी-बॉडी, उस पर काम का है। और योग ने जिन चक्रों की बात की है, वे इस शरीर में कहीं भी नहीं हैं, वे उस ऊर्जा शरीर में हैं।

इसलिए वैज्ञानिक जब इस शरीर को काटते हैं, तो फिजियोलॉजिस्ट कहते हैं– तुम्हारे चक्र कहीं मिलते नहीं। कहां है अनाहत, कहां है स्वाधिष्ठान, कहां है मणिपुर? कहीं कुछ नहीं मिलता। पूरे शरीर को काटकर देख डालते हैं, चक्र कहीं मिलते नहीं। वे मिलेंगे भी नहीं। वे उस ऊर्जा-शरीर के बिंदु हैं। यद्यपि उन ऊर्जा-शरीर के बिन्दुओं को करेस्पॉन्ड करने वाले, उनके ठीक समतुल इस शरीर में स्थान हैं– लेकिन वे चक्र नहीं हैं।

चक्रः देह में नहीं

जब आप प्रेम से भरते हैं तो हृदय पर हाथ रख लेते हैं। जहां आप हाथ रखे हुए हैं, अगर वैज्ञानिक जांच-पड़ताल, काट-पीट करेगा तो सिवाय पम्प के कुछ नहीं है। रक्त को पंप करने का इन्तजाम भर है वहां, और कुछ भी नहीं है। उसी

से धड़कन चल रही है। पम्पिंग सिस्टम है। इसको बदला जा सकता है।

अब तो हृदय बदला जा सकता है और इसकी जगह पूरा प्लास्टिक का पंप रखा जा सकता है। वह भी इतना ही काम करेगा। बल्कि वैज्ञानिक कहते हैं, जल्दी ही इससे बेहतर काम करेगा। क्योंकि न वह सड़ सकेगा, न गल सकेगा, कुछ भी नहीं। लेकिन एक मजे की बात है कि प्लास्टिक के हृदय में भी हार्ट अटैक होंगे, यह बहुत मजे की बात है। प्लास्टिक के हृदय में हार्ट अटैक नहीं होने चाहिए, क्योंकि प्लास्टिक और हार्ट अटैक का क्या संबंध है? निश्चित ही हार्ट अटैक कहीं और गहरे से आता होगा, नहीं तो प्लास्टिक के हृदय में हार्ट अटैक नहीं हो सकता। प्लास्टिक का हृदय टूट जाए, फूट जाए, चोट खा जाए, यह सब हो सकता है– लेकिन एक प्रेमी मर जाए और हार्ट अटैक हो जाए, यह नहीं हो सकता क्योंकि प्लास्टिक के हृदय को क्या पता चलेगा कि प्रेमी मर गया है। या मर भी जाए तो प्लास्टिक पर उसका क्या परिणाम हो सकता है? कोई भी परिणाम नहीं हो सकता है।

अभी भी जो हृदय आपका धड़क रहा है उस पर कोई परिणाम नहीं होता। उसके पीछे एक दूसरे शरीर में जो हृदय का चक्र है, उस पर परिणाम होता है। लेकिन उसका परिणाम तत्काल इस शरीर पर मिरर होता है, दर्पण की तरह दिखाई पड़ता है।

कान फाड़ने का मतलब

आपने कानफटे साधुओं को देखा होगा। कानफटे साधुओं की बात सुनी होगी, लेकिन कभी ख्याल में न आया होगा कि कान फाड़ने से क्या मतलब हो सकता है? कान फाड़कर वे यौन के बिन्दु को प्रभावित करने की कोशिश में लगे हैं। वह स्पॉट सेंसिटिव है। वह जगह बहुत संवेदनशील है।

आपने कभी ख्याल न किया होगा कि महावीर के कान के नीचे का लम्बा

हिस्सा कंधे को छूता है। बुद्ध का भी छूता है। जैनों के चौबीस तीर्थंकरों का छूता है। तीर्थंकर का वह एक लक्षण समझा जाता था कि उसका कान का हिस्सा इतना लम्बा हो। लेकिन कान का हिस्सा इतना लम्बा हो, उसका अर्थ ही केवल इतना होता है– वह हो या न हो– लम्बे हिस्से का प्रतीक सिर्फ इसलिए है कि इस व्यक्ति की काम ऊर्जा बहुत होगी, सेक्स एनर्जी इस व्यक्ति में बहुत होगी। और यही ऊर्जा रूपांतरित होने वाली है, कुंडलिनी

बनेगी। यही ऊर्जा रूपांतरित होगी, ऊपर जाएगी और तप बनेगी।

वह कान की लम्बाई सिर्फ प्रतीक है, वह इरॉटिक ज़ोन है। वहां से आपके काम की संवेदनशीलता पता चलती है। आपके शरीर पर बहुत से बिन्दु हैं जो काम के लिए संवेदनशील हैं। हर चक्र के आसपास सौ बिन्दु हैं शरीर में।

योगी हृदय की धड़कन बन्द

योगी बहुत दिनों से हृदय की धड़कन को बन्द करने में समर्थ रहे हैं, फिर भी मर नहीं जाते। क्योंकि जीवन का स्रोत कहीं गहरे में है। इसलिए हृदय की धड़कन भी बन्द हो जाती है, तो भी जीवन धड़कता रहता है। हालांकि पकड़ा नहीं जा सकता। फिर कोई यंत्र नहीं पकड़ पाते कि जीवन कहां धड़क रहा है। यह जो हमारा शरीर है, सिर्फ उपकरण है। इस शरीर के भीतर छिपा हुआ और इस शरीर के बाहर भी चारों तरफ इसे घेरे हुए जो आभामंडल है, वह हमारा वास्तविक शरीर है। वही हमारा तप-शरीर है। उस पर जो केन्द्र हैं उन पर ही काम है तप का; सारी की सारी पद्धति, टेक्नोलॉजी, तकनीक उन शरीर के बिंदुओं पर काम करने की है।

सात सौ बिन्दु

चाइनीज ऐक्युपंक्चर की विधि मानती है कि शरीर में कोई सात सौ बिन्दु हैं, जहां वह ऊर्जा-शरीर इस शरीर को स्पर्श कर रहा है— सात सौ बिन्दु। आपने कभी ख्याल न किया होगा, लेकिन ख्याल करना मजेदार होगा। कभी बैठ जाएं उघाड़े होकर और किसी को कहें कि आपकी पीठ में पीछे कई जगह सुई चुभाएं। आप बहुत चकित होंगे, कुछ जगह वह सुई चुभायी जाएगी, आपको पता नहीं चलेगा। आपकी पीठ पर ब्लाइंड स्पॉट्स हैं, जहां सुई चुभाई जाएगी, आपको बिल्कुल पता नहीं चलेगा। और आपकी पीठ पर सेंसिटिव स्पॉट्स हैं, जहां सुई जरा-सी चुभायी जाएगी और आपको पता चलेगा।

ऐक्युपंक्चर पांच हजार साल पुरानी चिकित्सा विधि है। वह कहती है— जिन बिन्दुओं पर सुई चुभाने से पता नहीं चलता, वहां आपका ऊर्जा-शरीर स्पर्श नहीं कर रहा है। वे डेड स्पॉट्स हैं। वहां से आपका जो भीतर का तपस-शरीर है वह स्पर्श नहीं कर रहा है, इसलिए वहां पता कैसे चलेगा! पता तो उसका चलता है जो भीतर है। संवेदनशील जगह पर छुआ जाता है, उसका मतलब यह है कि वहां से ऊर्जा शरीर कॉन्टैक्ट में है। वहां से वहां तक चोट पहुंच जाती है।

जब आपको एनेस्थीसिया दे दिया जाता है ऑपरेशन की टेबल पर तो आपके

ऊर्जा शरीर का और इस शरीर का संबंध तोड़ दिया जाता है। जब लोकल एनेस्थीसिया दिया जाता है कि मेरे हाथ को भर एनेस्थीसिया दे दिया गया है कि मेरा हाथ सो जाए, तो सिर्फ मेरे हाथ के जो बिन्दु हैं, जिनसे मेरा तपस–शरीर जुड़ा हुआ है, उनका संबंध टूट जाता है। फिर इस हाथ को काटो–पीटो, मुझे पता नहीं चलता। क्योंकि मुझे तभी पता चल सकता है जब मेरे ऊर्जा–शरीर से संबंध कुछ हो अन्यथा मुझे पता नहीं चलता।

सोते हुए मत मरना

इसलिए बहुत हैरानी की घटना घटती है, और आप भूल ऐसी न करना। कभी–कभी कुछ लोग सोते हुए मर जाते हैं। आप कभी भी सोते हुए मत मरना। सोते में जब कोई मर जाता है तो उसको कई दिन लग जाते हैं यह अनुभव करने में कि मैं मर गया। क्योंकि गहरी नींद में ऊर्जा–शरीर और इस शरीर के संबंध शिथिल हो जाते हैं। अगर कोई गहरी नींद में एकदम से मर जाता है तो उसकी समझ में नहीं आता कि मैं मर गया। क्योंकि समझ में तो तभी आ सकता है, जब इस शरीर से संबंध टूटते हुए अनुभव में आएं। वह अनुभव में नहीं आते तो उसमें पता नहीं चलता कि मैं मर गया।

दफनाना या जलाना क्यों?

यह जो सारी दुनिया में हम शरीर को गड़ाते हैं या जलाते हैं या कुछ करते हैं तत्काल, उसका कुल कारण इतना है, ताकि वह जो ऊर्जा–शरीर है, उसे यह अनुभव में आ जाए कि वह मर गया। इस जगत से उसका संबंध, इस शरीर के साथ इसको नष्ट करता हुआ वह देख ले कि वह शरीर नष्ट हो गया है, जिसको मैं समझता था कि यह मेरा है। यह शरीर को जलाने के लिए मरघट और गड़ाने के लिए कब्रिस्तान, यह सारा इन्तजाम सिर्फ सफाई का इंतजाम नहीं है कि एक आदमी मर गया तो उसको समाप्त करना ही पड़ेगा, नहीं तो सड़ेगा, गलेगा। इस व्यवस्था की गहरे में जो चिन्ता है वह उस आदमी की चेतना को अनुभव कराने की है कि यह शरीर तेरा नहीं है, तेरा नहीं था। तू अब तक इसको अपना समझता रहा

है। अब हम इसे जलाए देते हैं, ताकि तुझे पक्का भरोसा हो जाए।

पिरामिडों में भटकती आत्माएं

अगर हम शरीर को सुरक्षित रख सकें, तो उस चेतना को हो सकता है, ख्याल ही न आए कि वह मर गई है। वह इस शरीर के आसपास भटकती रह सकती है। उसके नए जन्म में बाधा पड़ जाएगी, कठिनाई हो जाएगी। और अगर उसे भटकाना ही हो इस शरीर के आसपास, तो ईजिप्ट में जो ममीज़ बनाई गई हैं, वे इसीलिए बनायी गयी थीं। शरीर को इस तरह से ट्रीट किया जाता था, इस तरह के रासायनिक द्रव्यों से निकाला जाता था कि वह सड़े न– इस आशा में कि किसी दिन पुनर्जीवन, उस सम्राट को फिर से जीवन मिल सकेगा। तो सात, साढ़े सात हजार वर्ष पुराने शरीर भी सुरक्षित पिरामिडों के नीचे पड़े हैं। उस सम्राट को जिसके शरीर को इस तरह रखा जाता था, उसकी पत्नियों को, चाहे वे जीवित ही क्यों न हों, उनको भी उसके साथ दफना दिया जाता था। एक दो नहीं, कभी-कभी सौ-सौ पत्नियां भी होती थीं।

उस सम्राट को जिन-जिन चीजों से प्रेम था, वे सब उसकी ममी के आसपास रख दी जाती थीं, ताकि जब उसका पुनर्जीवन हो तो वह तत्काल पुराने माहौल को पाए- उसकी पत्नियां, उसके कपड़े, उसकी गद्दियां, उसके प्याले, उसकी थालियां, वह सब वहां हो– ताकि तत्काल रीहैबिलिटेट, वह पुनः स्थापित हो जाए अपने नए जीवन में। इस आशा में ममीज़ खड़ी की गयी थीं। और इसमें कुछ आश्चर्य न होगा कि जिनकी ममीज़ रखी हैं, उनका पुनर्जन्म होना बहुत कठिन हो गया है; या न हो पाया हो; या उनकी अनेक की आत्माएं अपने पिरामिडों के आसपास अब भी भटकती हों।

हिन्दुओं के सर्वाधिक गहरे अनुभव

हिन्दुओं ने इस भूमि पर प्राण-ऊर्जा के संबंध में सर्वाधिक गहरे अनुभव किए थे। इसलिए हमने सर्वाधिक तीव्रता से शरीर को नष्ट करने के लिए आग का इन्तजाम किया, गड़ाने का भी नहीं। क्योंकि गड़ाने में भी छह महीने लग

जाएंगे शरीर को गलने में, टूटने में, मिलने में मिट्टी में। उतने छः महीने तक आत्मा को भटकाव हो सकता है। तत्काल जला देने का प्रयोग हमने किया। वह सिर्फ इसीलिए था ताकि इस बीच, इसी क्षण आत्मा को पता चल जाए कि शरीर नष्ट हो गया, मैं मर गया हूं। क्योंकि जब तक यह अनुभव में न आए कि मैं मर गया हूं, तब तक नए जीवन की खोज शुरू नहीं होती। मर गया हूं, तो नए जीवन की खोज पर आत्मा निकल जाती है।

वैज्ञानिक ऐडामैंको की मशीन

यह जो ऐक्युपंक्चर ने सात सौ बिन्दु कहे हैं शरीर में– रूस के एक वैज्ञानिक ऐडामैंको ने अभी एक मशीन बनायी है उस मशीन के भीतर आपको खड़ा कर देते हैं। उस मशीन के चारों तरफ बल्ब लगे होते हैं, हजारों बल्ब लगे होते हैं। आपको मशीन के भीतर खड़ा कर देते हैं। जहां–जहां से आपका प्राण शरीर बह रहा है, वहां–वहां का बल्ब जल जाता है बाहर। सात सौ बल्ब जल जाते हैं हजारों बल्बों में, मशीन के बाहर। वह मशीन, आपकी प्राण ऊर्जा जहां–जहां संवेदनशील है, वहां–वहां बल्ब को जला देती है। तो अब ऐडामैंको की मशीन से प्रत्येक व्यक्ति के संवेदनशील बिन्दुओं का पता चल सकता है।

लेकिन योग ने सात सौ की बात नहीं की, सात चक्रों की बात की है। सात सौ बिन्दुओं की! योग की पकड़ ऐक्युपंक्चर से ज्यादा गहरी है। क्योंकि योग ने अनुभव किया है कि एक–एक बिन्दु परिधि पर है, केन्द्र में नहीं है। सौ बिन्दुओं का एक केन्द्र है। सौ बिन्दु एकच क्र के आसपास निर्मित हैं। फिक्र छोड़ दी, परिधि की। उस केन्द्र को ही स्पर्श कर लिया जाए, ये सौ बिन्दु स्पर्शित हो जाते हैं।

सौ बिन्दुओं का एक केन्द्र

इसलिए सात चक्रों की बात की– प्रत्येक चक्र के आसपास सौ बिन्दु निर्मित होते हैं इस शरीर को छूनेवाले। इसलिए आपके शरीर को समझ लें। उदाहरण के लिए और आसान होगा क्योंकि हमारे अनुभव की बात होती है तो आसान हो जाती है। सेक्स का एक सेंटर है आपके पास, यौन का चक्र। लेकिन उस यौन चक्र के सौ बिन्दु हैं आपके शरीर में। जहां–जहां यौन चक्र का बिन्दु है, वहां–वहां इरॉटिक ज़ोन हो जाते हैं। जैसे आपको कभी ख्याल में भी न होगा कि जब आप किसी के साथ यौन संबंध में रत होते हैं तो आप शरीर के किन्हीं–किन्हीं अंगों को विशेष रूप से छूने लगते हैं। वे इरॉटिक ज़ोन हैं। वे काम–बिन्दु हैं शरीर पर फैले हुए। और कई बिन्दु तो ऐसे हैं कि आपको पता नहीं होगा क्योंकि आपके

ख्याल में नहीं आएंगे लेकिन अलग-अलग संस्कृतियों ने अलग-अलग बिन्दुओं का पता लगा लिया है। अब तो वैज्ञानिकों ने सारे इरॉटिक प्वाइंट्स खोज लिए हैं, शरीर में कहां-कहां हैं। जैसे आपको ख्याल में नहीं होगा, आपके कान के नीचे की जो लम्बाई है, वह इरॉटिक है। वह बहुत संवेदनशील है। स्तन जितने संवेदनशील हैं, उतना ही संवेदनशील कान का हिस्सा है।

बुद्धि के बिन्दु

आपके शरीर में ऐसे बिन्दु हैं जिनके स्पर्श से, जिनके मसाज से आपकी बुद्धि को प्रभावित किया जा सकता है। क्योंकि वे आपके बुद्धि के बिन्दु हैं।

आपके शरीर में ऐसे बिन्दु हैं जिनसे आपके दूसरे चक्रों को प्रभावित किया जा सकता है। समस्त योगासन इन्हीं बिन्दुओं को दबाव डालने के प्रयोग हैं। और अलग-अलग योगासन अलग-अलग चक्र को सक्रिय कर देता है। जहां-जहां दबाव पड़ता है, वहां-वहां सक्रिय कर देता है।

प्राणायामः जीवन शक्ति को खींचना

प्राण-योग, या प्राणायाम वस्तुतः मात्र वायु को भीतर ले जाने और बाहर ले जाने पर निर्भर नहीं है। गहरे में, जो कि साधारणतः ख्याल में नहीं आता कि एक आदमी प्राणायाम सीख रहा है तो वह सोचता है बस ब्रीदिंग-एक्सरसाइज है, वह सिर्फ वायु का कोई अभ्यास कर रहा है।

लेकिन जो जानते हैं, और जानने वाले निश्चित ही बहुत कम हैं, वे जानते हैं कि असली सवाल वायु को बाहर और भीतर ले जाने का नहीं है। असली सवाल वायु के मार्ग से वह जो ऑर्गन एनर्जी के गुच्छे चारों तरफ जीवन में फैले हुए हैं, उनको भीतर ले जाने का है।

अगर ऊर्जा के गुच्छे भीतर जाते हैं तो ही प्राण-योग है, अन्यथा वायु-योग है, प्राण-योग नहीं है। प्राणायाम नहीं है, अगर वे गुच्छे भीतर नहीं जाते। वे गुच्छे भीतर जाते हैं तो ही प्राण-योग है। उन गुच्छों से आयी हुई शक्ति का उपयोग तप में किया जाता है। खुद की शक्ति का, चारों तरफ जीवन की शक्ति का, पौधों की शक्ति का, पदार्थों की शक्ति का प्रयोग किया जाता है।

वृक्ष ऊर्जा लेते व देते हैं

लुकमान के जीवन में उल्लेख है कि एक आदमी को उसने भारत भेजा आयुर्वेद की शिक्षा के लिए और उससे कहा कि तू बबूल के वृक्ष के नीचे सोता हुआ भारत पहुंच। और किसी वृक्ष के नीचे मत सोना– बबूल के वृक्ष के नीचे सोना रोज। वह आदमी जब तक भारत आया, क्षय रोग से पीड़ित हो गया।

कश्मीर पहुंचकर उसने पहले चिकित्सक को कहा कि मैं तो मरा जा रहा हूं। मैं तो सीखने आया था आयुर्वेद, अब सीखना नहीं है, सिर्फ मेरी चिकित्सा कर दें। मैं ठीक हो जाऊं तो अपने घर वापस लौटूं। उस वैद्य ने उससे पूछा, 'तू किसी विशेष वृक्ष के नीचे सोता हुआ तो नहीं आया?'

'मुझे मेरे गुरु ने आज्ञा दी थी कि तू बबूल के वृक्ष के नीचे सोता हुआ जाना।'

वह वैद्य हंसा। उसने कहा-'तू कुछ मत कर। तू अब नीम के वृक्ष के नीचे सोता हुआ वापस लौट जा।'

वह नीम के वृक्ष के नीचे सोता हुआ वापस लौट गया। वह जैसा स्वस्थ चला था, वैसा स्वस्थ लुकमान के पास पहुंच गया।

लुकमान ने पूछा, 'तू जिन्दा लौट आया? तब आयुर्वेद में जरूर कोई राज है।'

उसने कहा, 'लेकिन मैंने कोई चिकित्सा नहीं की।'

उसने कहा-'इसका कोई सवाल नहीं है। क्योंकि मैंने तुझे जिस वृक्ष के नीचे सोते हुए भेजा था, तू जिन्दा लौट नहीं सकता था। तू लौटा कैसे? क्या किसी और वृक्ष के नीचे सोता हुआ लौटा?'

उसने बताया, 'मुझे आज्ञा दी कि अब बबूल भर से बचूं और नीम के नीचे सोता हुआ लौट आऊं।'

तब लुकमान ने कहा- 'वे भी जानते हैं। भारत के लोगों को भी प्राण शक्ति का ज्ञान है।'

दातुन में जीवन एनर्जी

असल में बबूल सक-अप करता है एनर्जी को। आपकी जो एनर्जी है, आपकी जो प्राण ऊर्जा है, उसे बबूल पीता है। बबूल के नीचे भूलकर मत

सोना। और अगर बबूल की दातुन की जाती रही है तो उसका कुल कारण इतना है कि बबूल की दातुन में सर्वाधिक लाइफ-एनर्जी होती है, वह आपके दांतों को फायदा पहुंचा देती है, क्योंकि वह सदा पीता रहता है। जो भी निकलेगा पास से वह उसकी एनर्जी पी लेता है।

नीम आपकी एनर्जी नहीं पीता, बल्कि अपनी एनर्जी आपको दे देता है, अपनी ऊर्जा आप में उड़ेल देता है। लेकिन पीपल के वृक्ष के नीचे भी मत सोना। क्योंकि पीपल का वृक्ष इतनी ज्यादा एनर्जी उड़ेल देता है कि उसकी वजह से आप बीमार पड़ जाएंगे।

पीपल का वृक्ष और बुद्धत्व

पीपल का वृक्ष सर्वाधिक शक्ति देनेवाला वृक्ष है। इसलिए यह हैरानी की बात नहीं है कि उसके नीचे अनेक लोगों को बुद्धत्व मिला। उसका कारण है कि वह सर्वाधिक शक्ति दे पाता है। वह अपने चारों ओर से शक्ति आप पर लुटा देता है। लेकिन साधारण आदमी उतनी शक्ति नहीं झेल पाएगा। सिर्फ पीपल अकेला वृक्ष है सारी पृथ्वी की वनस्पतियों में जो रात में भी और दिन में भी पूरे समय शक्ति दे रहा है। इसलिए उसको देवता कहा जाने लगा। उसका और कोई कारण नहीं है। सिर्फ देवता ही हो सकता है जो ले न और देता ही चला जाए। लेता नहीं, लेता ही नहीं, देता ही चला जाता है।

भोग और तप-

अब महावीर की बात समझें। भोग का सूत्र है– यह शरीर मैं हूं। और **तप का सूत्र है– यह शरीर मैं नहीं हूं।**

लेकिन भोग का सूत्र पॉजिटिव है– यह शरीर मैं हूं। और अगर तप का इतना ही सूत्र है कि यह शरीर मैं नहीं हूं तो तप हार जाएगा, भोग जीत जाएगा। क्योंकि तप का सूत्र निगेटिव है। तप का सूत्र नकारात्मक है कि यह मैं नहीं हूं। नकार में आप खड़े नहीं हो सकते। शून्य में खड़े नहीं हो सकते। खड़े होने के लिए जगह चाहिए पॉजिटिव।

जब आप कहते हैं– यह शरीर मैं 'हूं', तब कुछ पकड़ में आता है। जब

आप कहते हैं– यह शरीर मैं नहीं 'हूं', तब कुछ पकड़ में आता नहीं। इसलिए तप का दूसरा सूत्र है कि **मैं ऊर्जा-शरीर हूं।** यह आधा हुआ, पहला हुआ कि यह शरीर मैं नहीं हूं, तत्काल दूसरा सूत्र इसके पीछे खड़ा होना चाहिए कि मैं ऊर्जा-शरीर हूं, एनर्जी बॉडी हूं। प्राण-शरीर हूं। अगर यह दूसरा सूत्र खड़ा न हो तो आप सोचते रहेंगे कि यह शरीर मैं नहीं हूं और इसी शरीर में जीते रहेंगे। लोग रोज सुबह बैठकर कहते हैं कि यह शरीर मैं नहीं हूं, यह शरीर तो पदार्थ है। और दिनभर उनका व्यवहार, यही शरीर है। इतना काफी नहीं है।

किसी पॉजिटिव विल को, किसी विधायक संकल्प को नकारात्मक संकल्प से नहीं तोड़ा जा सकता। उससे भी ज्यादा विधायक संकल्प चाहिए। यह शरीर मैं नहीं हूं, यह ठीक है। लेकिन आधा ठीक है। मैं प्राण-शरीर हूं, इससे पूरा सत्य बनेगा।

विधायक संकल्प से भरें

तो दो काम करें। इस शरीर से तादात्म्य छोड़ें और प्राण-ऊर्जा के शरीर से तादात्म्य स्थापित करें– बी आइडेंटिफाइड विद इट। मैं यह नहीं हूं और मैं यह हूं, और जोर पॉजिटिव पर रहे। इम्फैसिस इस बात पर रहे कि मैं ऊर्जा-शरीर हूं। ऊर्जा-शरीर हूं, इस पर जोर रहे– तो मैं यह भौतिक शरीर नहीं हूं, यह उसका परिणाम मात्र होगा, छाया मात्र होगा। अगर आपका जोर इस बात पर रहा है कि यह शरीर मैं नहीं हूं तो गलती हो जाएगी। क्योंकि वह मैं जो शरीर हूं वह छाया नहीं बन सकता, वह मूल है। उसे मूल में रखना पड़ेगा।

इसलिए मैंने आपको समझाया, क्योंकि समझाने में पहले यही समझाना जरूरी है कि यह शरीर मैं नहीं हूं। लेकिन जब आप संकल्प करें तो संकल्प पर जोर दूसरे सूत्र पर रहे, अर्थात् दूसरा सूत्र संकल्प में पहला सूत्र रहे और पहला सूत्र संकल्प में दूसरा सूत्र रहे। जोर कि मैं ऊर्जा-शरीर हूं, इसलिए मैंने इतनी ऊर्जा शरीर की आपसे बात की ताकि आपके ख्याल में आ जाए और यह भौतिक शरीर मैं नहीं हूं, यह तप की भूमिका है।

–ओशो, महावीर वाणी, प्रवचन-9